८

तप.

.कर्म . मानवता.

मनुष्य का कर्तव्य.

गुण . भलाई . गुणज्ञ.

संगठन आत्म-विश्वास. मोक्ष

.विनय. नम्रता संसार का स्वरूप ममता

अपमान . कषाय नरक संसार संतोष . क्षमा

मनुष्यलोक कुमित्र प्रमादत्याग क्रोध. वैर. वैरत्याग

मित्र के गुण-दोष. ईर्ष्या . कलह से हानि . तृष्णा-विजय

तृष्णा . अपरिग्रह . निद्रा . स्वप्न . सोने का समय. भय

कर्मबंध के कारण . भोजन की शुद्धि . अभयदाता

.भोजन की मात्रा . हास्य . विद्वान

शिक्षा . शिक्षा-ग्रहण . निन्दा निषेध

विद्या . विद्या के पात्र . मूर्ख . मूर्खता . ज्ञान

मूर्खता के उदाहरण व्रत. शील . सभ्यता

घृणा. शोक. आंसू योगियों के चमत्कार

कवि-प्रशंसा योग. स्थविर

रिवाज भयभीत

पुस्तकों के

.कवि-प्रशंसा

.स्वाध्याय

संयोजक

विवेक

काल

साधु

संगति

सेवा

स्त्री के दोष.

.विवाह. पुनर्विवाह.

कन्यादान. असत्य की निंदा

.चोरी. चोरी का त्याग. ईमानदार

सत्य वचन. सच्चे व्यक्ति

.ईश्वर . भक्त.

पुस्तकालय

.पूजा . देव . भक्ति

कषाय काय

.सत्य धर्म

ईश्वर.

दया . दयालु.

अहिंसा की महिमा. असत्य.

अहिंसा . अहिंसा के फल

पाप-निर्णय . अहिंसा

सत्य के प्रकार.

.कलहा स्त्री

रुकता

EXPRESS PRIVATE LIMITED (Domestic & International Couriers)

भाग ८

वक्तृत्व-कला के बीज

श्री धनमुनि "प्रथम"

[सर्वाधिकार सुरक्षित—प्रबन्ध संपादक के लिए]

वक्तृत्वकला के बीज, भाग ८

समन्वय-प्रकाशन

प्रबंध संपादक

मोतीलाल पारख

प्रकाशक

मोतीलाल पारख
श्यामसुखा हाउस,
ढढों का चौक, बीकानेर (राजस्थान)

प्रथम संस्करण

वि० सं० २०३१ ज्येष्ठ
मई १९७४
२१०० प्रतियां

मुद्रक

श्रीचन्द सुराना 'सरस' के लिए
श्री विष्णु प्रिंटिंग प्रेस, आगरा

मूल्य : छह रुपये पचास पैसे

10.00

उन जिज्ञासुओं को,

जिनकी उर्वर-मनोभूमि में

ये बीज

अंकुरित

पुष्पित

फलित हो

अपना विराट्रूप प्राप्त कर सकें !

प्रकाशकीय

पूर्वकाल में अनेक पूंजीपति हुए और आज के जमाने में भी अनेक धनाढ्य विद्यमान हैं, किन्तु नीतिवाक्यों को जीवन में उतार कर धन का यथार्थ उपयोग करने वाले विरले ही धनीमानी हैं। पिछले जमाने के लोग कहा करते थे कि लक्ष्मी का तात बनना सहल है, परन्तु पति बनना कठिन है। श्रीमंत तो दोनों ही हैं किन्तु निरुपयोगी प्रतिपालन भौतिक जगत में शोभास्पद नहीं लगता। उसमें भी महज परमार्थ के लिए जो विवेकी मनस्वी पुरुष-सिंह अपने अर्थ का सदुपयोग यशःकामना के बिना घरेलू कार्यों को गौण कर करते हैं उनकी यशोगाथा जीवन में स्वयं निखार ले आती है। मुझे इस अति दुरूह प्रकाशन कार्य में ऐसे सुज्ञ महानुभावों का कामधेनु की ज्यों सहयोग प्राप्त हुआ है। सामयिक अर्थ की डिमांड को ध्यान में रखते हुए यथासमय गुप्तदान, बिना याचना के मिला है। उनके सामयिक सत्सहयोग की कीमत शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं की जा सकती। उनकी पावन-प्रेरणा हमारे लिए एक आलोक-स्तम्भ तुल्य बनी। वस्तुतः छुपायी गयी चन्दन की महक कभी भी छुप नहीं सकती। वह तो यशःसौरभ फैलाती हुई सुषुप्त-स्मृतियों को जागृत कर देती है। निस्संदेह ऐसे सुयोग्य तिरोहित दानशील पुरुषों को जनता के समक्ष प्रकाश में लाना मैं अपना महत्वपूर्ण कर्तव्य समझता हूँ।

—मोतीलाल पारख

मंगल–संदेश

मनुष्य विभिन्न शक्तियों का स्रोत है। नहीं, वह अनन्तशक्तियों का स्रोत है।

पर, जिन-जिन शक्तियों को अभिव्यक्त होने का समय और साधन मिल पाता है वही हमारे सामने विकसित रूप से प्रकट होती हैं, शेष अनभिव्यक्त रूप में अपना काम करती रहती हैं।

संग्राहक शक्ति भी उन्हीं में से एक है, जो अन्वेषण-प्रधान है और दूसरों के लिए बहुत उपयोगी बन जाती है।

मक्खन का आस्वादन करना एक बात है, पर उसे दही में से मथकर निकालकर संग्रहीत करना एक विशिष्ट शक्ति है।

मुनि श्री धनराजजी (सिरसा) में यह शक्ति अच्छी विकसित हुई है। शुरू से ही उनकी यह धुन रही है, आदत रही है, वे बराबर किसी न किसी रूप में खोज करते रहते हैं और फिर उसको संग्रहीत कर एक आकार दे देते हैं। वह साहित्य बन जाता है, जन-जन की खुराक बन जाता है।

'वक्तृत्वकला के बीज'' एक ऐसी ही कृति हमारे समक्ष प्रस्तुत है जो मुनि धनराजजी की संग्राहकशक्ति का एक विशिष्ट उदाहरण है। उसमें प्राचीन, अर्वाचीन अनेक ग्रन्थों का मन्थन है, अनेक भाषाओं का प्रयोग है। मूल उद्धरण के साथ हिन्दी अनुवाद देकर भी और सरसता उसमें लाई गई है। बड़ा सुन्दर प्रयास है। अपनी वक्तृत्वकला का विकास चाहनेवाले वक्ता के लिए बहुत उपयोगी है यह ग्रन्थ, जो अनेक भागों में विभक्त है। मेरा विश्वास है—यह प्रयत्न बहुजन हिताय—बहुजन सुखाय सिद्ध होगा।

चूरू

११ सितम्बर १९७२

—आचार्य तुलसी

प्राक्कथन

मानव-जीवन में वाचा की उपलब्धि एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। हमारे प्राचीन आचार्यों की दृष्टि में वाचा ही सरस्वती का अधिष्ठान है, **वाचा सरस्वती भिषग्**[1]—वाचा ज्ञान की अधिष्ठात्री होने से स्वयं सरस्वती रूप है, और समाज के विकृत आचार-विचाररूप रोगों को दूर करने के कारण यह कुशल वैद्य भी है।

अन्तर के भावों को एक दूसरे तक पहुँचाने का एक बहुत बड़ा माध्यम वाचा ही है। यदि मानव के पास वाचा न होती तो, उसकी क्या दशा होती? क्या वह भी मूकपशुओं की तरह भीतर-ही-भीतर घुटकर समाप्त नहीं हो जाता? मनुष्य, जो गूंगा होता है, वह अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए कितने हाथ-पैर मारता है, कितना छटपटाता है फिर भी अपना सही आशय कहां समझा पाता है दूसरों को?

बोलना वाचा का एक गुण है, किन्तु बोलना एक अलग चीज है, और वक्ता होना वस्तुतः एक अलग चीज है। बोलने को हर कोई बोलता है, पर वह कोई कला नहीं है, किन्तु वक्तृत्व एक कला है। वक्ता साधारण से विषय को भी कितने सुन्दर और मनोहारी रूप से प्रस्तुत करता है कि श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। वक्ता के बोल श्रोता के हृदय में ऐसे उतर जाते हैं कि वह उन्हें जीवन भर नहीं भूलता।

कर्मयोगी श्रीकृष्ण, भगवान् महावीर, तथागत बुद्ध, व्यास और भद्रबाहु आदि भारतीय प्रवचन-परम्परा के ऐसे महान प्रवक्ता थे, जिनकी

---

१ यजुर्वेद १९।१२

वाणी का नाद आज भी हजारों-लाखों लोगों के हृदयो को आप्यायित कर रहा है। महाकाल की तूफानी हवाओं में भी उनकी वाणी की दिव्य ज्योति न बुझी है और न बुझेगी।

हर कोई वाचा का धारक, वाचा का स्वामी नहीं बन सकता। वाचा का स्वामी ही वाग्मी या वक्ता कहलाता है। वक्ता होने के लिए ज्ञान एवं अनुभव का आयाम बहुत ही विस्तृत होना चाहिए। विशाल अध्ययन, मनन-चिंतन एवं अनुभव का परिपाक वाणी को तेजस्वी एवं चिरस्थायी बनाता है। बिना अध्ययन और विषय को व्यापक जानकारी के भाषण केवल भषण (भोंकना) मात्र रह जाता है, वक्ता कितना ही चीखे-चिल्लाये, उछले-कूदे ; यदि प्रस्तावित विषय पर उसका सक्षम अधिकार नहीं है, तो वह सभा में हास्यास्पद हो जाता है, उसके व्यक्तित्व की गरिमा लुप्त हो जातो है। इसलिए बहुत प्राचीनयुग में एक ऋषि ने कहा था—**वक्ता शतसहस्रेषु**', अर्थात् लाखों में कोई एक वक्ता होता है।

शतावधानी मुनिश्री धनराजजी जैनजगत के यशस्वी प्रवक्ता है। उनका प्रवचन, वस्तुतः प्रवचन होता है। श्रोताओं को अपने प्रस्तावित विषय पर केन्द्रित एवं मन्त्र-मुग्ध कर देना उनका सहज कर्म है। और यह उनका वक्तृत्व—एक बहुत बड़े व्यापक एवं गम्भीर अध्ययन पर आधारित है। उनका संस्कृत-प्राकृत आदि प्राचीन भाषाओं का ज्ञान विस्तृत है, साथ ही तलस्पर्शी भी ! मालूम होता है, उन्होंने पांडित्य को केवल छुआ भर नहीं है, किन्तु समग्रशक्ति के साथ उसे गहराई से अधिग्रहण किया है। उनको प्रस्तुत पुस्तक **'वक्तृत्वकला के बीज'** में यह स्पष्ट परिलक्षित होता है।

प्रस्तुत कृति में जैन आगम, बौद्धवाङ्मय, वेदों से लेकर उपनिषद्

ब्राह्मण, पुराण, स्मृति आदि वैदिक साहित्य तथा लोककथानक, कहावतें, रूपक, ऐतिहासिक घटनाएँ, ज्ञान-विज्ञान की उपयोगी चर्चाएँ—इस प्रकार शृंखलाबद्धरूप में संकलित हैं कि किसी भी विषय पर हम बहुत कुछ विचार-सामग्री प्राप्त कर सकते हैं। सचमुच वक्तृत्वकला के अगणित बीज इसमें सन्निहित हैं। सूक्तियों का तो एक प्रकार से यह रत्नाकार ही है। अंग्रेजी साहित्य व अन्य धर्मग्रंथों के उद्धरण भी काफी महत्वपूर्ण हैं। कुछ प्रसंग और स्थल तो ऐसे हैं, जो केवल सूक्ति और सुभाषित ही नहीं है,उनमें विषय की तलस्पर्शी गहराई भी है और उसपर से कोई भी अध्येता अपने ज्ञान के आयाम को और अधिक व्यापक बना सकता है। लगता है जैसे मुनिश्री जी वाङ्मय के रूप में विराट् पुरुष हो गए हैं। जहाँ पर भी दृष्टि पड़ती है, कोई-न-कोई वचन ऐसा मिल ही जाता है, जो हृदय को छू जाता है और यदि प्रवक्ता प्रसंगतः अपने भाषण में उपयोग करे, तो अवश्य ही श्रोताओं के मस्तक झूम उठेंगे।

प्रश्न हो सकता है—'वक्तृत्वकला के बीज' में मुनिश्री का अपना क्या है? यह एक संग्रह है और संग्रह केवल पुरानी निधि होती है; परन्तु मैं कहूँगा—कि फूलों की माला का निर्माता माली जब विभिन्न जाति एवं विभिन्न रंगों के मोहक पुष्पों की माला बनाता है तो उसमें उसका अपना क्या है? बिखरे फूल है, माला नहीं। माला का अपना एक अलग ही विलक्षण सौन्दर्य है। रंग-बिरंगे फूलों का उपयुक्त चुनाव करना और उनका कलात्मक रूप में संयोजन करना—यही तो मालाकार का काम है, जो स्वयं में एक विलक्षण एवं विशिष्ट कलाकर्म है। मुनिश्री जी वक्तृत्वकला के बीज में ऐसे ही विलक्षण मालाकार हैं। विषयों का उपयुक्त चयन एवं तत्सम्बन्धित सूक्तियों आदि का संकलन इतना शानदार हुआ है कि इस प्रकार का संकलन अन्यत्र इस रूप में नहीं देखा गया।

एक बात और—श्री चन्दनमुनिजी की संस्कृत-प्राकृत रचनाओं ने मुझे यथावसर काफी प्रभावित किया है। मैं उनकी विद्वत्ता का प्रशंसक रहा हूँ। श्री धनमुनि जी उनके बड़े भाई है—जब यह मुझे ज्ञात हुआ तो मेरे हर्ष की सीमाओं का और भी अधिक विस्तार हो गया। अब कैसे कहूँ कि इन दोनों में कौन बड़ा है और कौन छोटा ? अच्छा यही होगा कि एक को दूसरे से उपमित कर दूँ। उनकी बहुश्रुतता एवं इनकी संग्रह-कुशलता से मेरा मन मुग्ध हो गया है।

मैं मुनिश्री जी, और उनकी इस महत्वपूर्णकृति का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ। विभिन्न भागों में प्रकाशित होनेवाली इस विराट् कृति से प्रवचनकार, लेखक एवं स्वाध्यायप्रेमीजन मुनि श्री के प्रति ऋणी रहेंगे। वे जब भी चाहेंगे, वक्तृत्व के बीज में से उन्हें कुछ मिलेगा ही, वे रिक्तहस्त नहीं रहेंगे—ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रवक्तृ-समाज—मुनिश्रीजी का एतदर्थ आभारी है और आभारी रहेगा।

जैन भवन
आश्विन शुक्ला-३
आगरा।

—उपाध्याय अमरमुनि

सम्पादकीय

वक्तृत्वगुण एक कला है, और वह बहुत बड़ी साधना की अपेक्षा करता है। आगम का ज्ञान, लोकव्यवहार का ज्ञान, लोकमानस का ज्ञान और समय एवं परिस्थितियों का ज्ञान तथा इन सबके साथ निस्पृहता, निर्भयता, स्वर की मधुरता, ओजस्विता आदि गुणों की साधना एवं विकास से ही वक्तृत्वकला का विकास हो सकता है, और ऐसे वक्ता वस्तुतः हजारों लाखों में कोई एकाध ही मिलते हैं।

तेरापंथ के अधिशास्ता युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी में वक्तृत्वकला के ये विशिष्ट गुण चमत्कारी ढंग से विकसित हुए हैं। उनकी वाणी का जादू श्रोताओं के मन-मस्तिष्क को आन्दोलित कर देता है। भारतवर्ष की सुदीर्घ पदयात्राओं के मध्य लाखों नर-नारियों ने उनकी ओजस्विनी वाणी सुनी है और उनके मधुर प्रभाव को जीवन में अनुभव किया है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक मुनिश्री धनराजजी भी वास्तव में वक्तृत्व-कला के महान गुणों के धनी एक कुशल प्रवक्ता संत है। वे कवि भी हैं, गायक भी हैं और तेरापंथ शासन में सर्वप्रथम अवधानकार भी है; इन सबके साथ-साथ बहुत बड़े विद्वान् तो हैं ही। उनके प्रवचन जहाँ भी होते हैं, श्रोताओं की अपार भीड़ उमड़ आती है। आपके विहार करने के बाद भी श्रोता आपको याद करते रहते हैं।

आपकी भावना है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी वक्तृत्वकला का विकास करे और उसका सदुपयोग करे, अतः जनसमाज के लाभार्थ आपने वक्तृत्व के योग्य विभिन्न सामग्रियों का यह विशाल संग्रह प्रस्तुत किया है।

बहुत समय से जनता की, विद्वानों की और वक्तृत्वकला के अभ्यासियों की माँग थी कि इस दुर्लभ सामग्री का जनहिताय प्रकाशन किया जाय तो बहुत लोगों को लाभ मिलेगा। जनता की भावना के अनुसार हमने मुनिश्री की इस सामग्री को धारना प्रारंभ किया। इस कार्य को सम्पन्न करने में श्री डूंगरगढ़, मोमासर, भादरा, हिसार, टोहाना, उकलाना, कैथल, हाँसी, भिवानी, तोसाम, ऊमरा, सिसाय, जमालपुर, सिरसा और भटिंडा आदि के विद्यार्थियों एवं युवकों ने अथक परिश्रम किया है। फलस्वरूप लगभग सौ कापियों में यह सामग्री संकलित हुई है। हम इस विशाल संग्रह को विभिन्न भागों में प्रकाशित करने का संकल्प लेकर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

परमश्रद्धेय आचार्य प्रवर ने पुस्तक के लिए अपना मंगल संदेश देकर इस प्रयत्न को प्रोत्साहित किया— उनके प्रति मैं हृदय की असीम श्रद्धा व्यक्त करता हूँ। तथा पुस्तक की महत्ता और उपयोगिता के अनुसार ही इसकी भूमिका लिखी है जैनसमाज के बहुश्रुत विद्वान् तटस्थ विचारक उपाध्याय श्री अमरमुनि जी ने। उनके इस अनुग्रह का मैं हृदय से आभारी हूँ।

इसके प्रकाशन में जिन महानुभावों में बिना यशःकामना के जो सहयोग दिया है उनकी इस अनुकरणीय उदारता के लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं। इसके प्रकाशन एवं प्रूफ संशोधन-मुद्रण आदि की समस्त व्यवस्था 'संजय-साहित्य-संगम' के संचालक श्री श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' ने की है—उनके प्रति भी हम हृदय से कृतज्ञताज्ञापित करते हैं। आशा है कि यह पुस्तक जन-जन के लिए, वक्ताओं और लेखकों के लिए एक संदर्भग्रंथ (बिब्लोग्राफी) का काम देगी और युग-युग तक इसका लाभ मिलता रहेगा।....

आत्म निवेदन

'मनुष्य की प्रकृति का बदलना अत्यन्त कठिन है'—यह सूक्ति मेरे लिए सवा सोलह आना ठीक साबित हुई। बचपन में जब मैं कलकत्ता—श्री जैनश्वेताम्बर तेरापंथी-विद्यालय में पढ़ता था, जहाँ तक याद है, मुझे जलपान के लिए प्रायः प्रति-दिन एक आना मिलता था। प्रकृति में संग्रह करने की भावना अधिक थी, अतः मैं खर्च करके भी उसमें से कुछ न कुछ बचा ही लेता था। इस प्रकार मेरे पास कई रुपये इकट्ठे हो गये थे और मैं उनको एक डिब्बी में रखा करता था।

विक्रम संवत् १९७९ में अचानक माताजी की मृत्यु होने से विरक्त होकर हम (पिता श्रीं केवलचन्द जी, मैं, छोटी बहन दीपांजी और छोटे भाई चन्दनमल जी) परमकृपालु श्री कालुगणीजी के पास दीक्षित हो गए। यद्यपि दीक्षित होकर रुपये-पैसों का संग्रह छोड़ दिया, फिर भी संग्रहवृत्ति नहीं छूट सकी। वह धनसंग्रह से हटकर ज्ञानसंग्रह की ओर झुक गई। श्री कालुगणी के चरणों में हम अनेक बालक मुनि आगम-व्याकरण-काव्य-कोष आदि पढ़ रहे थे। लेकिन मेरी प्रकृति इस प्रकार की बन गई थी कि जो भी दोहा-छन्द-श्लोक-ढाल-व्याख्यान-कथा आदि सुनने या पढ़ने में अच्छे लगते, मैं तत्काल उन्हें लिख लेता या संसार-पक्षीय पिताजी से लिखवा लेता। फलस्वरूप उपरोक्त सामग्री का काफी अच्छा संग्रह हो गया। उसे देखकर अनेक मुनि विनोद की भाषा में कह दिया करते थे कि "धन्नू तो न्यारा में जाने की [अलग विहार करने की] तैयारी कर रहा है।" उत्तर में मैं कहा करता—क्या आप गारंटी दे सकते हैं कि इतने (१० या १५) साल तक आचार्य श्री हमें अपने साथ ही रखेंगे? क्या पता, कल ही अलग विहार करने का फर-

मान करदें ! व्याख्यानादि का संग्रह होगा तो धर्मोपदेश या धर्म-प्रचार करने में सफलता मिलेगी ।

समय-समय पर उपरोक्त साथी मुनियों का 'हास्य-विनोद चल ही रहा था कि वि० सं० १९८६ में श्रीकालुगणी ने अचानक ही श्रीकेवलमुनि को अग्रगण्य बनाकर रतननगर (थेलासर) चातुर्मास करने का हुक्म दे दिया । हम दोनों भाई (मैं और चन्दन मुनि) उनके साथ थे । व्याख्यान आदि का किया हुआ संग्रह उस चातुर्मास में बहुत काम आया एवं भविष्य के लिए उत्तमोत्तम ज्ञानसंग्रह करने की भावना बलवती बनी । हम कुछ वर्ष तक पिताजी के साथ विचरते रहे ! उनके दिवंगत होने के पश्चात् दोनों भाई अग्रगण्य के रूप में पृथक्-पृथक् विहार करने लगे ।

विशेष प्रेरणा—एक बार मैंने 'वक्ता बनो' नाम की पुस्तक पढ़ी । उसमें वक्ता बनने के विषय में खासी अच्छी बातें बताई हुई थीं । पढ़ते-पढ़ते यह पंक्ति दृष्टिगोचर हुई कि "कोई भी ग्रन्थ या शास्त्र पढ़ो, उसमें जो भी बात अपने काम की लगे, उसे तत्काल लिख लो ।" इस पंक्ति ने मेरी संग्रह करने की प्रवृत्ति को पूर्वापेक्षया अत्यधिक तेज बना दिया । मुझे कोई भी नई युक्ति, सूक्ति या कहानी मिलती, उसे तुरन्त लिख लेता । फिर जो उनमें विशेष उपयोगी लगतीं, उसे औपदेशिक भजन, स्तवन या व्याख्यान के रूप में गूंथ लेता । इस प्रवृत्ति के कारण मेरे पास अनेक भाषाओं में निबद्ध स्वरचित सैकड़ों भजन और सैकड़ों व्याख्यान इकट्ठे हो गए । फिर जैन-कथासाहित्य एव तात्त्विक साहित्य की और रुचि बढी । फलस्वरूप दोनों ही विषयों पर अनेक पुस्तकों की रचना हुई । उनमें छोटी-बड़ी लगभग २० पुस्तकें तो प्रकाश में आ चुकीं, शेष ३०-३२ अप्रकाशित ही हैं ।

एक बार संगृहीत-सामग्री के विषय में यह सुझाव आया कि यदि प्राचीन संग्रह को व्यवस्थित करके एक ग्रन्थ का रूप दे दिया जाए, तो यह उत्कृष्ट उपयोगी चीज बन जाए । मैंने इस सुझाव को स्वीकार किया और अपने प्राचीन-संग्रह को व्यवस्थित करने में जुट गया । लेकिन

पुराने संग्रह में कौन-सी सूक्ति, श्लोक या हेतु किस ग्रन्थ या शास्त्र के हैं अथवा किस कवि, वक्ता या लेखक के हैं—यह प्रायः लिखा हुआ नहीं था। अतः ग्रन्थों या शास्त्रों आदि की साक्षियाँ प्राप्त करने के लिए—इन आठ-नौ वर्षों में वेद, उपनिषद्, इतिहास, स्मृति, पुराण, कुरान, बाइबिल, जैनशास्त्र, बौद्धशास्त्र, नीतिशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, शकुनशास्त्र, दर्शनशास्त्र, संगीतशास्त्र तथा अनेक हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती, मराठी एवं पंजाबी सूक्तिसंग्रहों का ध्यानपूर्वक यथासम्भव अध्ययन किया। उससे काफी नया संग्रह बना और प्राचीन संग्रह को साक्षी सम्पन्न बनाने में सहायता मिली। फिर भी खेद है कि अनेक सूक्तियां एवं श्लोक आदि बिना साक्षी के ही रह गए। प्रयत्न करने पर भी उनकी साक्षियां नहीं मिल सकीं। जिन-जिन की साक्षियां मिली हैं, उन-उनके आगे वे लगा दी गई हैं। जिनकी साक्षियां उपलब्ध नहीं हो सकीं, उनके आगे स्थान रिक्त छोड़ दिया गया है। कई जगह प्राचीन-संग्रह के आधार पर केवल महाभारत, वाल्मीकिरामायण, योग-शास्त्र आदि महान् ग्रन्थों के नाममात्र लगाए हैं, अस्तु !

इस ग्रन्थ के संकलन में किसी भी मत या सम्प्रदाय विशेष का खण्डन-मण्डन करने की दृष्टि नहीं है, केवल यही दिखलाने का प्रयत्न किया गया है कि कौन क्या कहता है या क्या मानता है ? यद्यपि विश्व के विभिन्न देशनिवासी मनीषियों के मतों का संकलन होने से ग्रन्थ में भाषा की एकरूपता नहीं रह सकी है। कहीं प्राकृत, संस्कृत, पारसी, उर्दू एवं अंग्रेजी भाषा है तो कहीं हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, पंजाबी और बंगाली भाषा के प्रयोग हैं, फिर भी कठिन भाषाओं के श्लोक, वाक्य आदि का अर्थ हिन्दी भाषा में कर दिया गया है। दूसरे प्रकार से भी इस ग्रन्थ में भाषा की विविधता है। कई ग्रन्थों, कवियों, लेखकों एवं विचारकों ने अपने सिद्धान्त निरवद्यभाषा में व्यक्त किए हैं तो कई साफ-साफ सावद्यभाषा में ही बोले हैं। मुझे जिस रूप में जिसके जो विचार मिले हैं, उन्हें मैंने उसी रूप में अंकित किया है लेकिन मेरा अनुमोदन केवल निरवद्य-सिद्धान्तों के साथ है।

ग्रन्थ की सर्वोपयोगिता—इस ग्रन्थ में उच्चस्तरीय विद्वानों के लिए जहाँ **जैन-बौद्ध** आगमों के गम्भीर पद्य हैं, वेदों, उपनिषदों के अद्भुत मंत्र हैं, स्मृति एवं नीति के हृदयग्राही श्लोक हैं, वहाँ सर्वसाधारण के लिए सीधी-सादी भाषा के दोहे, छन्द, सूक्तियां, लोकोक्तियां, हेतु, दृष्टान्त एवं छोटी-छोटी कहानियाँ भी हैं। अतः यह ग्रंथ निःसंदेह हर एक व्यक्ति के लिए उपयोगी सिद्ध होगा—ऐसी मेरी मान्यता है। वक्ता, कवि और लेखक इस ग्रन्थ से विशेष लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि इसके सहारे वे अपने भाषण, काव्य और लेख को ठोस, सजीव, एवं हृदयग्राही बना सकेंगे एव अद्भुत विचारों का विचित्र चित्रण करके उनमें निखार ला सकेंगे, अस्तु !

ग्रंथ का नामकरण—इस ग्रन्थ का नाम 'वक्तृत्वकला के बीज' रखा गया है। वक्तृत्वकला की उपज के निमित्त यहाँ केवल बीज इकट्ठे किए गए है। बीजों का वपन किसलिए, कैसे, कब और कहां करना—यह वप्ता [बीज बोनेवालों] की भावना एवं बुद्धिमत्ता पर निर्भर करेगा। फिर भी मेरी मनोकामना तो यही है कि वप्ता परमात्मपद-प्राप्तिरूप फलों के लिए शास्त्रोक्तविधि से अच्छे अवसर पर उत्तम क्षेत्रों में इन बीजों का वपन करेंगे।

यहां मैं इस बात को भी कहे बिना नहीं रह सकता कि जिन ग्रन्थों, लेखों, समाचार पत्रों एवं व्यक्तियों से इस ग्रन्थ के संकलन में सहयोग मिला है—वे सभी सहायकरूप से मेरे लिए चिरस्मरणीय रहेंगे।

यह ग्रन्थ कई भागों में विभक्त है एवं उनमें सैकड़ों विषयों का संकलन है। उक्त संग्रह बालोतरा मर्यादा-महोत्सव के समय मैंने आचार्यश्री तुलसी को भेंट किया। उन्होंने देखकर बहुत प्रसन्नता व्यक्त की एवं फरमाया कि इसमें छोटी-छोटी कहानियां एवं घटनाएँ भी लगा देनी चाहिये ताकि विशेष उपयोगी बन जाए। आचार्यश्री का आदेश स्वीकार करके इसे संक्षिप्त कहानियाँ तथा घटनाओं से सम्पन्न किया गया।

मुनि श्री चन्दनमलजी, डूंगरमलजी, नथमलजी, नगराजजी, मधुकर जी, राकेशजी, रूपचन्दजी आदि अनेक साधु एवं साध्वियों ने भी इस ग्रन्थ को विशेष-उपयोगी माना। बीदासर महोत्सव पर कई संतों का यह अनुरोध रहा कि इस संग्रह को अवश्य धरा दिया जाए।

सर्व प्रथम वि० सं० २०२३ में श्री डूंगरगढ़ के श्रावकों ने इसे धारना शुरू किया। फिर थली, हरियाणा एवं पंजाब के अनेक ग्रामों-नगरों के उत्साही युवकों ने तीन वर्षों के अथक परिश्रम से धारकर इसे प्रकाशन के योग्य बनाया।

मुझे दृढ़ विश्वास है कि पाठकगण इसके अध्ययन, चिन्तन एवं मनन से अपने बुद्धि वैभव को क्रमशः बढ़ाते जायेंगे—

वि० सं० २०२७ मृगसरवदि ७ —धनमुनि 'प्रथम'
मंगलवार, रामामंडी (पंजाब)

आठवां भाग

वक्तृत्वकला के बीज

अनुक्रमणिका

पहला कोष्ठक पृष्ठ १ से ७४

१. काल, २. जैनसिद्धान्तानुसार काल के भेद, ३. पौराणिक-कालगणना-पद्धति, ४. सुषम-दुषमकाल के लक्षण, ५. दुर्भिक्ष-सुभिक्ष के लक्षण, ६. कलि-काल के कौतुक, ७. कलिकाल से प्रभावित भारत की स्थिति, ८. कलिकाल के प्रभाव से वस्तुओं के मूल्य में उत्तरोत्तर वृद्धि, ९. कलिकाल के प्रभाव में नहीं आनेवाले, १०. भविष्य की सूचनाएं, ११. स्वरों का रहस्य एवं उनके आधार पर भविष्य की सूचनाएँ, १२. समय, १३. समय की कीमत, १४. समय का सदुपयोग, १५. समयानुसार काम, १६. आज का काम कल पर मत छोड़ो, १७. कल का काम आज ही करलो ! १८. थोड़ी-सी देर से नुकसान, १९. गया वक्त वापिस नहीं आता, २०. अवसर, २१ अवसर चूकने के बाद, २२. परिस्थिति, २३. स्वभाव, २४. वस्तुओं का स्वभाव, २५. स्वभाव का परिवर्तन कठिन, २६. स्वभाव न छोड़ने वाले, २७. स्वाभाविकता नहीं छिपती, २८. प्रकृति, २९. प्रकृति नहीं बदलती, ३०. आदत, ३१. कुदरत।

दूसरा कोष्ठक पृष्ठ ७५ से १५२

१. उद्यम, २. उद्यम के कार्य-सिद्धि, ३. उद्यम की प्रेरणा, ४. उद्यमी, ५. उद्यम से प्रकृति का परिवर्तन, ६. पुरुषार्थ, ७. श्रम, ८. श्रम की कमाई, ९. परिश्रम की व्यर्थता, १०. विश्राम, ११. सफलता, १२. असफलता में धैर्य, १३. सावधानी और असावधानी, १४. उत्साह, १५. उत्साहहीनता, १६. साहस, १७. हिम्मत, १८. हिम्मतहार मत बनो ! १९. अभ्यास, २०. अभ्यास का महत्व, २१. राम-कृष्ण परमहंस का अद्भुत अभ्यास, २२. कारण, २३. काम-कर्म, २४. काम का महत्व, २५. अच्छा काम, २६. करने योग्य काम, २७. न करने योग्य काम, २८. व्यर्थ काम, २९. निकम्मा-बेकार,

३०. विचारपूर्वक काम, ३१. अपना-पराया काम, ३२. यथाशक्ति काम, ३३. अतिकाम, ३४. अतिपरिचय अपमान का हेतु, ३५. उल्टा काम, ३६. मनचाहा काम, ३७. हाथ कमाया काम, ३८. दो-दो काम नहीं होते, ३९. एक पंथ दो काज, ४०. काम को अधूरा मत रखो, ४१, कार्य-सिद्धि, ४२. कार्य की असिद्धि, ४३. कर्तव्य. ४४. विशेष कर्तव्य, ४५. व्यवहार, ४६. लोक व्यवहार, ४७. लोकप्रियता ।

तीसरा कोष्ठक पृष्ठ १५३-२३५

१. कर्म, २. स्वकृत-कर्म ही सुख-दुख के दाता, ३. कर्मानुसार फल, ४. कर्मों का अवश्य भोग, ५. कर्म, कर्ता के पीछे-पीछे, ६. कर्मों की विचित्र गति, ७. कर्म बन्ध, ८. कर्म क्षय के बाद, ९. विधिभाग्य, १०. भाग्यानुसार लाभ, ११. विधि की विचित्रता, १२. सद्भाग्य-पुण्योदय, १३. भाग्यवान, १४. दुर्भाग्य--पापोदय, १५. भाग्यहीन, १६. भवितव्यता होनहार-नियति, १८. भवितव्यता के दृष्टान्त, १९. आनन्द, २०. आनन्द की स्थिति, २१. सुख, २२. वास्तविक सुख, २३. सांसारिक सुख, २४. सुख में धर्म की विस्मृति, २५. दुःख के बाद सुख, २६. सुख के भेद, २७. सुख का श्रोत, २८. सुखी, २९. सुख-दुःख, ३०. मन के पीछे सुख-दुःख, ३१. सुख-दुःख का जोड़ा, ३२. दुःख, ३३. दुःख की अधिकता, ३४. महान दुःख, ३५. दुःख में दुःख, ३६. दुःख के भेद, ३७- दुःख का महत्व, ३८. आपत्ति, ३९. दुःख नाश के उपाय, ४०. दुःखी, ४१. पर-दुःख से दुःखी, ४२. कठिनाई, ४३. दुविधा, ४४. कमी, ४५. तितिक्षा—सहनशीलता, ४६. संयोग के साथ वियोग, ४७. सहयोग, ४८. सहारा—सहानुभूति ।

चौथा कोष्ठक पृष्ठ २३६ से ३१८

१. गृहस्थ, २. गृहस्थ को शिक्षा, ३. प्रशंसनीय गृहस्थाश्रम, ४. निन्दनीय गृहस्थाश्रम, ५ अतिथि सत्कार. ६. अतिथि के लक्षण, ७. मेहमान-पाहुना, ८. घर, ९. स्थान, १०. स्थानभ्रष्ट, ११. स्थानत्याग, १२. भारत के कुछ दर्शनीय स्थान, १३. कला के लिए प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान, १४. जन्मभूमि—स्वदेश, १५. देश-भक्त, १६. देश विशेष के दोष-गुण, १७. स्वपक्ष, १८. स्वजन-ज्ञाति,

१९. माता, २०. पिता, २१. माता-पिता, २२. पुत्र के प्रति माता-पिता का कर्तव्य, २३. सन्तान, २४. अधिक सन्तान कष्ट का कारण, २५. अधिक सन्तान वाले मां-बाप, २६. पुत्र, २७. माता-पिता के अनुरूप पुत्र, २८. पुण्यों से पुत्र प्राप्ति, २९. पुत्र के बिना, ३०. पुत्रों के लिए अनर्थ, ३१. सुपुत्र, ३२. कुपुत्र, ३३. शत्रु के रूप में पुत्र, ३४. सुपुत्र-कुपुत्र, ३५. पुत्रों के प्रकार, ३६ पुत्री—कन्या, ३७. पुत्री की विदाई, ३८. पुत्री के योग्य-अयोग्य वर, ३९. जामाता-जमाई, ४०. ससुराल, ४१. बहू, ४२. विनीत बहू की सेवा और अमर सोहाग, ४३. भ्राता-भाई ।

चार कोष्ठकों में १६८ विषय ।

परिशिष्ट : ३१९—३२८

प्रयुक्त ग्रन्थों व व्यक्तियों के नाम की सूची

वक्तृत्वकला के बीज

[भाग ८]

अकारादि क्रम-विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
अच्छा काम	११२
अतिकाम	१२६
अतिथि के लक्षण	२४६
अतिथि-सत्कार	२४४
अतिपरिचय अपमान का हेतु	१३२
अधिक सन्तान कष्ट का कारण	२८६
अधिक सन्तान वाले मां-बाप	२८७
अपना-पराया काम	१२५
अभ्यास	१०२
अभ्यास का महत्त्व	१०४
अवसर	५०
अवसर चूकने के बाद	५१
असफलता के धैर्य	६२
आज का काम कल पर मत छोड़ो	४३
आदत	७१
आनन्द	१६३
आनन्द की स्थिति	१६५
आपत्ति	२२३
उत्साह	६५
उत्साहहीनता	६६
उद्यम	७५
उद्यम से कार्यसिद्धि	७७
उद्यम की प्रेरणा	७६
उद्यमी	८०
उद्यम से प्रकृति का परिवर्तन	८२
उल्टा काम	१३४
एक पंथ दो काज	१४०
कठिनाई	२२८
कमी	२३१
करने योग्य काम	११३
कर्त्तव्य	१४५
कर्म	१५३
कर्मकर्त्ता के पीछे-पीछे	१६१
कर्मक्षय के बाद	१६६
कर्मबन्ध	१६५
कर्मानुसार फल	१५७
कर्मों का अवश्य भोग	१५६
कर्मों की विचित्र गति	१६२

कल का काम आज ही करलो ! ४६
कला के लिए प्रसिद्ध
० ऐतिहासिक स्थान २६२
कलिकाल के कौतुक १५
कलिकाल के प्रभाव में
० न आने वाले २६
कलिकाल के प्रभाव से
वस्तुओं के मूल्य में
० उत्तरोत्तर वृद्धि २२
कलिकाल से प्रभावित भारत
० की स्थिति १९
काम—कर्म १०९
काम का महत्व १११
काम को अधूरा मत रखो १४१
कारण १०८
कार्यसिद्धि १४२
कार्य की असिद्धि १४३
काल १
कुदरत ७३
कुपुत्र ३००
गया वक्त वापस नहीं आता ४९
गृहस्थ २३६
गृहस्थ को शिक्षा २३९
घर २४९
जन्मभूमि स्वदेश २६६
जामाता-जामाई ३१०
जैन सिद्धान्तानुसार काल के
० भेद ३
तितिक्षा-सहनशीलता २३२
थोड़ी-सी देरी से नुकसान ४७
दुःख २१६
दुःख का महत्व २२२
दुःख की अधिकता २१७
दुःख के बाद सुख २०४
दुःख के भेद २२०
दुःखनाश के उपाय २२५
दुःख में दुःख २१९
दुःखी २२६
दुर्भाग्य—पापोदय १८२
दुर्भिक्ष-सुभिक्ष के लक्षण १२
दुविधा २२९
देशभक्त २६८
देशविशेष के दोष-गुण २७०
दो-दो काम नहीं होते १३७
न करने योग्य काम ११५
निकम्मा-बेकार १२१
निन्दनीय गृहस्थाश्रम २४२
परदुःख से दुःखी २२७
परिस्थिति ५७
परिश्रम की व्यर्थता ८९
पिता २८१
पुण्यों से पुत्र-प्राप्ति २९४
पुत्र २८९
पुत्र के प्रति माता-पिता का
० कर्तव्य २९१
पुत्र के बिना २९५

पुत्री-कन्या	३०६	लोकप्रियता	१५१
पुत्री की विदाई	३०७	लोकव्यवहार	१४९
पुत्री के योग्य अयोग्य वर	३०९	वस्तुओं का स्वभाव	६०
पुत्रों के प्रकार	३०४	वास्तविक सुख	२००
पुत्रों के लिए अनर्थ	२९६	विचारपूर्वक काम	१२४
पुरुषार्थ	८३	विधि की विचित्रता	१७४
पौराणिक-कालगणना-पद्धति	८	विधि-भाग्य	१७०
प्रकृति	६७,	विनीत बहू की सेवा और	
प्रकृति नहीं बदलती	६९	० अमर सुहाग	३१५
प्रशंसनीय गृहस्थाश्रम	२४१		
बहू	३१२	विशेष कर्तव्य	१४६
भवितव्यता के दृष्टान्त	१९०	विश्राम	९०
भवितव्यता—होनहार	१८७	व्यर्थ काम	११८
भविष्य की सूचनायें	२७	व्यवहार	१४८
भाग्यवान	१८०	शत्रु के रूप में पुत्र	३०२
भाग्यहीन	१८५	श्रम	८५
भाग्यानुसार लाभ	१७३	श्रम की कमाई	८७
भारत के कुछ दर्शनीय स्थान	२५७	संतान	२८४
भ्राता-भाई	३१७	संयोग	२८०
मन के पीछे सुख-दुःख	२७०	संयोग के साथ वियोग	२३३
मनचाहा काम	१३५	सद्भाग्य-पुण्योदय	१७६
महान् दुःख	२१८	सफलता	९१
माता	२७७	समय	४४
माता-पिता	२८२	समय का सदुपयोग	३७
माता-पिता के अनुरूप पुत्र	२९१	समय की कीमत	३५
मेहमान-पाहुना	२२२	समयानुसार काम	४१
यथाशक्ति काम	१२७	ससुराल	३११
रामकृष्ण परमहंस का अद्भुत		सहयोग	२३४
० अभ्यास	१०७	सहारा-सहानुभूति	२३५

सांसारिक सुख	२०१	स्थानभ्रष्ट	२५३
सावधानी और असावधानी	६३	स्वकृत कर्म ही सुख-दुःख	
साहस	६७	० के दाता	१५५
सुख	१६७	स्वजन-ज्ञाति	२७३
सुख का स्रोत	२०८	स्वपक्ष	२७२
सुख के भेद	२०६	स्वभाव	२७१
सुख-दुःख	२१२	स्वभाव का परिवर्तन कठिन	६३
सुख-दुःख का जोड़ा	२१४	स्वभाव न छोड़ने वाले	६५
सुख में धर्म की विस्मृति	२०३	स्वरों का रहस्य एवं उनके	
सुखी	२०६	० आधार पर भविष्य की	
सुपुत्र	२६८	० सूचनाएँ	२६
सुपुत्र-कुपुत्र	३०३	स्वाभाविकता नहीं छिपती	६६
सुषम-दुषम काल के लक्षण	१०	हाथ कमाया काम	३६
स्थान	२५१	हिम्मत	६६
स्थान-त्याग	२५५	हिम्मतहार मत बनो	१००

पहला कोष्ठक

१ काल

१ कालो भूमिमसृजत, काले तपति सूर्यः।
काले ह विश्वा भूतानि, काले चक्षुर्विपश्यति ।।

—**अथर्ववेद १९ | ६ | ५३ | ६**

काल ने पृथ्वी की सृष्टि की, काल के आधार पर सूर्य तपता है, काल के आधार पर ही समस्त भूत-समूह रहे हुए हैं तथा काल के आधार पर ही आंखें देख सकती हैं।

२ स्त्री-पुरुष की उचित अवस्था के संयोग से ही गर्भधारण, समय पूरा होने पर ही बालक का जन्म, बचपन में खेलने की इच्छा, जवानी में भोग की अभिलाषा एवं बुढ़ापे में अंग-शिथिलता का होना। समय आने पर ही बोए बीज का प्रकट होकर वृक्ष-पत्र-पुष्प-फलादि के रूप में परिणत होना। अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी में क्रमशः हानि-वृद्धि का होना, समय आने पर ही सर्दी, गर्मी एवं बरसात का होना—इन सब बातों से सिद्ध होता है कि काल ही सब क्रियाओं का कर्त्ता है। —**कालवादी**

३ कालः सृजति भूतानि, कालः संहरते प्रजाः।
कालः सुप्तेषु जागर्ति, कालोऽयं दुरतिक्रमः ।।

—**महाभारत आदिपर्व २४८**

काल ही प्राणियों को उत्पन्न करता है और काल ही प्रजा का संहार करता है। सारी दुनियां के सो जाने पर भी काल जागृत रहता है अतः यह काल दुरतिक्रम है।

४ वत्तणालक्खणो कालो

—**उत्तराध्ययन** २८ | १०

जो द्रव्य जीव-अजीव पर बरतता है एवं उनकी नवीन-पुरातन आदि अवस्थाओं के बदलने में निमित्त रूप से सहायता करता है वह **काल** है ।

५ कालो ह सर्वस्येश्वरः ।

—**अथर्ववेद** १९ | ५३ | ८

काल ही समग्र विश्व का ईश्वर है ।

६ कालेनोदेति सूर्यः, काले निविशते पुनः ।

—**अथर्ववेद** १९ | ५४ | १

काल से ही सूर्य उदित एवं अस्त होता है ।

७ काले लोकाः प्रतिष्ठिताः ।

—**अथर्ववेद** १९ | ५४ | ४

काल में ही समग्र लोक (प्राणी अथवा विश्व) प्रतिष्ठित है ।

२ जैन-सिद्धांतानुसार काल के भेद

१ समए २ आवलिया ३ आणापाणू ४ थोवे ५ लवे ६ मुहुत्ते ७ अहोरत्ते ८ पक्खे ९ मासे १० उऊ ११ अयणे १२ संवच्छरे १३ जुगे १४ वाससए १५ वाससहस्से १६ वाससयसहस्से १७ पुव्वंगे १८ पुव्वे १९ तुडियंगे २० तुडिए २१ अडडंगे २२ अडडे २३ अववंगे २४ अववे २५ हुहुयंगे २६ हुहुए २७ उप्पलंगे २८ उप्पले २९ पउमंगे ३० पउमे ३१ णलिणंगे ३२ णलिणे ३३ अत्थनिउरंगे ३४ अत्थनिउरे ३५ अउयंगे ३६ अउए ३७ नउयंगे ३८ नउए ३९ पउयंगे ४० पउए ४१ चूलियंगे ४२ चूलिया ४३ सीसपहेलियंगे ४४ सीसपहेलिया ४५ पलिओवमे ४६ सागरोवमे ४७ ओसप्पिणी ४८ उस्सप्पिणी ४९ पोग्गलपरियट्टे ५० अतीतद्धा ५१ अणागयद्धा ५२ सव्वद्धा ।

—अनुयोगद्वार कालानुपूर्वी अधिकार

(क) **विवेचन**—काल के समय—आवलिका आदि अनेक भेद हैं। हम जो आंखें मींचकर खोलते हैं, उसको **उन्मेष** कहते हैं। उन्मेष के असंख्यातवें भाग का नाम **समय** है अर्थात् जिसके दो भाग न हो सकें, काल के ऐसे सबसे छोटे अंश को समय कहते हैं। जैसे—

१	अविभाज्य काल	=	एक समय
२	असंख्य समय	=	एक आवलिका
	२५६ आवलिका	=	एक क्षुल्लक भव (सबसे छोटी आयु)

३ २२२३ $=\frac{१२२९}{३७७३}$ आवलिका = एक उच्छ्वास या निश्वास

४४४६ = २४५८/३७७३ आवलिका

या साधिक १७ क्षुल्लक भव
या एक श्वासोच्छ्वास } = एक प्राण

४	७ प्राण	=	एक स्तोक
५	७ स्तोक	=	एक लव
६	३८॥ लव	=	एक घड़ी (२४ मिनट)
	७७ लव	=	दो घड़ी अथवा
		=	६५, ५३६ क्षुल्लक भव या
		=	१,६७,७७,२१६ आवलिका अथवा
		=	३७७३ प्राण | अथवा
		=	एक मुहूर्त्त (सामायिक-काल)
७	३० मुहूर्त्त	=	एक दिन-रात (अहोरात्र)
८	१५ दिन-रात	=	एक पक्ष
९	२ पक्ष	=	एक मास
१०	२ मास	=	एक ऋतु
११	३ ऋतु	=	एक अयन
१२	२ अयन	=	एक वर्ष
१३	५ वर्ष	=	एक युग
१४	२० युग	=	१०० वर्ष
१५	१००० वर्ष		
१६	१००००० वर्ष		
१७	८४००००० वर्ष	=	१ पूर्वांग
१८	,, पूर्वांग	=	१ पूर्व
१९	,, पूर्व	=	१ त्रुटितांग
२०	,, त्रुटितांग	=	१ त्रुटित
२१	,, त्रुटित	=	१ अडडांग

२२	८४०००००	अडडांग	=	१ अडड
२३	,,	अडड	=	१ अववांग
२४	,,	अववांग	=	१ अवव
२५	,,	अवव	=	१ हूहूकांग
२६	,,	हूहूकांग	=	१ हूहूक
२७	,,	हूहूक	=	१ उत्पलांग
२८	,,	उत्पलांग	=	१ उत्पल
२९	,,	उत्पल	=	१ पद्मांग
३०	,,	पद्मांग	=	१ पद्म
३१	,,	पद्म	=	१ नलिनांग
३२	,,	नलिनांग	=	१ नलिन
३३	,,	नलिन	=	१ अर्थनिपुरांग
३४	,,	अर्थनिपुरांग	=	१ अर्थनिपुर
३५	,,	अर्थनिपुर	=	१ अयुतांग
३६	,,	अयुतांग	=	१ अयुत
३७	,,	अयुत	=	१ प्रयुतांग
३८	,,	प्रयुतांग	=	१ प्रयुत
३९	,,	प्रयुत	=	१ नयुतांग
४०	,,	नयुतांग	=	१ नयुत
४१	,,	नयुत	=	१ चूलिकांग
४२	,,	चूलिकांग	=	१ चूलिका
४३	,,	चूलिका	=	१ शीर्षप्रहेलिकांग
४४	,,	शीर्षप्रहेलिकांग	=	१ शीर्षप्रहेलिका
४५		असंख्य वर्ष	=	१ पल्योपम
४६	१०	कोड़ाकोड़ पल्योपम	=	१ सागर
४७	१०	कोड़ाकोड़ सागर	=	एक अवसर्पिणी
४८	१०	,, ,,	=	एक उत्सर्पिणी
	२०	,, ,,	=	एक कालचक्र

४९	अनन्त कालचक्र	=	एक पुद्गल-परावर्तन
५०	अनन्त पुद्गल-परावर्तन	=	अतीताद्धा (भूतकाल)
५१	,, ,, ,,	=	अनागताद्धा (भविष्यत्काल)
५२	अतीत-अनागत-वर्तमानाद्धा	=	सर्वाद्धा (सर्वकाल)

(ख) **गणित संख्यात**:—जैन सिद्धान्त के अनुसार पांच वर्षों का एक युग एवं ८४ लाख वर्षों का पूर्वांग होता है। ८४ लाख को ८४ लाख से गुणने पर एक पूर्व कहलाता है। (एक पूर्व में ७० लाख ५६ हजार करोड़ वर्ष होते हैं।) ऐसे २७बार गुणने से ५४ अंङ्कों पर १४० बिन्दियाँ आ जातो हैं। माथुरी वाचना के अनुसार संख्या इस प्रकार है—७५८, २६३, २५३, ०७३, ०१०, २४१, १५७, ९७३, ५६९, ९७५, ६९६, ४०६, २१८, ९६६, ८४८, ०८०, १८३, २९६×१० १४० (एक के आगे १४० शून्य) इस संख्या को 'शीर्ष प्रहेलिका' कहते हैं और गणित संख्यात की सीमा भी यही है। वास्तविक दृष्टि से तो 'संख्या' का विषय 'शीर्ष प्रहेलिका' से आगे भी है, किन्तु व्यवहारिक गणित की मर्यादा के बाहर होने के कारण 'शीर्ष प्रहेलिका' को उत्कृष्ट संख्यात काल-मान माना गया है। इससे आगे शास्त्रों में पल्योपम-सागरोपम आदि काल उपमा से समझाया गया है।

(ग) **पल्योपम-सागरोपम**:—जैन शास्त्रों में कहा है कि चार कोस के लम्बे-चोड़े और गहरे एक कुँएँ में युगलों के केशों के (जो भारतीय मनुष्यों के केशों के ४०९६ भाग जितने पतले हैं) असंख्य खण्ड करके उन्हें दबादब भरा जाय और फिर सौ-सौ वर्षों के बाद एक-एक खण्ड निकाला जाय, निकालते-निकालते जब वह कुँआ खाली हो जाय, तब एक पल्योपमकाल होता है (इसमें असंख्य वर्ष लगते हैं)। दस कोड़ाकोड़ (१० करोड़ को १ करोड़ से गुणन) पल्योपम का एक सागरोपम काल होता है। दस कोड़ाकोड़ सागरोपम का एक अवसर्पिणी काल और इतना ही बड़ा उत्सर्पिणी-काल तथा दोनों को मिलाकर बीस कोड़ाकोड़-सागरोपम का एक कालचक्र (यह मात्र भरत-ऐरावत क्षेत्रों में ही होता

है) एवं अनन्त काल चक्रों का एक पुद्गल-परावर्तन होता है, जो अनन्त-काल कहलाता है।

(घ) **काल चक्र**:—जैन शास्त्रों में काल को चक्र-पहिये की उपमा दी गई है। जैसे—पहिये में १२ आरे-लकड़ी के डण्डे होते हैं, वैसे ही कालचक्र के भी बारह आरे माने गये हैं। ६ अवसर्पिणीकाल के और ६ उत्सर्पिणीकाल के। वास्तव में आरे का अर्थ विभाग समझना चाहिए। काल चक्र के १२ विभाग हैं। ६ अवसर्पिणीकाल के एवं ६ उत्सर्पिणीकाल के। अवसर्पिणीकाल का अर्थ है अवनति का समय। इसमें प्राणियों के आयुष्य-बल-धन-सुख आदि क्रमशः घटते हैं। उत्सर्पिणी काल का अर्थ है, उन्नति का समय। इसमें आयुष्य-बल-धन-सुख आदि क्रमशः बढ़ते हैं।

(ङ) ६ आरों के नाम एवं उनका कालमान—

अवसर्पिणी काल	मान	उत्सर्पिणी काल	मान
१ सुषम-सुषम	४ कोड़ाकोड़ सागर	१ दुःषम-दुषम	२१००० वर्ष
२ सुषम	३ कोड़ाकोड़ सागर	२ दुःषम	२१००० वर्ष
३ सुषम-दुःषम	२ कोड़ाकोड़ सागर	३ दुःषम-सुषम	४२००० वर्ष ऊन एक कोड़ा-कोड़ सागर
४ दुःषम-सुषम	४२००० वर्ष ऊन एक कोड़ा-कोड़ सागर	४ सुषम-दुःषम	२ कोड़ाकोड़ सागर
५ दुःषम	२१००० वर्ष	५ सुषम	३ कोड़ाकोड़ सागर
६ दुःषम-दुःषम	२१००० वर्ष	६ सुषम-सुषम	४ कोड़ाकोड़ सागर

—**जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति वक्षारक २**

●

३ पौराणिक-कालगणनापद्धति

पौराणिक-साहित्य में कालगणना पद्धतियाँ प्रमुखतया दो हैं—युगगणनापद्धति और मन्वन्तर-कालगणनापद्धति। जो सत्य-त्रेता-द्वापर-कलि आदि युगों की कल्पना पर अधिष्ठित है; उसे **युगगणनापद्धति** कहते हैं। जो स्वायंभुव, स्वारोचिष आदि चौदह मन्वन्तरों की कल्पना पर अधिष्ठित है, उसे **मन्वन्तर कालगणना-पद्धति** कहते हैं।

(१) **युगगणनापद्धति**—इसके अनुसार ब्रह्मा का एक दिन एक हजार पर्यायों में विभाजित किया गया है, जिनमें से हर एक पर्याय निम्नलिखित चार युगों से बनता है:—

कृतयुग—	१७,२८,०००	वर्ष
त्रेतायुग—	१२,९६,०००	वर्ष
द्वापरयुग—	८,६४,००१	वर्ष
कलियुग—	४,३२,०००	वर्ष
	४३,२०,००१	वर्ष

ब्रह्मा का एक दिन ४३,२०,००१ × १०००
=४,३,२,००,०१,०००

—विष्णुपुराण ३।२।४८

(२) **मन्वन्तर-कालगणनापद्धति**—इसमें चौदह मन्वन्तर माने गये हैं, जिनके अधिपति राजाओं को **मनु** कहा गया है। चौदह मन्वन्तर मिलकर एक **कल्प** बन जाता है। उक्त काल-गणना का हिसाब इस प्रकार है:—

२ त्रुटि	=	½ निमेष
२ आधानिमेष	=	१ निमेष
२५ निमेष	=	१ काष्ठा
३० काष्ठा	=	१ कला
३० कला	=	१ मुहूर्त
३० मुहूर्त	=	१ अहोरात्र
१५ अहोरात्र	=	१ पक्ष
२ पक्ष	=	१ महीना
६ महीने	=	१ अयन
२ अयन	=	१ वर्ष

४३ लाख २० हजार वर्ष=एक पर्याय (महायुग), जिसमें कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलि के प्रत्येकी एक युग समाविष्ट है।

७१ पर्याय	=	१ मन्वन्तर
१४ मन्वन्तर	=	१ कल्प

—भविष्यपुराण, ब्राह्मपुराण २, मार्कण्डेयपुराण ४३, विष्णुपुराण १।३, मत्स्यपुराण १४२, स्कंदपुराण ६।१५४,७।१।१०५, पद्मपुराण सृष्टिखण्ड ३

पौराणिक साहित्य के अनुसार इस समय **वराहकल्प** चल रहा है। उसमें से स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत एवं चाक्षुष नामक छः मन्वन्तर अब तक हो चुके हैं, एवं वर्तमान काल में वैवस्वत-मन्वन्तर शुरू है। इस मन्वन्तर के पश्चात् सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, रौच्य एवं भौत्य नामक सात मन्वन्तर क्रमशः आने वाले हैं।

—प्राचीन चारित्रकोष पृष्ठ ११७०

४ सुषम-दुःषमकाल के लक्षण

१ सत्तहि ठाणेहिं ओगाढं सुसमं जाणेज्जा—तं जहा—
अकाले न वरिसइ, काले वरिसइ,
असाधू ण पुज्जंति, साधू पूज्जंति,
गुरुहि जणो सम्मं पडिवन्नो,
मणोसुहता, वइसुहता।

—**स्थानांग** ७

इन सात बातों से सुषमकाल (समय की श्रेष्ठता) प्रकट होती है—१. असमय पर न बरसना, २. समय पर बरसना, ३. असाधुजनों का महत्व न बढ़ना, ४. साधुजनों का महत्त्व बढ़ना, ५. माता-पिता आदि गुरुजनों के प्रति सद्व्यवहार होना, ६. मन की शुभता, ७. वचन की शुभता।

सत्तहि ठाणेहिं ओगाढं दुस्समं जाणेज्जा-तं जहा—
अकाले वरिसइ, काले ण वरिसइ।
असाधू पुज्जंति, साधू ण पुज्जंति।
गुरुहि जणो मिच्छं पडिवन्नो,
मणोदुहता, वइदुहता।

—**स्थानांग** ७

इन सात बातों से दुःषमकाल (समय की निकृष्टता) प्रकट होती हैं—(१) समय पर न बरसना (२) असमय पर बरसना (३) असाधुजनों का महत्त्व बढ़ना (४) साधुजनों का महत्त्व न बढ़ना (५) माता-पिता आदि गुरुजनों के प्रति असद्व्यवहार होना (६) मन की अशुभता (७) वचन की अशुभता।

२ **वृद्ध कहा करते थे**—अनाज सस्ता एवं सोना महँगा हो, वह जमाना सुख का और अनाज महँगा और सोना सस्ता हो, वह जमाना दुःख का कहलाता है।

एक सेठ कारणवश मकान में रह गया। बाहर से द्वार बंद करके लोग गांव चले गये। मकान में जवाहरात काफी था लेकिन अनाज नहीं था। अतः सेठ मर गया। मरते समय उसने एक कागज पर लिखा—**जवाहर से ज्वार बेहतर** है। तुलसीदास जी ने भी कहा है—

तुलसी तब ही जानियो, राम गरीब निवाज,
मोती-कण महँगा किया, सस्ता किया अनाज।

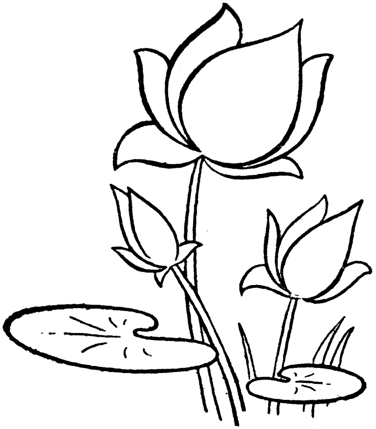

५ दुर्भिक्ष-सुभिक्ष के लक्षण

१ चैत सुदी जो त्रयोदशी, धूल उड़ै दरम्यान।
आगै वर्षा हो नहीं, ऐसा लो तुम जान ॥ १ ॥
वैशाख बदी आठम दिनां, बादल गर्जन होय।
संवत अच्छा जानिये, संशय करो न कोय ॥ २ ॥
शुक्ल पक्ष वैशाख को, तिथि दशमी दिन देख।
बादल हो श्रावण विषै, जल नहीं पडै विशेष ॥ ३ ॥
जेठ बदी मावस दिनां, मेघ-घटा हो जाय।
अनावृष्टि दुर्भिक्ष हो, ऐसा योग बताय ॥ ४ ॥
आषाढ़ बदी जो अष्टमी, बादल ऊगै चंद।
वर्षा अच्छी होयगी, मिटै सभी दुख द्वन्द्व ॥ ५ ॥
काला बादल करबरा, धौला करै सुकाल।
चंदा ऊगा निर्मला, निश्चय पड़ै दुकाल ॥ ६ ॥
पूनम नवमी षाड़ सुदी, निर्मल निशा मयंक।
दुर्भिक्ष निश्चय जानिये, रुलै प्रजा अरु रंक ॥ ७ ॥
श्रावण पहली पंचमी, बरसै करै निहाल।
पवन चलै तौ अति बुरी, पड़ै हलाहल काल ॥ ८ ॥
श्रावणबदी एकादशी, जो नभ वर्षा होय।
संवत अच्छा होयगा, संशय करो न कोय ॥ ६ ॥
श्रावण शुक्ला पंचमी, और छठ को जान।
कुछ वर्षा पश्चिम पवन, तो दुर्भिक्ष पिछान ॥ १० ॥
भादों की दोयज दिनां, जो नहीं दीखै चंद।
धान्य समृद्धि पशु बढ़ैं, प्रजा में हो आनन्द ॥ ११ ॥

सूर्योदय के साथ ही मेघ गर्जना होय।
प्रहर एक या दोय में, अच्छी वर्षा होय ॥ १२ ॥
काले वर्ण का बादला, जिसमें बिजली होय।
उत्तर दिशि में होय तो, वर्षा अच्छी होय ॥ १३ ॥

(भादवासुदी ११ की रात को मेघ गाजे तो टिड्डियों का उपद्रव होता है।)

सातम-आठम क्वार सुदी, जो वर्षा हो जाय।
राज-प्रजा दोनों सुखी, सब संशय मिट जाय ॥ १४ ॥
कार्तिक बदी एकादशी, वर्षा बादल होय।
आषाढ़ मास वर्षा अधिक, संशय करो न कोय ॥ १५ ॥
कार्तिक सुदी एकादशी, वर्षा बादल होय।
चार मास वर्षा अधिक, संशय करो न कोय ॥ १६ ॥
शुक्रवारी बादली, रही शनिश्चर छाय।
वर्षा होवेगी अधिक, ऐसा योग बताय ॥ १७ ॥
माघबदी जो पंचमी, बादल होवै जान।
वर्षा कुछ होवै नहीं, भादों वर्षा जान ॥ १८ ॥
माघबदी जो छठ को, निर्मल हो आकाश।
तो तुम निश्चय जानियो, निपजै नहीं कपास ॥ १९ ॥
माघ सुदी सातम दिने, बादल बिजली होय।
पूर्वोत्तर वायु चलै, संवत अच्छा होय ॥ २० ॥

—**भड्डली कवि**

२ पाँच सनीचर पाँच रवि, पांच मंगल जो होय।
छत्र-टूट धरती पड़े, अन्न महँगो होय ॥ १ ॥

३ रोहण बाजै मृगतपै, गहला खेती क्यानैं खपै।
रोहण तपै मिरगला बाजै, आदरा अण पूछ्या गाजै ॥ २ ॥

४ वाताय कपिला विद्यु-दातपायातिलोहिनी।
पीता वर्षाय विज्ञेया, दुर्भिक्षाय सिता भवेत्।

हरी बिजली से हवा, अति लाल बिजली से धूप, पीली बिजली से वृष्टि और सफेद बिजली से दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिये।

५ **वृष्टि के लक्षण—**

प्रथम तपै परभात, रक्त वरणो रातम्बर।
पिंड वहै परसेव, अधिक मसिवरणो अंबर।
उदक ऊकलै कूप, निपट चिड़िया रज न्हावै।
वृषभ चढ़े विषधरु, कीडियां इंडा सावै।
तरुमूले तमरा लवै, चपल जीव होवै घणां।
जिनहर्ष कहै चातक चवै, ऐ लक्खण विरखातणां।

६ कलिकाल के कौतुक

१ सीदन्ति सन्तो विलसन्त्यसन्तः,
पुत्रा म्रियन्ते जनकश्चिरायुः ।
परेषु मैत्री स्वजनेषु वैरं,
पश्यन्तु लोकाः कलिकौतुकानि ।

—सुभाषितरत्न भाण्डागार पृष्ठ १०३

संत दुःख पा रहे हैं, असंत मौज उड़ा रहे हैं, पुत्र मर रहे हैं। पिता चिरायु हो रहे हैं तथा दुश्मन से मित्रता हो रही है एवं स्वजनों से वैर बढ़ रहा है। लोगों ! देखो—ये सब कलिकाल के कौतुक हैं।

२ सती ने साड़ी नहिं ने वेश्या पटकूल पहेरे।
० कसाई ने घेर कुशल ने धर्मी ने घेर धाड़ा।
० हलाल मां हरकत ने हराम मां बरकत।
० रोटी त्यां चोटी नहिं चोटी त्यां रोटी नहिं,
० दूध ने दीकरा साथे क्यां होय ?

—गुजराती कहावतें

३ जिसकी दानत पाक, उसके घर में खाक,
जिसकी दानत खोटी, उसके घर में रोटी,

—हिन्दी कहावत

४ न देवे देवत्वं कपट-पटवस्तापसजना
जनो मिथ्यावादी विरलतरवृष्टिर्जलधरः ।
प्रसङ्गो नीचानामवनिपतयो दुष्टमनसो,
जना भ्रष्टा नष्टा अहह ! कलिकालः प्रभवति ॥

आश्चर्य है कि इस कलिकाल के प्रभाव से देवों में देवत्व नहीं रहा, साधु-सन्यासी कपट-क्रिया में निपुण हो गये, लोग असत्यभाषी हो

गये, मेघ थोड़े बरसने लगे, नीचों का संपर्क बढ़ गया, राजा बुरी नीति वाले हो गये एवं लोग प्रायः नष्ट-भ्रष्ट हो गये ।

धर्मः प्रव्रजितस्तपः प्रचलितं सत्यं च दूरे गतं,
पृथ्वी मन्दफला नराश्च कुटिला लोभं गतास्तापसाः ।
राजानोऽर्थपरा न रक्षणपराः पुत्राः पितुर्द्वेषिणः,
साधुः सीदति दुर्जनः प्रभवति प्राप्ते कलौ दुर्युगे ।।

इस बुरे कलियुग में धर्म ने तो सन्यास ले लिया, तप विचलित हो गया, सत्य दूर चला गया, पृथ्वी मन्दफल वाली हो गई, मनुष्य कुटिल हो गये एवं उनके मन में दुष्टता भर गई, राजा प्रजा के रक्षक न होकर धन के लोभी बन गये और पुत्र पिता के द्वेषी बन गये । आज सज्जन दुःख पा रहे हैं और दुर्जन शक्तिशाली बन रहे हैं ।

निर्वीर्या पृथिवी निरौषधिरसा नीचा महत्त्वं गताः,
भूपाला निजधर्म-कर्म रहिता विप्राः कुमार्गेरताः ।
भार्या भर्तृविरोधिनी पररता पुत्राः पितुर्द्वेषिणो,
हा ! कष्टं खलु वर्तते कलियुगे धन्या नरा ये मृताः ।।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ १०३

पृथ्वी शक्तिहीन हो गई, औषधियां रस हीन हो गई, नीच उच्चपदों पर आसीन हो गये । राजा धर्म-कर्म से रहित हो गये, ब्राह्मण कुमार्ग में लीन हो गये, स्त्रियाँ पति की विरोधिनी एवं पर-पुरुषों में अनुरक्त हो गई तथा पुत्र पिता के द्वेषी हो गये ! हा ! निश्चय ही कलियुग में चारों ओर कष्ट ही कष्ट है । अतः जो मर गये वे मनुष्य धन्य हैं ।

५ पंडित सोई सो गाल बजावा । **—रामचरितमानस**

६ **कृत्ये च रेणुका कृत्या, त्रेतायां जानकी तथा ।**
द्वापरे द्रौपदी कृत्या, कलौ कृत्या गृहे-गृहे ।

कृतयुग में **रेणुका** कृत्या थी, त्रेतायुग में **जानकी** एवं द्वापर में **द्रौपदी** कृत्या थी लेकिन कलियुग में घर-घर में कृत्या नाच रही हैं ।

७ काल मरे तो आज मर, आज मरे तो अब।
इन्धन पै राशन भयो, फेर मरेगो कब।

—राजस्थानी दोहा

८ सांप गयां नें लीसोटा रह्या,
राजमहल गया ने रोड़ा रह्या,
ठाकोर गया ने ठग रह्या,

—गुजराती कहावतें

९ जोगी था सो रम गया, आसण रही भभूत।

—राजस्थानी कहावत

१० मठों-मन्दिरों में धरम, स्कूलों में है ज्ञान,
प्रेम घरों में रह गया, कैसे हो कल्यान।

—दोहा-संदोह

११ पहले घी से सब्जी बनती थी, अब सब्जी से घी बनता है।
पहले नारी जनती थी, अब सारा आलम जनता है।

—हिन्दी पद्य

१२ माइट इज राइट —अंग्रेजी कहावत

जिसकी लाठी उसकी भैंस।

१३ टोपी की इज्जत पगड़ी गायब। —हिन्दी कहावत

१४ तात कहा मात कहा भ्रात ओ भतीज कहा,
कहा न्याती गोती मित्र तिरिया फुन सागी है।
राजा कहा राव कहा खान-सुलतान कहा,
सेठ साहूकार कहा कैते बड़भागी है।
मित्र कामदार कहा कैते नामदार कहा,
जहां तहां देखूं वहां लोभ अनुरागी है।
भनै ऋद्धलाल कलिकाल को प्रभाव देखो,
लें-ले की भूले बात, लाव-लाव लागी है।

१५ अब धर्म रह्यो है बातां में :

घर में तो जाला भभकै है, पण माला राखै हाथां में।
अब धर्म रह्यो है बातां में।

खोटो है काम कसाई रो, बै कियां कालजो काटै है।
बो करुण नजारो देखां जद, म्हारी तो छाती फाटै है।
बै दया दिखावै कइयां पर, बस दानवीरता दाँतां में।
अब धर्म रह्यो है बातां में ॥१॥

पढ़-लिख कर कई वकील बण्या, दुनिया ने न्याय बतावै है।
बै गिटै जीवती माक्खी नें, जद नोट सामने आवै है।
रखवालो कोई बण्यो नहीं, अब साच रुलै है लातां में।
अब धर्म रह्यो है बातां में ॥२॥

पुड़िया में माटी भर देवै, मोत्यां री भस्म बतावै है।
जन-सेवक वैद्य कहावै है बै कैसो फरज निभावै है।
आँख्यां नें मीच अन्धेरो कर, बै मिनख चांदणी रातां में।
अब धर्म रह्यो है बातां में ॥३॥

—मुनि बच्छराज जी

७ कलिकाल से प्रभावित भारत की स्थिति

(तर्ज—इचकदाना-इचकदाना)

फिरा जमाना-फिरा जमाना, लोगो ! ध्यान लगाना ।
क्या था भारत ? क्या है अब ? और क्या होगा न ठिकाना ।।ध्रुव।।

छात्र विदेशी भारत आते, ऊँची डिग्री पाने[१] ।
आज विदेशों भारत जाता, डिग्री को अपनाने ।।
हो ! पता नहीं भारतियों के दिल, कैसा भूत भराना ।।फिरा।।१

सादा खाना सादा पीना, रहन-सहन भी सादा ।
महासचिव कुटिया में रहते, खर्च न करते ज्यादा[२] ।।
हो ! आज मन्त्रि-लोगों का खर्चा, जाता नहीं बखाना ।।फिरा।।२

एक पतिव्रत-प्रण से होता, आगे ब्याह सुहाना ।
आज तलाकों की हलचल का बड़ा हुआ पैमाना ।।
हो ! ब्रह्मचर्य की घट रही महिमा, कहना सोलह आना ।।फिरा।।३

भ्रातृ-प्रेम अद्भुत था, भाई जो कोई रहने आते ।
ईंटें और रुपइया देकर, अपने तुल्य बनाते[3] ।।
हो ! लूट-लूटकर आज, भाइयों को चाहते हैं खाना ।।फिरा।।४

बाजारों में ढेर मोतियों के, फिर भी नहीं चोरी[४] ।
नहीं छोड़ते आज भारती, जूतों की भी जोड़ी ।।
हो ! सही प्रमाणिकता तो **धनमुनि**, मानो ! हुई रवाना ।।फिरा।।५

—उपदेशसुमनमाला

नोट—टिप्पण अगले पृष्ठ पर देखिए

नोट—टिप्पण अगले पृष्ठ पर देखिए

१ **बौद्धिक क्षेत्र में कमी**—नालन्दा-तक्षशिला-विश्वविद्यालयों में हजारों विदेशी-विद्यार्थी पढ़ने आते थे (आज भारतीय विदेश जा रहे हैं) एक-एक कुलपति के नेतृत्व में ५००-५०० अध्यापक एवं बीस-बीस हजार विद्यार्थी रहा करते थे। नालन्दा का पुस्तकालय जो **बख्त्यार खिलजी** ने जलाया, वह तीन प्रासाद एवं नौ मंजलि का था तथा उसमें ३०० कमरे थे। कहा जाता है कि पुस्तकों से छः मास तक हमाम गर्म किये गये।

२ **सादगी के क्षेत्र में कमी**—चन्द्रगुप्त का महामन्त्री बनकर भी चाणक्य झोंपड़ी में रहता था एवं स्वयं पानी भरता था (आज के मन्त्री क्या करते हैं? चीन का सफीर **फाहियान** उससे मिलने आया था।

मुद्राराक्षस नाटक में चाणक्य की झोंपड़ी का वर्णन इस प्रकार मिलता है—

> **उपलशकलमेतद् भेदकं गोमयानां,**
> **वटुभिरुपहृतानां बर्हिषां स्तोम एषः**
> **सरणमपिसमिद्भिः शुष्कमाणाभिराभि—**
> **र्विनिहितपटलान्तं दृश्यते जीर्णकुड्यम्।**

पुरानी झोंपड़ी, टूटा छप्पर, छाना (कंडे) तोड़ने के लिये पत्थर का एक खंड, जीर्ण भींत के एक कोने पर टंगा हुआ वस्त्र, विद्यार्थियों द्वारा एकत्रित किया हुआ कुश (घास) का गठ्ठा और हवन सी समिधाएं बस यही उसकी सम्पत्ति थी।

३ **भ्रातृ-प्रेम में कमी—**

(क) बम्बई में दो भाई अलग हुए। एक सुपारी के पेड़ (दोनों की जमीन के बीच में था) के लिए विवाद हुआ। कोर्ट में १२ साल तक केस चला, दोनों भाई बर्बाद हो गए। आखिर मजिस्ट्रेट ने उस पेड़ को कटवाकर झगड़ा मिटाया।

(ख) चौटीला (सौराष्ट्र) में दो भाइयों में बँटवारा होते समय एक चक्की के विषय में क्लेश हुआ। आखिर जिद्द करके दोनों भाई चक्की का एक-एक पट लेकर संतुष्ट हुए।

(ग) यतीजी के दो शिष्य थे। गुरु की मृत्यु के बाद सारे सामान के दो हिस्से किये गये। एक हस्तलिखित रघुवंश की प्रति के लिये विवाद

बढ़ा। अन्त में काटकर प्रति के दो भाग किये जाने लगे। आधी प्रति कट गई—इतने में एक समझदार व्यक्ति ने आकर उसकी रक्षा की। वह प्रति इस समय तेरापंथ-साधुसंघ के पास विद्यमान हैं।

४ नैतिकता में कमी—

(क) एतद्देशप्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं-स्वं चरित्रं शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्व मानवाः।

इस भारत में जन्मे हुए ब्राह्मणों से पृथ्वी के सभी मनुष्य अपने-अपने चरित्र-संबंधी शिक्षा लें।

(ख) न मे स्तेनो जनपदे, न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान्, न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥

—छान्दोग्योपनिषद् ५

उद्दालकादि ऋषियों से अश्वकेतु राजा ने कहा—मेरे देश में कोई चोर नहीं है, कृपण एवं मद्य पीने वाला नहीं है, अयज्ञकर्त्ता और अविद्वान् नहीं है तथा कोई स्वैरी (व्यभिचारी) नहीं है फिर स्वैरिणी (कुलटा) स्त्री तो हो ही कैसे सकती है।

(ग) सुलतान **शाहरुख** का एलची अब्दुलरज्जाक ईस्वी सन् १४४३ में कालीकट आया था, वह अपनी किताब **मुतालुल** सादीन में लिखता है—माल हर किस्म का बगैर मालिक के बाजारों में पड़ा रहता है लेकिन उसके कोई हाथ नहीं लगाता। (आज भारतीय धर्मस्थानों में जूते भी नही छोड़ते।

(घ) मैंने किसी हिन्दू को झूठ बोलते नहीं देखा।

—एरियन यूनानी

८ कलिकाल के प्रभाव से वस्तुओं के मूल्य में उत्तरोत्तर वृद्धि

१ ईसा से ५०० वर्ष पूर्व गाय दस पैसों में, बछड़ा एक आने में, बैल डेढ़ आने में और भैंस दो आने में मिलती थी।[1] उस समय पैसे का एक मन दूध था। दो-सौ वर्ष बाद चंद्रगुप्त के समय पैसे का दो सेर घी और २५ सेर दूध था। ईस्वीसन् की शुरुआत में १२ आने में गाय और १ रुपया सवा सात आने में बैल मिलते थे। विक्रमादित्य के समय ८० पैसों में गाय और ५१२ पैसों में बैल प्राप्त होते थे।

—"**धर्म के नाम पर" पुस्तक से**

२ **ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी में वस्तुओं के भाव**—

चावल एक आना मन, तेल आठ आना मन, घी १२ आना मन, दाल एक आना मन, नमक दो पैसे मन, शक्कर दस आना मन, कपड़ा एक आने के पाँच थान और गरीब व्यक्ति की आमदनी छः आना प्रति मास।

—कौटलीय-अर्थशास्त्र के अनुसार

---

१ **९ लाख रुपये की गाय**—तेनमेमिया न्यूयार्क, १२ नवंबर (A. P.) अमेरिका में एक गाय कल १ लाख २२ हजार डालर (करीब ९ लाख रु०) में बिकी, जो कि एक नया रिकार्ड है। इसके पूर्व का रिकार्ड एक लाख ८ हजार डालर था। १९६५ में कनेक्टीकर में एक सांड़ उक्त राशि पर बिका। उक्त गाय तारा-पहाड़ी क्षेत्र की है।

— **नवभारत टाइम्स, १३ नवंबर १९७२**

३ अलाउद्दीन-खिलजी के समय (१४ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में दिल्ली में वस्तुओं के भाव—

गेहूं आठ आना मन, जौ चार आना मन, घी रुपये का ३० सेर, मिसरी एक रुपये की ७॥ सेर।

— इतिहास तिमिरनाशक, खण्ड १ पृष्ठ २६

४ चौदहवीं शताब्दी में मुहम्मद-तुगलक के समय बंगाल में वस्तुओं के भाव—

चावल १॥। आना मन, तिलों का तेल ११॥ आना मन, घी-शक्कर एक रुपया सात आना मन, महीन सूती कपड़ा दो रुपयों का ९७ गज।

—इब्नबतूता-लिखित "भारत यात्रा" पुस्तक के अनुसार

५ सोलहवीं शताब्दी में अकबर के समय खाद्य पदार्थों के भाव—
बढ़िया चावल ११ आना मन, दालें १३॥ आना मन, नमक आठ आना मन, घी ५ रुपये मन, चीनी ५ रुपये ११ आने मन।

६ सत्रहवीं शताब्दी में ओरंगजेब के समय बंगाल का सूबेदार "शाईस्ताखाँ" था, उसके प्रयत्न से खाद्य पदार्थों के भाव मुर्शिदाबाद में इस प्रकार थे—

बाँस-फुल चावल एक रुपये के एक मन दस सेर, करकशाली चावल एक रुपये के सात मन बीस सेर, बढ़िया तेल रुपये का २१ सेर, साधारण तेल २४ सेर, घी रुपये का साढे दस सेर।

— 'आइने अकबरी' के आधार से

७ अंग्रेजी राज्य के प्रारम्भ में (ईस्वी सन् १८१०) वस्तुओं के भाव—
मजदूर छोटा दो आना दैनिक, मजदूर बड़ा ३ आना दैनिक, बढ़ई ६ रुपया मासिक, जुलाहा ३ रुपया मासिक, बढ़िया चावल १।) रु० मन घटिया चावल १) रुपया मन, दाल १।।) रुपया मन, आटा २) रुपया मन, सरसों का तेल २ आना सेर, घी सात आना सेर, मोटी धोती ६ आना प्रति धोती।

८ ईस्वी सन् १६३६ एवं १६४३ के समय दिल्ली में वस्तुओं के भाव :

वस्तु	**सन् १६३६**	**सन् १६४३**
चावल	४।।।) रुपया मन	३४) रुपया मन
दाल	५) ,,	२५) ,,
शक्कर	१२।।) ,,	४०) ,,
तैल	२०) ,,	५०) ,,
घी	५०) ,,	१४०) ,,
दूध	५) ,,	२५) ,,
पत्थर का कोयला	६ आना मन	२) ,,
लकड़ी का कोयला	१।।) रु० मन	४) ,,
मोटा धोती जोड़ा	२) रु० जोड़ा	१२) रु० जोड़ा

—कल्याण, वर्ष २० अंक १ गोअंक पृष्ठ ४३२ से उद्धृत

६ सन् १६६८ तथा सन् १६७३ के समय दिल्ली में खाद्य वस्तुओं के भाव प्रति क्विंटल रुपयों में :—

वस्तु	**१६६८ जून १५**	**१६७३ अक्टूबर १२**
गेहूँ	७०) से ६०) तक	११०) से १२५) तक
चना	७०) से ७२) तक	२०४) से २८०) तक
चावल वासमती	१३५) से १५५) तक	२६०) से ३१०) तक
बाजरा	७२)	१३५)
जौ	५०) से ५४) तक	११२) से ११५) तक
मक्की	६५)	१२४) से १४०) तक
दालें	१००) से १२५) तक	१८५) से २४४) तक
गुड़	१२५) से १६०) तक	२२५) से २३०) तक
शक्कर	२३५) से २४०) तक	२५०) से २६०) तक
चीनी	३४८) से ३५६) तक	३६०) से ३८५) तक
सरसों	१२८) से १४५) तक	२७०) से ३००) तक
तिल	१४५) से १६५) तक	२६०) से ४१०) तक
बिनोला	६३) से ७५) तक	१४०) से २००) तक

वस्तु	१९६८ जून १५	१९७३ अक्टूबर १२
मूंगफली का तेल	२५०)	१०००)
सरसों का तेल	३२२)	७९९)
तिलों का तेल	२८२)	८७०)
किसमिश	११५०) से १२५०) तक	१२५०) से १५००) तक
बादाम गिरी	३२००)	५९००) से ९०००) तक
पिस्ता	२९५०)	७२००) से ७५००) तक
काजू	१०००) से ११२५) तक	२०००) से २२५०) तक
गोला	५१८) से ५६५) तक	८६०) से ९७०) तक
लोंग	५७००) से ५९००) तक	१४०००) से १४५००) तक
इलायची छोटी	४०००) से ६८००) तक	५५००) से ११०००) तक
दालचीनी	४९००) से ५०००) तक	८८००)
सोठ	५१०) से ५२५) तक	४५०) से ४७५) तक
कालीमिर्च	४१०) से ४४५) तक	६७०) से ७१०) तक
लालमिर्च	१५०) से २३५) तक	४००) से ६००) तक
हल्दी	२७०) से ३३५) तक	४००) से ५५०) तक
जीरा	४५०) से ६००) तक	८००) से ८७५) तक
सोंफ	२२०) से २५०) तक	४५०) से ५२०) तक
धनिया	११०) से १९०) तक	२५०) से ५००) तक
अजवायन	९०) से २०५) तक	१८०) से ३८०) तक
घी	१३००) से १६००) तक	२५००)
दूध	१७५)[१]	२००)[२]

१ नवभारत १६ जून १९६८ २ नवभारत १४ अक्तूबर १९७३

६ कलिकाल के प्रभाव में नही आनेवाले

१ विभिन्नाः पन्थानः प्रतिपदमनल्पाश्च मतिनः,
कुयुक्तिव्यासङ्गै र्निजनिजमतोल्लासरसिकाः ।
न देवाः सान्निध्यं विदधति न वा कोऽप्यतिशय—
स्तदेवं कालेऽस्मिन् य इह दृढ़धर्मा स सुकृती ॥

—शान्तसुधारस १२

आज मत-मतांतर और मत भेदों का पार नहीं है, कदम-कदम पर अनेक विद्वान खड़े हैं, जो कुयुक्तियों द्वारा अपने-अपने मत की पुष्टि करने में तत्पर हैं। इस समय कोई भी देव सहायता नहीं करते तथा कोई विशेष ज्ञान का अतिशय (आश्चर्य) भी नजर नहीं आता। इतना कुछ होते हुए भी इस समय जो दृढ़धर्मी है, वह वस्तुतः भाग्यवान है।

२ सदयं हृदयं यस्य, भाषितं सत्यभूषितम् ।
कायः परहिते यस्य, कलिस्तस्य करोति किम् ॥

— सुभाषितरत्नभाण्डागार पृष्ठ १६३

जिसका मन दयायुक्त है, वाणी सत्य से अलंकृत है और शरीर परहित में लगा हुआ है—ऐसे व्यक्ति का कलियुग कर ही क्या सकता है ?

१० भविष्य की सूचनाएं

१ **एक वैज्ञानिक की भविष्य सूचना-सन् १९४० :—**

आज से दस हजार वर्ष आगे के संसार में जनसंख्या आज से १० गुनी होगी, भोजन रासायनिक पदार्थ का होगा, जहाज, मोटर व रेलें बिजली या सूर्य की किरणों से चलेंगी, गाड़ियाँ जमीन के अन्दर चलेंगी, आयु आज से दो-तीन गुनी होगी, अपराधी कम होंगे और उनके लिए कैद न होकर स्कूल व सेनोटेरियम होंगे तथा चन्द्र-बुध-शुक्र की यात्रा होने लगेंगी। उस समय के मनुष्य २० वीं शताब्दी की मूर्खता पर हास्य करेंगे एवं हिटलर-मुसोलिनी को राक्षस कहेंगे।

—'विज्ञान के नए आविष्कार' से

२ **योगिराज श्री अरविन्द घोष की भविष्यवाणी सन् १९०५ :—**

(क) मैं योगदृष्टि से स्पष्ट देख रहा हूँ कि भारत १९४५ और १९५० के मध्य स्वतन्त्र हो जाएगा।

(ख) भारत के खण्ड हो जाएंगे और इसकी (भारत की) उत्तरी सीमा में गड़बड़े रहेंगी।

(ग) १९६२ में भारत पर विदेशी सत्ता का हिमालय के मार्ग से आक्रमण होगा।

(घ) १९६७ से १९६९ तक का काल भारत का परीक्षाकाल होगा, इसमें राजनैतिक अस्थिरता रहेगी। पर अन्ततः भारत इस पर विजय पा लेगा।

(ङ) १९७२ में भारत पुनः एक होगा।

(च) १९७५ से भारत संसार के महाशक्तिशाली राष्ट्रों में से एक होगा।

(छ) १९८५ में संस्कृत राष्ट्रभाषा बनेगी।

—श्री विश्वविजय पञ्चांग, सं० २०२९ पृष्ठ १३

११ स्वरों का रहस्य एवं उनके आधार पर भविष्य की सूचनाएँ

—श्री विलक्षण अवधूत स्वरोदय, अंग ८ के अनुसार

१ स्वरों का स्वरूप :—

स्वर कहते हैं श्वास को, चले सुषुम्ना माहिं ।
पहुँचै आज्ञा चक्र में, इड़ा पिङ्गला जाहिं ॥ १ ॥।
सत-रज-तम का रूप है, तीनों नाड़ी जान ।
ईड़ा पिंगला, सुषुम्ना, "अमृत" कर पहिचान ॥ २ ॥

२ स्वरों के स्वभाव :—

चन्द्र इड़ा को कहते हैं, इसका शीतल भाव ।
सूर्य पिंगला जानिए, रखता उष्ण प्रभाव ॥ ३ ॥
सुषुम्न समशीतोष्ण है, विरला जाने भेद ।
सूक्ष्म ज्ञान 'अमृत' कहे, दूर करे तन खेद ॥ ४ ॥

३ स्वरों के स्थान: —

बाएँ स्वर चलती इड़ा, जहाँ चन्द्र का वास ।
पिंगल दाहिने स्वर चले, करता सूर्य प्रकाश ॥ ५ ॥
दोनों स्वर जब चलत हैं, मध्य कहत है ताहि ।
यही सुषुम्ना रूप है, 'अमृत' घट के माँहि ॥ ६ ॥

४ स्वरों के तत्त्व :—

इड़ा पिंगला सुषुम्ना, पञ्चतत्त्व हैं साथ ।
'अमृत' भेद बतावई, धर गुरु चरणन माथ ॥७॥

जाने जो गति श्वास की, और तत्त्व का रंग।
समय-समय पर होत है, भिन्न-भिन्न यह संग ॥८॥
पीत वर्ण है पृथ्वी का, सीधी गति पहिचान।
द्वादस अंगुल चलत है, 'अमृत' निश्चय जान ॥९॥
रक्त रंग ऊपर चले, अग्नि अंगुल चार।
सोलह अंगुल श्वेत है, नीचे जल को धार ॥१०॥
हरित रंग टेढ़ी गति, अंगुल अष्ट प्रमाण।
'अमृत' वायु-स्वरूप है, सुनियो सन्त सुजान ॥११॥
श्वास चले स्वर दोय से, बाहर आवै नाँहि।
श्याम रंग आकाश का, 'अमृत' घट के माँहि ॥१२॥

तत्त्व	रंग	स्वाद	रूप	स्वभाव	चाल
१ पृथ्वी	पीला	मीठा	चौकौन	भारी	१२ अंगुल सम्मुख
२ अग्नि	लाल	चर्चरा	त्रिकोन	गर्म	४ अंगुल ऊपर
३ जल	श्वेत	कम मीठा	चंद्राकार	शीतल	१६ अंगुल नीचे
४ वायु	हरा	खट्टा	गोल	चंचल	८ अंगुल तिरछा
५ आकाश	काला	कडुवा	कान के समान	शीतल	१२ अंगुल अंदर ही अंदर चले

५ स्वरों का समय—

कृष्ण पक्ष है भानु का, शुक्ल पक्ष है चन्द्र।
सूरज के दिन तीन हैं, पुनः तीन दिन चन्द्र[1] ॥१३॥

---

१ शुक्ल पक्ष के आदि में, तीन तिथि (१-२-३) लग चन्द्र फिर (४-५-६) सूरज, फिर (७-८-९) चंद्र हैं, फिर (१०-११-१२) सूरज फिर (१३-१४-१५) चंद्र।

कृष्ण पक्ष के आदि में तीन तिथी लगभान।
फिर चंदा फिर भान है, फिर चंदा फिर भान ॥*

* सूर्योदय से ५ घड़ी तक

पक्ष लगत्र प्रात हि उठे, स्वर का करे विचार।
उचित मार्ग पर जो चले, 'अमृत' सुख का सार ।।१४।।
कृष्ण पक्ष चन्दा चले, शुक्ल पक्ष जो भानु।
क्लेश हानि या रोग है, 'अमृत' निश्चय जानु ।।१४।।
दाहिने स्वर पिंगल चले, जहाँ सूर्य का राज।
निश्चय ही चर कार्य हो, 'अमृत' सुख का साज ।१६।।
चन्द्र अंग बाएं इड़ा, स्थिर कामों के हेत।
'अमृत' निस्सन्देह हो, खोजो काया खेत ।।१७।।
तीन दिवस हैं सूर्य के, शनि मंगल अरु दीत।
सोम, गुरु बुध और भृगु, चन्द्र चलन की रीत ।।१८।।

६ स्वरों के कार्य—

स्नान-ध्यान-औषधि-विषय, लेन-देन, रण-वाद।
दाहिने स्वर के कार्य चर, 'अमृत' दूर विषाद ।।
व्याह, दान, औषधि, भवन, दत्तक योग-विचार।
पान जान स्थिर कार्य है, 'अमृत' बाएँ धार ।।
बाएं लघुशंका करे, शौच दाहिने जाय।
दाएं स्वर भोजन करे, बाएं जल हित पाय ।।
सुषुम्न कोई तत्व हो, नहीं करे कुछ काज।
शान्त होय अजपा जपे, कहते 'अमृत' राज[1] ।।

७ प्रश्न और प्रश्नकर्त्ता—

जल, पृथ्वी दहिने चले, प्रश्न करे स्थिर आय।
सन्मुख बाएं ऊर्द्ध से, उत्तम कार्य बनाय ।।
दहिना स्वर चर कार्य का, अग्नि-वायु का मेल।
दायां हो पूछे कोई, 'अमृत' पूरा खेल ।।

---

१ चंदा में स्थायी करो, कठिन काम रवि मांह।
सुषुम्ना में ध्यान वर, धरो हृदय सोत्साह ।।

अग्नि वायु बाएं चले, स्थिर कारज को जान।
पृथ्वी, जल चर कार्य को, दाहिनी दिश पहचान॥
प्रच्छक का अरु आपका, जब स्वर मिलता एक।
कार्य तुरत 'अमृत' बने, संशय मत कर नेक॥
भीतर हो गति श्वास की, प्रश्न करे जो कोय।
निश्चय कारज सिद्ध हो, सूक्ष्म तत्त्व यह जोय॥
बाएं स्वर से आयकर, प्रश्न करे जो कोय।
पुत्र होय शंका नहीं, 'अमृत' निश्चय जोय॥
बाएं स्वर में प्रश्न हो, दहिना उसका होय।
लड़की हो 'अमृत' कहे, निश्चय जानो सोय॥
चन्द्र माहिं गति श्वास की, प्रश्न करे जो आय।
रोगी का नहिं नाश है, 'अमृत' सत्य सुनाय॥
प्रश्न आय कोई करे, सूरज की गति संग।
आयु नहीं रोगी मरे, काया होगी भंग॥

९ **यात्रा**—

दहिने स्वर यात्रा करे, पूरब-उत्तर माहिं।
दक्षिण-पश्चिम जाइये, बाएं चित्त उच्छाहिं[1]॥

१० **वर्ष का भविष्य**—

नया वर्ष आरम्भ हो, चले चन्द्र में श्वास।
प्रातःकाल विचारिए, शुभ सम्वत विश्वास॥
दाहिन स्वर से जानिए, सम्वत मध्यम रूप।
सुषुम्न माहिं अकाल हो, लड़े परस्पर भूप॥

---

१ दाहिन स्वर में जाईये, दाहिने डग धर तीन,
बाएं स्वर में चार डग, बाएं करहु प्रवीण।
गांव परगने खेत पुनि, इधर-उधर सुन मीत।
सुषुम्न चलत न चालिये, वर्जत है **रणजीत**॥

आप मरे, दुख सृष्टि में, जानो रोग निवास।
वर्षे नहीं न अन्न हो, 'अमृत' का विश्वास॥

११ स्वर परिवर्तन—

चन्दा से सूरज करे, करे सूर्य से चन्द।
उत्तमता रहती नहीं, फल हो जाता मन्द॥
बाएं से यदि दाहिना, करे कार्यवश कोय।
उसी ओर को दाबिये, सम्भव है गति होय[1]॥
चलना हो यदि चन्द्र में, सूरज में गति होय।
तीन धरे पग चन्द में, सूरज यों भी होय॥

---

१ स्वर-विरुद्ध करवट करे, नक्र दे रूई जीर्ण।
या दौड़न से शीघ्र ही, स्वर बदले कवि-गीर्ण॥

१ समय वह जड़ी है, जो तमाम रोगों का इलाज कर देती है।

—फ्रैंकलिन

२ समय ही सबसे योग्य शिक्षक है। —पैरोक्लीज

० टाइम इज मनी। —बुलवरलिटन

समय धन है।

३ समय-कसौटी पर ही मनुष्य के आत्मा की परीक्षा होती है।

—थामसपेन

४ एक युग विशाल नगरों का निर्माण करता है और एक क्षण उसका ध्वंस कर डालता है। — सेनेका

५ समे समा बलवान है, नहीं पुरुष बलवान।
काबै गोपी लूटियुं, वही धनुष वही बाण।।

६ समय ने मान छे, पुरुष ने नहिं, माटे आवते दिवस ने ओलखवो।

० गाडु नावमां नें नाव गाड़ा पर,
माथुं पागड़ी मां ने पागड़ी माथा पर।

० घोड़ा पर चढ़िए त्यांरे आपणे सवार ने उतरिए त्यांरे घोड़ो सवार

—गुजराती कहावतें

७ उतर भीखा ! म्हारीं वारी।

० कदे दिन बड़ा, कदे रात बड़ी।

—राजस्थानी कहावतें

८ अपने-अपने समय पर सबका आदर होय।
भोजन प्यारो भूख में, तिस में प्यारो तोय।

—वृन्द कवि

१३ समय की कीमत

१ समय को नष्ट मत करो क्योंकि यही जीवन निर्माण का अवयव है।

—फ्रैंकलिन

२ समय मुँह पर बालवाले चोर के समान है—इसे आते ही पकड़ लो।

० एक व्यक्ति बड़े शहर में म्युजियम देखने गया। वहाँ नई-नई चीजें देखीं। वापस लौटते समय दीवार पर एक तस्वीर नजर चढ़ी, उसके मुंह पर बाल थे। सिर बिल्कुल साफ था। तथा यह भी पता नहीं चल रहा था कि वह स्त्री है या पुरुष। पूछने पर गाइड ने कहा कि यह समय की तस्वीर है। इसके मुँह पर ही बाल होते हैं अतः इसे आते ही पकड़ लेना चाहिए। मुँह मोड़ने के बाद यह चोर हाथ नहीं आ सकता क्योंकि पीछे बाल नहीं हैं।

३ टाइम एण्ड टाइड वेट फोर नन। —अंग्रेजी कहावत

समय किसी की भी प्रतीक्षा नहीं करता।

४ मैं तुम्हें एक ही शिक्षा दूंगा कि तुम केवल मिनिटों का ध्यान रखो, घंटे स्वयं अपना ध्यान रख लेंगे।

—चेस्टरफिल्ड

५ दौड़ना व्यर्थ है, मुख्य बात तो समय पर निकलना है।

—ला: फांटेन

६ भारतीयों की अपेक्षा विदेशी लोग समय का ख्याल अधिक रखते हैं।

(क) एक छात्र ने बुकसेलर से किताब मांगी। नौकर ने एक रुपया कहा। छात्र ने मालिक (जो अन्दर खास हिसाब कर रहा था) को बुलाया, उसने भी वही कीमत कही। छात्र ने १२ आने

कहे, मालिक ने सवा रुपया मांगा । कुछ देर बाद छात्र ने सवा रुपया देना चाहा, मालिक ने ड़ेढ़ रुपया कर दिया। छात्र ने मतलब पूछा। मालिक ने कहा—यहाँ समय की कीमत है । तू जितनी देरी लगाएगा कीमत बढ़ती जाएगी । छात्र चुपचाप किताब लेकर चला गया ।

(ख) इग्लैंड में एक जगह शाम को पांच बजे भाषण होनेवाला था । एक भारतीय साढ़े चार बजे ही जा बैठा । वहां प्रवचन हाल खुला भी नहीं था । पाँच बजने में ज्योंही दस मिनट बाकी रहे, नौकरों ने आकर सफाई की । फिर चार पाँच मिनट में ही श्रोताओं से हाल खचा-खच भर गया एवं ठीक पांच बजे भाषण शुरू हो गया ।

१४ समय का सदुपयोग

१ तंग-दिली अच्छी नहीं, तंग हाथ दुखकार,
लेकिन तंगी समय की, चन्दन ! है अविकार।

—दोहाद्विशती

२ ज्ञान-ध्यान विनोदेन, कालो गच्छति धीमताम्,
व्यसनेन हि मूर्खाणां, निद्रया कलहेन वा।

बुद्धिमानों का समय ज्ञान-ध्यान के विनोद में जाता है और मूर्खों का समय व्यसनों में, नींद में अथवा लड़ाई-झगड़े में व्यतीत होता है।

३ प्रातर्द्यूत प्रसङ्गेन, मध्याह्ने स्त्रीप्रसंङ्गतः।
रात्रौ चौर प्रसङ्गेन, कालोगच्छति धीमताम्।

—चाणक्यनीति ६।११

बुद्धिमान प्रातःकाल द्यूत-प्रसङ्ग (महाभारत की कथा) से, मध्याह्न स्त्री-प्रसङ्ग (रामायण) से और रात्रि चोर (कृष्ण) के प्रसङ्ग से व्यतीत करते हैं।

४ **एक मिनट में** :—

१ आकाश में ६००० उल्काएं स्पर्श करती हैं।
२ पृथ्वी अपनी धुरी पर ६५० मील दूरी तय करती है।
३ विश्व में ३८ तूफान उठते हैं।
४ ३४ बार शादी की सहनाईयाँ बजती हैं एवं तीन तलाक हो जाते हैं।
५ ६,००,००,००० सिगरेट जल जाते हैं।
६ १,१०,००० अखबार खरीदे जाते हैं।
७ २,८०,००० टेलीफोन की घंटियाँ बज उठती हैं।

८ मनुष्य ६,३८,००० गैलन पानी एवं ४००० टन अन्न अपने उदरस्थ करते हैं !
६ ३००० टन कोयला निकाला जाता है ।
१० ७०० टन स्टील बनता है ।
११ ४६०० जोड़े जूते बनते हैं ।
१२ १८ नई कारें बनती हैं ।

—'कमल-नाहटा' के संग्रह से

५ कौन कितने समय में ?—

१ उँगली का नाखून वर्ष भर में २॥ इंच बढ़ता है ।
२ मनुष्य का बाल वर्ष भर में १६ इंच बढ़ता है ।
३ बाँस वर्ष भर में ३३ इंच बढ़ता है ।
४ घोंघा एक दिन में ५० इंच चल पाता है ।
५ ताजी हवा एक घंटे में ५ मील चलती है ।
६ हाथी एक घंटे में २५ मील दौड़ लेता है ।
७ शिकारी कुत्ता एक घंटे में ३९ मील दौड़ता है ।
८ घुड़सवार एक घंटे में ४१ मील जाता है ।
६ मोटर बोट ,, ,, १२५ ,, ,, ।
१० उकाब ,, ,, १२५ ,, उड़ता है ।
११ शब्द ,, ,, ७६० ,, जाता है ।
१२ बवंडर ,, ,, १२०० ,, ,, ।
१३ बन्दूक की गोली एक घंटे में १८०० मील जाती है ।
१४ प्रकाश एक सेकेण्ड में १,८६,३२५ मील जाता है ।
१५ विचार सबसे अधिक वेगगामी है ।

—'मानो न मानो' पृष्ठ १६-१७

६ पृथ्वी पर प्रति घंटा गति :—

१ गोफर सांप प्रति घंटा १ मील चल सकता है ।
२ मुर्गी ,, ,, ६ ,, ,, सकती है ।
३ सूअर ,, ,, ११ ,, ,, सकता है ।

४ पूरी रफ़्तार से दौड़ता धावक प्रति घंटा २२ मील चल सकता है।
५ तेज स्कूटर प्रति घंटा २५ मील चल सकता है।
६ श्वेत पूंछ का हिरन ,, ३० ,, ,, ,, ।
७ घोड़ा ,, ४० ,, ,, ,, ।
८ जैक खरगोश प्रति घंटा ४५ मील चल सकता है।
९ चीता ,, ,, ७० ,, ,, ,, ।
१० रेलगाड़ी ,, ,, २०५ ,, चल सकती है।
११ मोटर साइकिल ,, ,, २१० ,, ,, ,, ।
१२ मोटरकार ,, ,, ३९४ ,, ,, ,, ।
१३ राकेट स्लेड ,, ,, ६३२ ,, चल सकता है।

० **पानी में प्रति घंटा गति :—**

१ पाइक मछली प्रति घंटा १ मील चल सकती है।
२ तैराक आदमी ,, ,, ३ मील तैर सकता है।
३ सालमन मछली ,, ,, ७ ,, चल सकती है।
४ उड़न मछली (उड़ने के ठीक पहले) प्रति घंटा ३५ मील चल सकती है।
५ समुद्री जहाज प्रति घंटा ४१ मील चल सकता है।
६ सोर्डफिश और सेलफिश प्रतिघंटा ६० मील चल सकती है।
७ जेट स्वीडबोट प्रतिघंटा २४८ मील चल सकती है।

० **वायु में प्रति घंटा गति :—**

१ कैंचीदुम फ्लाई कैचर प्रति घंटा १० मील उड़ सकता है।
२ ब्लूबर्ड ,, ,, १७ ,, ,, ,, ।
३ रोबिन प्रति घंटा ३६ मील उड़ सकता है।
४ पालतू कबूतर ,, ४५ ,, ,, ,, ।
५ स्विफ्ट ,, ६८ ,, ,, ,, ।
६ अबावील ,, १०६ ,, ,, ,, ।

७ गोल्डेन ईगल या गरुड़ प्रति घंटा १२० मील उड़ सकता है।

८ डक हॉक प्रति घंटा १८० मील उड़ सकता है।

९ सामान्य वायुयान ,, ३४६ ,, ,, ,, ।

१० जेट वायुयान ,, १४०५ ,, ,, ,, ।

११ चन्द्र रॉकेट ,, २३४५० ,, ,, ,, ।

—विश्वकोष, भाग ७ पृष्ठ ३२

१५ समयानुसार काम

१ न कार्यकालमतिपातयेत् ।

—चरकसंहिता ८।२७

काम करने के समय को व्यर्थ न खोएं ।

२ समय पर ही ठीक तौर से काम करने की आदत का खयाल रखो । जो कुछ करना हो शीघ्र कर डालो और काम कर लेने के बाद आराम करो । पहले आराम करने की चेष्टा न करो ।

—स्वेट मार्टन

३ करं पुरिस किच्चानि, न च पच्छानुतप्पति ।

—जातक २२।५३६।१२६

जो व्यक्ति समय पर अपना काम कर लेता है, वह पीछे पछताता नहीं ।

४ न कालमतिवर्तन्ते, महान्तः स्वेषु कर्मषु ।

—योगवाशिष्ठ ५।१०।६

महापुरुष अपने कार्यों में काल का अतिक्रमण नहीं करते ।

५ हमेशा वक्त को देखकर काम करना—यह एक ऐसी डोरी है, जो सौभाग्य को तुम्हारे साथ बांध देगी । —तिरुवल्लुवर

६ समये मीठा बोलना, समये मीठी चूप ।
उन्हाले छाया भली, रज्जब ! श्याले धूप ।।

७ कोई समय बोलने और काम करने का होता है तो कभी मौन और अकर्मण्यता धारण करनी पड़ती है । —गांधी

८ जब समय तुम्हारे विरुद्ध हो तो सारस की तरह निष्कर्मण्यता का बहाना करो और मौका आने पर उसी तरह झपट कर हमला करो । —तिरुवल्लुवर

९ जैसा बाजै बायरा, तैसी दीजै पूठ (लीजै ओट)
० अणीचूक्यो सौ वरस जीवै।

—राजस्थानी कहावतें

१० दाव आव्ये सोगटी मारवी, वा जोई वाहण हंकारवुं,
अने बल जोईनें टाकणु मारवुं।
० वखते नरम-गरम थइए त्यारे मेल आवे।
० नमती दोरी तो मूकवी ज पड़े, कड़वा घूंटड़ा तो उतारवा ज पड़े।
० गरमे-गरम भेगा थाय त्यां झाल उठे।

—गुजराती कहावतें

११ बेले दी नमाज कुबेलेदीयाँ टक्कराँ।
० ईद पीछों तम्बा फुंकना।

—पंजाबी कहावतें

१६ आज का काम कल पर मत छोड़ो !

१ न श्वः श्वमुपासीत, को हि मनुष्यस्य श्वो वेद।

—शतपथब्राह्मण २।१।३।६

कल की उपासना मत करो, अर्थात् कल के भरोसे मत बैठे रहो ! मनुष्य के कल को कौन जानता है ?

२ कारे इमरोज बफर्दा न वायद गुजारत। —पारसी कहावत

आज का काम कल पर मत रख।

३ अद्धा हि तद् यदद्य, अनद्धा हि तद् यच्छ्वः।

—शतपथ ब्राह्मण २।३।१।२८

जो आज है, वह निश्चित है और जो कल होगा, वह अनिश्चित है।

४ काल कुण देख्यो है। —राजस्थानी कहावत

५ अज्जेव किच्चं आतप्पं, को जञ्ञा मरणं सुवे ?

—जातक २२।५३८।१२१

आज का काम आज ही कर लेना चाहिए, कौन जाने कल मृत्यु ही आ जाए ?

६ जस्सत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स वऽत्थि पलायणं।
जो जाणे न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया॥

—उत्तराध्ययन १४।२७

जिसकी मृत्यु के साथ मैत्री है, जो मृत्यु के आने पर दूर भाग सकता है, अथवा जो यह जानता है कि मैं कभी मरूंगा ही नहीं, वही आनेवाले कल का भरोसा कर सकता है।

७ व्हाट दी क्लोक सेज, टिक-टिक टिक,
व्हाट यू हेव टु डु डु क्विक,
टाइम इज ग्लैडिंग फास्ट अवे,
लेट अस एक्ट एण्ड एक्ट टुडे[1] —अंग्रेजी-कविता

---

१. घड़ी एक वर्ष में १५,७६,८०,००० बार टिक-टिक करती है।

टिक-टिक-टिक करती हुई घड़ी तुम्हें कहती है कि जो कुछ करना हो शीघ्र करलो, समय तेजी से चला जा रहा है। सत्कार्य करना चाहिए और आज ही करना चाहिए।

८ कल को कल तक रहने दो !

९ स्वयं को कल पर आश्वस्त मत कर ! क्योंकि तुझे क्या पता कि कोई दिवस तेरे लिए क्या लाएगा।

—**बाइबिल**

१० कल की आशा पर सोया हुआ कोई आज तक नहीं जागा।

—**नलिन**

० मोतीलाल नेहरू से एक मुसलमान ने कहा—गांधीजी तो मर्दों को चूड़ियां पहनाते हैं। कुछ तलवार का कार्यक्रम हो तो बतलाइए ! उन्होंने कहा—कल आना ! दूसरे दिन ही नेहरू मर गए।

११ "कल" शैतान का दूत है। इतिहास के पृष्ठों पर इस कल की धार से कितने ही प्रतिभाशालिओं का गला कट गया।

१२ जो शक्ति आज के काम को कल पर डालने में खर्च होती है, उसी शक्ति द्वारा आज का काम आज ही किया जा सकता है।

१३ आज का अवसर घूम कर खो दो, कल भी वही बात होगी और फिर अधिक सुस्ती आ जाएगी। —**शेक्सपीयर**

१४ आज की चिट्ठियाँ आज न लिखने से व आज की रोकड़ आज न मिलाने से कल अधिक कठिनाई होगी।

१५ इंग्लैण्ड के दो व्यक्ति जर्मन आदि देशो में गए। एक आदमी दिन में जो कुछ देखता, फौरन शाम को लिख लेता और दूसरा कल पर छोड़ देता। पहले ने किताब बनाकर हजारों रुपये कमाए और दूसरा यों का यों ही रह गया।

—**'प्राचीन संग्रह' से**

१६ युधिष्ठिर से एक ब्राह्मण ने दक्षिणा मांगी। उन्होंने कहा—कल दूंगा। भीम ने जीत का नगारा बजा दिया। पूछने पर कहा—

आपने मृत्यु को जीत लिया, इसलिए विजय की खुशी में मैंने यह नगारा बजाया है। युधिष्ठिर बोले—यह कैसे? भीम ने उत्तर दिया, अगर मृत्यु को नहीं जीता है तो "कल दूंगा" ऐसे क्यों कहा? युधिष्ठिर ने गल्ती महसूस की एवं उसी समय ब्राह्मण को दान दे दिया।

० सेठानी सेठ से व्याख्यान सुनने के लिए कहा करती एवं सेठ उत्तर देता "कल सुनूगां" एक बार वह बीमार पड़ा और बोला—डाक्टर को बुलाओ! सेठानी ने कहा—कल बुलवाऊंगी। सेठ ने चौंककर पूछा-कल क्यों? सेठानी ने हंसकर कहा-व्याख्यान सुनने के लिए भी आप "कल" कहा करते हैं।

—अध्ययन के आधार पर

१७ कल का काम आज ही करलो !

१ जं कल्ले कायव्वं, णरेण अज्जेव तं वरं काउं ।
मच्चू अकलुणहिअओ, न हु दीसइ आवयंतो वि ॥
तुरह धम्मं काउं, मा हु पमायं खणं पि कुव्वित्था ।
बहुविग्घो हु मुहुत्तो, मा अवरण्हं पडिच्छाहि ॥

—**बृहत्कल्पभाष्य ४६७४-७५**

जो काम कल करना है, वह आज ही कर लेना अच्छा है। मृत्यु अत्यंत निर्दय है, (यह कब आ जाए, मालूम नहीं)।

धर्माचरण करने के लिए शीघ्रता करो, एक क्षणभर भी प्रमाद मत करो ! जीवन का एक-एक क्षण विघ्नों से भरा है, इसमें संध्या की भी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए।

२ काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगो कब ?

—**कबीर**

३ श्वः कार्यमद्य कुर्वीत, पूर्वाह्णे चापराह्णिकम्,
नहि मृत्युः प्रतीक्षेत, कृतं चास्य न वा कृतम्।

—**महाभारत शान्तिपर्व २७७।१३**

कल का काम आज और पिछले प्रहर का काम प्रथम प्रहर में ही कर लेना चाहिए, क्योंकि मृत्यु यह नहीं देखती कि इसने काम कर लिया या नहीं किया।

४ कर्‌या सो काम, भज्या सो राम।
० कर्‌या सो काम, बिंध्या सो मोती।

—**राजस्थानी कहावतें**

●

१८ थोड़ी-सी देर से नुकसान

१ क्षिप्रमक्रियमाणस्य, कालः पिबति तद्रसम् ।

—महाभारत शांतिपर्व

कार्य करने में विलंब करने पर उसका रस काल पी जाता है अर्थात् उसका महत्त्व घट जाता है।

२ कालातिक्रमान्नखच्छेद्यमपि कार्यं भवति कुठारच्छेद्यम् ।

—नितिवाक्यामृतम् १०।६४

समय निकल जाने पर नखों से छेदनेयोग्य कार्य भी कुहाड़े से काटने लायक बन जाता है।

३ आफ़तश दर ताखीर। —पारसी कहावत

देर करने से हानि।

४ **भारी नुक्सान :—**

(तर्ज—आजादी का दिवाना था)

नुक्सान भारी हो जाता, थोड़ी-सी देरी से।
सुधरा सब काम बिगड़ जाता, थोड़ी-सी देरी से।ध्रु व।
मामला लाखों रुपयों का, खारिज हो जाता।
जाने के कारण कोर्ट में, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ १ ॥

बिना गुनह एक आदमी, फांसी पर चढ़ जाता।
आने के कारण दूतपत्र, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ २ ॥

सेठ करोड़ाधीश की, इज्जत बिगड़ जाती।
आने से रुपये एजेन्ट के, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ ३ ॥

देश पर दुश्मन लोगों का, कब्जा हो जाता।
सजने के कारण वीर वर, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ ४ ॥

व्यापार में लाखों रुपयों का, घाटा हो जाता।
पढ़ने के कारण चिट्ठियाँ, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ ५ ॥

आलीशान इमारतें, जल खाक हो जातीं।
आने के कारण दमकले, थोड़ी-सी देरी से।
नुक्सान ॥ ६ ॥

—उपदेशसुमनमाला

५ कर्नल "राहल" तास खेल रहा था। वाशिंगटन की सेना आने का पत्र मिला, तीन मिनिट बाद पढ़ा, भारी नुक्सान हो गया।

० ग्रीस का गवर्नर चिट्ठी पढ़े बिना खाने बैठा और मारा गया।

० नेपोलियन ने सेनापति को खाने के लिए बुलाया। वह कुछ देरी से पहुँचा। मालिक ने कहा—खाना तो हो चुका, चलिए अब दूसरा काम करें। सेनापति शर्मिंदा हुआ।

० वाशिंगटन का सेक्रेटरी कुछ देरी से पहुँचा। पूछने पर "घड़ी सुस्त थी" ऐसा कहा। राष्ट्रपति बोले—या तो आप घड़ी को बदल लें अन्यथा मुझे सेक्रेट्री बदलना होगा।

—'प्राचीन संग्रह' से

१६ गया वक्त वापस नहीं आता

१ जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई ।

—उत्तराध्ययन १४।२४

जो जो रात्रि चली जाती है, वह वापस नहीं आती ।

२ गया वक्त न वापस आता, चाहे आवे आप विधाता ।

—उपदेशसुमनमाला

० गई संपत्ति परिश्रम से, विस्मृत ज्ञान अध्ययन से, नष्ट स्वास्थ्य औषधि से एवं नष्ट संयम गुरुकृपा से पुनः मिल सकता है लेकिन गया हुआ वक्त वापस कभी नहीं मिल सकता ।

३ इसकी कल्पना भी मत करो कि कोई भी अवसर तुम्हारे द्वार पर दुबारा पुकारेगा । —चेम्फर्ट

४ समय की दशा बर्फ के समान है ।

० नफे की क्या खाक हो, उम्मीद हमको बर्फ में ।
देर बिकने में लगी तो गल के पानी हो गया ।

—उर्दू शेर

५ नाणुं मले, पण टाणुं न मले ।

० सोए वर्षे सईको होय ।

—गुजराती कहावतें

अवसर

१ समय न चूकत चतुर नर, कहते कविजन कूक,
चतुरन के खटकत हिये, समय चूक की हूक।

२ समझणहार सुजान, नर अवसर चूके नहिं,
अवसर रो अहसान, रहै घणा दिन राजिया ! —सोरठा संग्रह

३ अगर तुम्हें असाधारण अवसर मिल जाय तो फौरन दुःसाध्य कार्य कर डालो। —तिरुवल्लुवर

४ अवसर का लाभ उठाकर ही जे० एन० टाटा भारत के सबसे बड़े उद्योगपति बने, लिंकन (लकड़ी फाड़ते समय भी जो पढ़ते रहते थे) और गार्फिल्ड अमेरिका के राष्ट्रपति बने, सुकरात उच्चकोटि के दार्शनिक कहलाए एवं गांधी विश्वविभूति माने गये।

—संकलित

५ विश्व में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं, जिसके पास एक बार भाग्योदय का अवसर नहीं आता हो किन्तु स्वागत न होने पर वह उलटे पैर लौट जाता है। — कार्डिनल

६ अवसरों की बाट न देखकर उन्हें अपना दास बनानेवाले मनुष्य सर्वोत्तम हैं। — ई० एच० चैपिन

७ अक्लमन्द आदमी को जितने अवसर मिलते हैं, उनसे अधिक तो वह नए पैदा कर लेता है। —बेकन

८ कोई भी अवसर छोटा-बड़ा नहीं है। उसमें अपनी बुद्धि को लगा देने से छोटा भी बड़ा बन जाता है। — स्वेट मार्टन

९ घोड़ा गिणगोर्‌यां ने ही नहीं दौड़सी तो फेर कद दौड़सी ?

—राजस्थानी कहावत

२१ अवसर चूकने के बाद

१ निर्वाणदीपे किमु तैलदानं, चौरेगते वा किमु सावधानम् ।
वयोगते किं वनिता-विलासः, पयोगते किं खलु सेतुबन्धः ।।

दीपक बुझने के बाद तेल डालने से क्या लाभ ! माल लेकर चोर चले जाने के बाद सावधान होने से क्या लाभ ! जवानी ढल जाने के बाद स्त्री-सहवास से क्या लाभ ! अर्थात् कुछ भी लाभ नहीं ।

२ समय चूकि पुनि का पछताने —**रामचरितमानस**

३ वक्त पर कतरा है काफी, अब्र खुश अन्जाम[1] का ।
जबकि खेती जल गई, बरसा तो फिर क्या काम का ।।
—**उर्दू शेर**

४ अवसर चूकी डूमणी, गावै आल-पंपाल —**राजस्थानी कहावत**

५ अवसर का चूका— (तर्ज—हैदराबाद चलो !)

अवसर का चूका प्राणी रोता है आंखें भर-भर ।
रोता है आंखें भर-भर, मुश्किल फिर मिलना अवसर ।ध्रु०।
रास्ते का चूका अंधा, धंधे का चूका बंदा,
नौकरी का चूका नौकर, रोता है…१
मृगया का चूका शिकारी, तेजी का चूका व्यापारी,
दृष्टि का चूका नटवर, रोता है…२
मंदी का चूका ग्राहक, गाने का चूका गायक,
संयम का चूका मुनिवर, रोता है…३
कहने में चूका मुलिजम, निर्णय में चूका हाकिम,
पोइंट में चूका बैरिस्टर, रोता है…४

---

१ अच्छे बादल का ।

बाजी का चूका खिलाड़ी, दाने से चूका भिखारी,
आषाढ़ का चूका कृषिवर, रोता है····५ **—उपदेशसुमनमाला**

६ **रातभर हल चलवाता**—एक राजा के मन में प्रजा को दान देने की भावना हुई। उद्घोषणा की गई। सारी प्रजा दान लेने आई। एक चारण नहीं आया। कुल देवी से प्रार्थना की गई। देवी ने कहा—यह ऐसे तो दान नहीं लेगा लेकिन गरीबी के कारण इसके घर ऊँट-बैल आदि नहीं हैं। अतः अपने बेटे को बैल की जगह जोतकर हल चलाया करता है। तू अगर हल चलादे तो मैं उसके खेत में ज्वार की जगह मोती पैदा कर दूं। राजा ने एवमस्तु कहा. फिर वेष बदलकर थोड़ी देर उसका हल चलाया और लौटते समय कहा—मेरे बोये हुये बीजों की पूरी सम्भाल रखना। चारण ने खास परवाह नहीं की। किंतु खेती पकने पर पता लगा कि उसके बोये हुये पौधों में ज्वार की जगह मोती के दाने पड़े हैं। अब चारण हाथ मल-मल कर रोता है कि हाय-हाय! पहले पता होता तो उससे रात-भर हल चलवाता लेकिन अब रोने से क्या?

७ **गुदड़ा सबेरे ही सौंप देती**—सेठ सुमेरमलजी सतियों की सेवा में **नेणासर** गये थे। चौधरण गुदड़ा सी रही थी। सेठजी ने उसे सतियों की सेवा का उपदेश दिया। उसने कहा—गुदड़ा कौन सीये? सेठजी ने कहा—ला! मैं सी दूं! सेठजी गुदड़ा सीने लगे और वह सतियों की सेवा करने लगी। वापस आई तो गुदड़ा तैयार मिला। विस्मित होकर वह कहने लगी ऐसा पता होता तो तुम्हें गुदड़ा सबेरे ही सौंप देती। **—सेठजी से श्रुत**

८ एव्री रोग इज एट लैंग्थ आउट रोग्ड **—अंग्रेजी कहावत**

० **राई रा भाव राते गया :—** **—राजस्थानी कहावत**

सेठ-सेठानी सो रहे थे। चार चोर आये। बुद्धिमान् सेठ ने सेठानी से पूछा—राई कहाँ रखी है? उसके भाव आठ गुने तेज हो गये

हैं । सेठानी ने कहा—राई तो नीचे कोठे में भरी हुई है और कोठे में ताला भी नहीं है अतः आप जोर से मत बोलिये । कोई सुन लेगा । चोर दौड़े और राई की गठरियाँ बाँधकर ले गये । दूसरे दिन उसे बेचने के लिये बाजार में आये एवं कहने लगे राई लेलो ! राई लेलो ! सेठ ने हंसकर कहा—भाई, राई के भाव तो रात ही चले गये । चोर समझकर शर्मिन्दा हुये ।

९ टीपे थी बगड्यु तलवार थी सुधरे नहिं ।
बूंद थी बगड़ी बात होज थी सुधरे नहिं ॥

—गुजराती कहावतें

दिल्ली-दरबार जुड़ रहा था । गाँधी ने आकर गुलाब का इत्र भेंट किया । बादशाह उसे ज्योंही देखने लगा, शीशी हाथ से छूट गई और इत्र ढुल गया । बादशाह ने ढुले हुये इत्र को दोनों हाथों से लेकर अपनी दाढ़ी के लगा लिया । बीरबल को कुछ हंसी आ गई । देखकर बादशाह ने सोचा कि इसने मुझे कंजूस समझा है । अपनी उदारता दिखाने के लिये बादशाह ने इत्र का एक होज भरवा कर उसमें हाथी के कलभ (छोटे-छोटे बच्चे) छोड़े और होज के चारों ओर दरबार लगाया । कलभ सूँड़ें भर-भर कर इत्र उछालने लगे और सभासद वाह-वाह कहने अगे लेकिन बीरबल चुप था । बादशाह ने हँसकर उससे पूछा—बीरबल ! हथिया क्या करते हैं ? बीरबल कब चूकने वाला था । उसने तपाक से कहा—हुजूर ! अवसर के चूके गोते खा रहे हैं ।

१० **वे पानी मन ताण गये**—सेठ ने सेठानी से कहा—जरा पानी लाओ । उसने मुँह सिकोड़ कर उत्तर दिया—परों के मेहँदी लगा रखी है अतः अभी नहीं ला सकती । सेठ ने क्रुद्ध होकर दूसरी शादी करली । अब तो बड़ी का मान-तान बिल्कुल घट गया । घर में सारा हाल-हुक्म छोटी का ही चलने लगा । एक दिन पुनः सेठ ने पानी मांगा । छोटी ने तो सुना-अनुसना कर दिया । बड़ी ने यद्यपि

मेहँदी लगा रखी थी, फिर भी उसकी परवाह न करके पानी का लोटा ले आई। पति को पिछला किस्सा याद आ गया और उसने निम्नलिखित दोहा कहा--

गहली पहली समझी नहीं, वे मेहँदी के रंग कहां गये ?
अब तो पानी लाई प्यारी ! वे पानी मन ताण गये ॥

११ वे पानी मुल्तान गए—

एक बार कबीर जी संत रैदास के दर्शनार्थ गए। उन्होंने जल पीने के लिए कहा। कबीर ने आनाकानी की क्योंकि रैदास हरिजन थे। आखिर उनका आग्रह टाल न सके और जल पीना स्वीकार किया। ज्यों ही वे अपना धोबा मांडकर बैठे, रैदास कमंडल से जल डालने लगे। कबीर ने ग्लानि के कारण उसे न पीकर नीचे से निकाल दिया। उनका कुर्ता पानी से भीग गया। फिर घर आकर अपनी पुत्री कमाली (जो मुल्तान ब्याही हुई थी) से कहा— बेटी ! जरा इस कुर्त्ते को धो डालो ! कमाली ने ज्यों ही उसे धोया, कमाली को ज्ञान हो गया और वह कहने लगी— पिताजी ! जिससे आप ग्लानि कर रहे हैं, वह तो अमृत है। देखिये ! इसके स्पर्शमात्र से मुझे आत्म-ज्ञान हो गया।

कबीर के मन में अपनी गल्ती का बहुत पश्चात्ताप हुआ। वे पुनः सन्त रैदास के समीप गये। ज्ञान-चर्चा के बाद जल पिलाने की प्रार्थना की। हँसकर सन्त ने कहा—कबीर जी ! वह पानी तो मुल्तान चला गया अर्थात् कमाली के पास पहुँच गया। अब नहीं मिल सकता।

—**'दादूपंथी साधु से' श्रुत**

१२ **चमेली का चौसरा**–वसंत क्रीड़ा करते समय माली ने एक फलों की टोकरी श्रीकृष्ण को भेंट की। कृष्ण ने उसमें से गूंथे हुए फलों के अनेक आभूषण देकर रानियों को सन्तुष्ट किया। एक चमेली के फलों का चौसरा (चार लड़ियों का हार) सर्वोत्तम था। उसे हाथ में लेकर

कृष्ण सबको दिखाने लगे। सत्यभामा ने कहा—क्या बार-बार दिखा रहे हैं ? जिसको देना हो दे दीजिये ! कृष्ण ने रुक्मिणी के गले में डाल दिया। सत्यभामा क्रुद्ध होकर उठ गई और जाकर वन में एक वृक्ष के नीचे बैठ गई। इतने में उस वृक्ष पर तोता आ बैठा राधेकृष्ण-राधेकृष्ण बोलने लगा। रुष्ट सत्यभामा ने उसे रोकते हुये कहा—

एक समैं लाडलीया कान्ह सों गुमान करी,
जाय बैठी वृक्ष तल गुस्सो कर गहरे !
चंपक की डार पर, कीर तब बोल्यो आय,
राधेकृष्ण - राधेकृष्ण - राधेकृष्ण कहरे !
अरे कीर ! झूठे-झूठे काहे तू मचावै शोर,
उड़ाय दैऊँ यहां सेती चुप्प क्यूं न रहरे !
तो हि जो युगलनाम लेवे ही की टेव परी,
तो राधाकृष्ण छोड़कर कुब्जाकृष्ण-३ कहरे !

फिर सत्यभामा अपने महल में आकर कोप-घर में सो गई। इधर रुक्मिणी के कहने से कृष्ण उसे मनाने गए। उस समय निम्नलिखित प्रश्नोत्तर हुए।

खोल किवाड़ रु वार निहार हु,
नाथ हूँ, तो निज आसन जावो !
लाल हूँ, रोष भया किन ऊपर,
श्याम हूँ, तो विधि पै दुख गावो !
मैं नट नागर, वंश चढ़ो,
अलि ! केशव हूँ, मुझ धाम न मावो !
पीव हूँ गोरस है न यहाँ जल,
हूँ हरि तो वन मांझ सिधावो !

कृष्ण नाराज होकर वापस लौट गये। तब दासियों की सत्यभामा से निम्नलिखित बातचीत हुई—

आये थे नाथ मनावन कूं,
भोली ! कहा कियो तूं तो नेक न बोली।
वे ब्रजनाथ ग्रह्यो तेरो हाथ,
हिया हुते चित्त की गांठ न खोली।
जावो सखी ! घर बैठ रहो तुम,
काहे को बात बनावत भोली।
कान्हा कहा मेरो ठाकुर है,
हम बोली-न बोली-न बोली न बोली ॥

फिर कृष्ण ने कुछ समय के बाद सत्यभामा को प्रसन्न करने के लिये मोती का हार पहनाया। तब उसने कहा—

वन में समाज भयो राग-रंग थाट थयो,
आन के इकट्ठो भयो संग जु सहेली को।
भूषन - वसन - पान दीन्हें करि मान - मान,
सब में अनादर कियो मोय जू अकेली को।
जोवन के जोरा देत अंखिन के तोरा,
तुम राखत हो भोरा हम नागर नवेली को।
औसर चुकाय आज हार देत मोतिन को,
काल क्यूं न दीन्हों नाथ ! चोसर चमेली को।

—भाषाश्लोकसागर

२२ परिस्थिति

१ परिस्थितियाँ जीवन को बदल देती हैं।

—हालीबटेन

२ प्रतिकूल परिस्थितियाँ और कुछ नहीं, केवल चाबुक के प्रहार हैं। वस्तुतः आगे बढने के लिए हमें इनकी आवश्यकता थी।

—हिटलर

३ मनुष्य को मारने वाला हिंसक माना जाता है किन्तु युद्ध की परिस्थिति में वही शूरवीर। चाकू मारने वाला बदमाश कहलाता है किंतु आपरेशन के समय डाक्टर उपकारी।

—प्राचीन संग्रह से

४ एक परिस्थिति में जगत का श्रेष्ठ योद्धा हिटलर आज अदूरदर्शी कहा जाने लगा।

—संकलित

५ नेहरू परिस्थितिवश हिन्दू-राज्य की स्थापना नहीं कर सके।

२३ स्वभाव

१ स्वभावो मूर्ध्नि वर्तते —हितोपदेश १।२०

स्वभाव सभी गुणों में आगे रहता है।

२ स्वभाव की बहुत-सी विशेषताएँ जन्मगत होती हैं। मनुष्य अपने मस्तिष्क के $\frac{1}{8}$ भाग पर शासन करता है। $\frac{7}{8}$ भाग पर तो स्वभाव से ही शासित होता है। यह भी मान लेना ही चाहिए कि ७५ प्रतिशत बुद्धि-भाग जन्मगत-स्वभावगत होता है और विद्या-अभ्यास आदि से व्यक्ति मात्र २५ प्रतिशत उसमें मिलाता है।

—आत्मविकास पृष्ठ २०८

३ कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता।
वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वभावेन भवन्ति हि।

कांटों में तीखापन, मयूर में विचित्रपन और मुर्गों में तरह-तरह के रंग-स्वभाव से ही होते हैं।

४ स्वभाववादियों का मत है कि अग्नि में उष्णता, जल में शीतलता, सिंह में शूरता, शशक में भीरुता, हंस में सरलता, बगुले में कपट, कोयल के स्वर में मधुरता, काक के स्वर में कटुता, सर्प की दाढ़ा में विष, मणि में विष हरने की शक्ति, ईख में मिठास, नीम में कड़वास, काष्ठ में तरने की शक्ति, लोह-पत्थर में तैरने की अशक्ति, कान में सुनने की शक्ति, आँख में देखने की शक्ति, नाक में सूंघने की शक्ति, जीभ में स्वाद लेने की शक्ति, एवं स्पर्श में छूने की शक्ति, नरक में दुख, स्वर्ग में सुख, भव्य-जीव मोक्ष जाने योग्य, अभव्य-जीव मोक्ष के अयोग्य, धर्मास्तिकाय आदि द्रव्यों में गति सहायकता आदि गुण भी स्वभाव से ही होते हैं।

स्त्री के मूँछ, बंध्या के पुत्र, हथेली में केश एवं जीभ में हड्डी प्रयत्न करने पर भी नहीं होते क्योंकि स्वभाव नहीं है।

५ हन्तीति मन्यते कश्चिद्, न हन्तीत्यपि चापरः।
स्वभावतस्तु नियतौ, भूतानां प्रभवात्ययौ।

—महाभारत शान्तिपर्व २५।१६

कोई मानता है कि अमुक-अमुक को मारता है एवं दूसरा मानता है कि नहीं मारता, किन्तु निश्चित रूप से प्राणियों का जन्म-मरण स्वभाव से ही होता है।

६ एकोदरसमुद्भूता, एकनक्षत्रजातकाः।
न भवन्ति समाः शीले, यथा बदरिकण्टका।

—चाणक्यनीति ४।५

एक उदर से उत्पन्न एवं एक नक्षत्र में पैदा हुए मनुष्य बदरी वृक्ष के कांटों की तरह समानस्वभाव वाले नहीं होते।

७ स्वभाव चार प्रकार का है:—(१) वस्तु स्वभाव (२) देशस्वभाव (३) जातिस्वभाव (४) कालस्वभाव।

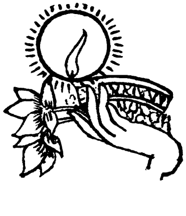

२४ वस्तुओं का स्वभाव

१ कूपोदकं वटच्छाया, श्यामा स्त्री चेष्टकागृहम् ।
शीतकाले भवेदुष्ण-मुष्णकाले च शीतलम् ।

—हितोपदेश १।२०४

कुएँ का पानी, वटवृक्ष की छाया, श्याम स्त्री, ईटों का मकान—ये सर्दी में गर्म और गर्मी में ठंडे रहते हैं ।

२ सीया तीया पाणिया, तीनों एक स्वभाव ।
ऊँचा-ऊँचा छोड़कर, नीचा सेती भाव ।

० राया वाया वानरा, तीनों एक स्वभाव ।
नीचा-नीचा छोड़कर, ऊँचा सेती भाव ।

—राजस्थानी दोहे

३ मन मोती अरु दूध ये, तीनूं एक स्वभाव ।
फाट्यां पाछे ना मिलै, कोड़ां करो उपाय ।

४ रक्तत्वं कमलानां, सत्पुरुषाणां परोपकारित्वम् ।
असतां च निर्दयत्वं, स्वभाव-सिद्धि त्रिषु त्रितयम् ।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ ८७

कमलों में रक्तता, सत्पुरुषों में परोपकारिता और दुष्टों में निर्दयता स्वभाव से ही सिद्ध है ।

५ जले तैलं खले गुह्यं, पात्रे दानं मनागपि ।
प्राज्ञे शास्त्रं स्वयं याति, विस्तारं वस्तुशक्तितः ।।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ १६२

पानी में तेल, खल पुरुष के पेट में गुप्त बात, सुपात्र को दिया हुआ थोड़ा भी दान और प्राज्ञ पुरुषों में शास्त्र-ज्ञान ये सब चीजें अपने स्वभाव से तत्काल फैल जाती हैं ।

६ दानादि प्रकृतिः प्रायेण ब्राह्मणानाम् ॥३१॥
बलात्कारस्वभावः क्षत्रियाणाम् ॥३२॥
निसर्गतः शाठ्यं किरातानाम् ॥३३॥
ऋजु-वक्रशीलता सहजा कृषीबलानाम् ।३४।

—नीतिवाक्यामृत ७

ब्राह्मणों का स्वभाव प्रायः दान की अपेक्षा रखना, ईश्वर आदि का पूजन करना और पढ़ना-पढ़ाना आदि का होता है ॥३१॥ क्षत्रियों का स्वभाव दूसरों पर बलात्कार करने का होता है ॥३२॥ किरातों-वणिकों का स्वभाव प्रायः छल-कपट करने का होता है ॥३३॥ किसानों तथा (शूद्रों) के स्वभाव में प्रायः सरलता और कुटिलता मिली हुई होती है ॥३४॥

७ **भोजन का स्वभाव** :—

छव्विहे भोयण परिणामे पण्णत्ते, तं जहा,
मणुण्णे, रसिए, पीणणिज्जे, बिंहणिज्जे, मयणिज्जे, दीवणिज्जे ।

—स्थानांग ६।५३३

भोजन का परिणाम — स्वभाव छह प्रकार का है । यथा—

१ **मनोज्ञ** — मन को अच्छा लगनेवाला ।
२ **रसिक**—माधुर्यादिरस युक्त ।
३ **प्रीणनीय**—तृप्ति करने वाला तथा शरीर के रसों में समता लाने वाला ।
४ **बृंहणीय**— शरीर की वृद्धि करनेवाला ।
५ **मदनीय**—कामोत्तेजक ।
६ **दीपनीय**—जठराग्नि को प्रदीप्त करनेवाला ।

८ **विष का स्वभाव** :—

छव्विहे विसपरिणामे पण्णत्ते, तंजहा—
डक्के, भुत्ते, निवइए, मंसाणुसारी, सोणियाणुसारी, अट्ठिमिजाणुसारी ।

—स्थानांग ६।५३४

विष का परिणाम-स्वभाव छह प्रकार का है। यथा—

१ **दष्ट**—सर्प आदि के डंक से पीड़ा पहुँचाने वाला।

२ **भुक्त**—खाने पर पीड़ा पहुँचाने वाला।

३ **निपतित**—शरीर पर गिरते ही पीड़ित करने वाला।

अथवा **दृष्टिविष**। दृष्टि फेंकते ही असर करने वाला।

४ **मांसानुसारी**—मांस में व्याप्त होने वाला।

५ **शोणितानुसारी**—रक्त में व्याप्त होने वाला।

६ **अस्थिमज्जानुसारी**—हड्डी और चर्बी में व्याप्त होने वाला।

२५ स्वभाव का परिवर्तन कठिन

१ यदिस्याच्छीतलो वह्निः, शीतांशुर्दहनात्मकः ।
न स्वभावोऽत्र मर्त्यानां, शक्यते कर्तुमन्यथा ॥

—पंचतंत्र १।२८१

कदाचित् अग्नि शीतल हो जाय एवं चन्द्रमा अग्निरूप हो जाय, तो भी मनुष्यों का स्वभाव नहीं बदलता ।

२ स्वभावो नोपदेशेन, शक्यते कर्तुमन्यथा ।
सुतप्तमपि पानीयं, पुनर्गच्छति शीतताम् ॥

—पचतंत्र १।२८०

उपदेश देने पर भी स्वभाव नहीं बदला जा सकता । देखो ! उबला हुआ जल भी पुनः ठंडा हो जाता है क्योंकि उसका मूल स्वभाव शीतल है ।

३ यः स्वभावो हि यस्यास्ति, स नित्यं दुरतिक्रमः ।
श्वा यदि क्रियते राजा, तत् किं नाश्नात्युपानहम् ॥

—हितोपदेश ३।५८

जिसका जो स्वभाव है, उसे बदलना कठिन है । कुत्ते को राजा बना दिया जाये तो भी वह जूता खाना नहीं छोड़ता ।

४ कुत्ता राज बहालिये फिर चक्की चट्टे ।

—पंजाबी कहावत

कुत्ते को राजा बना दे तब भी उसका चक्की चाटने का स्वभाव नहीं जायेगा ।

५ परसी पारस भेटिया मिटग्या लोह - विकार ।
तीन बात तो ना मिटी, बाँक धार अरु भार ॥

६ स्वभाव नुं ओसड़ नही। —**राजस्थानी कहावत**

७ जाति स्वभाव न जाय, रांघड़ के बोदो हुवै।
आरण बाज्याँ आय, रीठ बजाड़े राजिया !

—**सोरठा-संग्रह**

८ लंका विजय के उपलक्ष्य में हनुमान के निषेध करने पर भी राम ने बंदर-सैनिकों को आम का प्रीतिभोज दिया। प्रत्येक को एक-एक आम दिया जा रहा था। भूल से एक थाली में दो आम गिर गए। बस, गिरते ही आस-पास के वानर उछल पड़े और सभी दो-दो के लिए धूम मचाने लगे। राम ने उन्हें शान्त करना चाहा, तब हनुमान ने कहा—

प्रकृतिश्च स्वभावश्च, न मे मुञ्चति राघव !
अहं मुञ्चामि प्रकृतिं, प्रकृतिर्मां न मुञ्चति ॥

महाराज, हमारी बंदर जाति स्वभाव से ही चंचल है। हम उस प्रकृति को छोड़ना भी चाहें तो भी प्रकृति हमें नहीं छोड़ती।

२६ स्वभाव न छोड़नेवाले

१ दुष्टा न जहन्ति दौष्ट्यं, सुजना नूनं तथैव सौजन्यम् ।
तोयान्तर्गतवृश्चिक - तन्निष्कासक-मनुष्यदृष्टान्तः ।।

—**धनमुनि**

दुष्ट दुष्टता नहीं छोड़ते, इसीप्रकार सज्जन अपनी सज्जनता भी नहीं छोड़ते । यह बात पानी में तड़फते बिच्छू एवं उसको निकालनेवाले मनुष्य के दृष्टान्त से समझनी चाहिए ।

२ मणिर्नाऽहेर्दोषान् स्पृशति नहि सर्पो मणिगुणान् ।

मणि और सांप साथ रहते हैं, फिर भी उनका स्वभाव नहीं बदलता । मणि सांप के दोष नहीं लेता और सांप मणि के गुण नहीं लेता ।

३ काजल तजै न श्यामता, मोती तजै न श्वेत ।
दुर्जन तजै न दुष्टता, सज्जन तजै न हेत ।।

४ चन्दन धोई माछली, पण छूटी नहीं गंध ।

—**राजस्थानी कहावत**

५ जिसका पड्या स्वभाव, जासी जीवसूं ।
नीम न मीठो होय, सींचो गुड़-घीवसूं ।।

—**राजस्थानी पद्य**

२७ स्वाभाविकता नहीं छिपती

१ टैगोर ने गीताञ्जलि लिखी। एक अंग्रेज ने उसमें पांच जगह संशोधन करवाया। इंग्लैंड में पढ़ते समय साहित्यकारों ने कहा—ग्रंथ अत्युकृष्ट है किंतु इसमें पाँच जगह स्वाभाविक लय खंडित होती है।

२ अकबर बादशाह के यहां पाँच साधु आए। जाति बतलाने से इन्कार किया। बीरबल ने उनसे कविता करवा कर जाति का निश्चय किया—वे क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं वर्णशङ्कर थे। देखिए उनकी कविताएं;

ब्राह्मण—

राम नाम लड्डू, गोपाल नाम घी।
हरि का नाम मिसरी, तू घोल-घोल पी।

क्षत्रिय—

राम नाम समशेर पकड़ कर, कृष्ण कटारा बाँध लिया।
दया धर्म की ढाल बनाकर, जम का द्वारा जीत लिया॥

वैश्य—

साहिब मेरा बाणिया, सहज करे व्यापार।
बिन दंडी बिन पालडै, तोले सब संसार॥

शूद्र—

राम झरोखे बैठके, सबका मुजरा लेत।
जाकि जैसी चाकरी, वैसा उसको देत॥

वर्णशंकर—

जात-पाँत पूछै नहि कोई।
हरि को भजै सो हरिसम होई॥

उपरोक्त कविताओं में जाति स्वभाव स्पष्ट रूप से झलक रहा है। ●

१ सत्त्व-रज-तम-इन तीनों गुणों की सम-अवस्था को प्रकृति एवं विषमावस्था को विकृति कहते हैं।

—सांख्यदर्शन

२ प्रकृष्टवाचकः प्रश्च, कृतिश्च सृष्टिवाचकः।
सृष्टौ प्रकृष्टा या देवी, प्रकृतिः सा च कीर्तिता। ५।
गुणे प्रकृष्टे सत्त्वे च, प्रशब्दो वर्तते श्रुतौ।
मध्यमे कृश्च रजसि, तिशब्दस्तमसि स्मृतः। ६।
त्रिगुणात्मस्वरूपा या, सर्वशक्तिसमन्विता।
प्रधाना सृष्टिकरणे, प्रकृतिस्तेन कथ्यते। ७।

—ब्रह्मवैवर्त पुराण अ० २

प्र शब्द का अर्थ उत्कृष्ट है और कृति का अर्थ सृष्टि है। जो देवी सृष्टि रचना में उत्कृष्ट है, वह **प्रकृति** है। श्रुति में '**प्र**' का अर्थ सत्त्वगुण, "**कृ**" का रजोगुण और '**ति**' का तमोगुण कहा है। जो त्रिगुणात्मक है, सर्वशक्तियुक्त है एवं सृष्टिरचना में प्रमुख है, उसे प्रकृति कहते हैं।

३ प्रकृतेर्महाँस्ततोऽहंकार - स्तस्माद् गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि ॥

—सांख्यकारिका २२

प्रकृति से महान् (बुद्धि), बुद्धि से अहंकार, अहंकार से पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन, पाँच तन्मात्रायें—इन सोलह का गण (समूह) उत्पन्न होता है, तथा तन्मात्राओं से पृथ्वी आदि पाँच भूत उत्पन्न होते हैं।

४ अजामेका लोहित - शुक्ल - कृष्णां,
बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः।

—श्वेताश्वतरोपनिषद ४/५

यह प्रकृति अनादि है एवं रजोगुण, सत्त्वगुण तथा तमोगुणवाली असंख्य प्रजा को उत्पन्न करनेवाली है।

५ प्रकृतिः सर्वोत्पत्तिमत्तां निमित्तम्,
अन्ध-पङ्गुवत् प्रकृति-पुरुषसंयोगः।

—स्याद्वादमंजरी १५ टीका

उत्पन्न होनेवाली समस्त वस्तुओं का निमित्तिकारण प्रकृति है। अन्धे और पांगले की तरह प्रकृति एवं पुरुष का संयोग है।

६ प्रकृति मिले मन मिलत है, अनमिलते न मिलाय।
दूध दही तें जमत है, काँजी से फट जाय॥

—वृन्द कवि

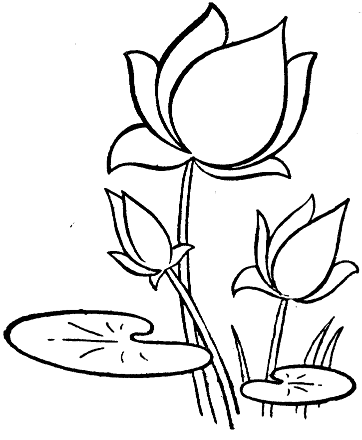

प्रकृति नहीं बदलती

१ या यस्य प्रकृतिः सा तस्य दैवेनापि नापनेतुं शक्येत ॥५३॥
सुभोजितोऽपि श्वा किमशुचीन्यस्थीनि परिहरति ॥५४॥
न खलु कपिः शिक्षाशतेनापि चापल्यं परिहरति ॥५५॥
इक्षुरसेनापि सिक्तो निम्बः कटुरेव ॥५६॥

—**नीतिवाक्यामृत २४**

जिसकी जैसी प्रकृति होती है, उसे विधाता भी दूर करने में असमर्थ है। ॥५३॥ अच्छी तरह भोजनादि द्वारा तृप्त हुआ भी कुत्ता हड्डियों को चबाना नहीं छोड़ सकता ॥५४॥ धैर्य धारण की सैकड़ों शिक्षाओं द्वारा समझाया गया भी बन्दर अपनी चंचल प्रकृति नहीं छोड़ सकता ॥५५॥ गन्ने के मीठे रस से सींचा गया नीम का पेड़ कडुआ ही रहता है। कभी मीठा नहीं होता ॥५६॥

२ स्वेदितो मर्दितश्चैव, रज्जुभिः परिवेष्टितः।
मुक्तो द्वादशभिर्वर्षैः श्वपुच्छः प्रकृतिं गतः।

—**हितोपदेश २ | १३८**

पसीना लाई गई, मली गई एवं बारह साल तक रज्जु से परिवेष्टित करके रखी गई भी कुत्ते की पूंछ छोड़ते ही स्वभाव को प्राप्त हो गई अर्थात् बाँकी हो गई।

३ दोरड़ी बलै पण बल नहिं मूके।
कूतरा नीं पूंछड़ी भोंयमां दाटो पण बांकी न बांकी।

—**गुजराती कहावतें**

४ लहसुन के लिये न्यारी खात कसतूरी डारी,
अंबर की क्यारी वारी चन्दन करेवे की।

हरख भरानी भरी कंचन-कलश रानी,
सींच्यो इह सानी पानी गंग ही के देवे की।
दई खसबोई त्यों-त्यों चल्यो बदबोई होई,
भूल हूं न करे कोई इच्छा बोई लेवे की।
हा! हारो उपाई करो **किसन** उपाई दाई;
प्राण क्यूं न जाई पर प्रकृति न जेवे की।

५ प्राण ने प्रकृति साथे जवानां।

—गुजराती कहावत

६ अवनी रोग अनेक, ज्यांरो विधि कीधो जतन।
इण परकतरी एक, रची न ओखध राजिया।

—सोरठा संग्रह

३० आदत

१ आदत के चार लक्षण हैं :—(१) समानता (२) सुगमता (३) रुचिकरता (४) ध्यानस्वातन्त्र्य ।

(क) **समानता**—आदत से किए हुए काम समान होते हैं, बोलना, चलना, देखना, उठना, खाना-पीना आदिवत् ।

० अटेन्सन—(सावधान) कहते ही फौजी-सिपाही के दोनों हाथों से सामान नीचे गिर पड़ा ।

(ख) **सुगमता**—लिखना, पढ़ना, बोलना, दौड़ना आदि जो काम कठिन लगते हैं, आदत पड़ने पर वे सारे सुगम हो जाते हैं ।

(ग) **रुचिकरता** –वन्दना-भाषण आदि अरुचिकर कार्य भी आदत पड़ जाने के बाद रुचिकर बन जाते हैं ।

(घ) **ध्यानस्वातन्त्र्य**—प्रारम्भ के समय कविता आदि में त्रुटियाँ होती हैं किन्तु अभ्यास हो जानेपर ध्यान टिकने लगता है एवं स्खलना नहीं होती ।

—सरल मनोविज्ञान से

२ **आदत डालने के चार नियम—**

(१) **दृढ़संकल्प करना**
(२) **कार्यशीलता**—वह कार्य करने लग जाना
(३) **संलग्नता**—उस कार्य में लीन हो जाना
(४) **अभ्यास**—उसको बार-बार करना

—सरल मनोविज्ञान से

३ आदत रस्सी की तरह है। हर रोज हम एक बट देते हैं और अन्त में हम इसको तोड़ नहीं सकते ।

—मान

४ धागों का बना रस्सा, तो उसका टूटना मुश्किल।
जो आदत पड़ गई पक्की, तो उसका छूटना मुश्किल॥

—हिन्दी पद्य

५ बाणीडै री बाण न जाय, कुत्तो मूतै टांग उठाय।

० कबूतर ने कूवो ही सूझै,

० चूहे रा जाया बिल ही खोदसी।

—राजस्थानी कहावतें

६ जैसे कुल में ऊपजै, तैसा करे अभ्यास।
नन्हो मच्छो जल तरै, पंखी उड़ै आकाश।

७ वादड़ियां सजादड़ियां, निभन सिरांदे नाल।
जां जह्मत जांदी दारुआं,पर आदत सिर दे नाल॥
पड़ी हुई आदत नहीं हटती। —पंजाबी कहावतें

८ बारह कोसां बोली पलटै, फल पलटै पाकां
जरा आयां केस पलटै, लखण न पलटै लाखां

—राजस्थानी पद्य

९ अखण गया, दखण गया, पण लखण न गया।

० दादर जाय चूवे[1] ने, टेव जाय मूअे।
झोड़[2] जाय भूवे[3] ने, टेव जाय मुअे।

—गुजराती कहावतें

१० (१) अमानत में खयानत करना (२) बातों में झूठ बोलना
(३) वायदे को पूरा न करना (४) लड़ाई में गालियां बोलना-
इन चार आदतोंवाला खालिस मुनाफिक है।

—हजरत बुखारी और मुस्लिम

११ बुरी आदतों को अगर रोका न जाए तो वे शीघ्र लत बन जाती हैं।

— संत आगस्तिन

नोट—१ नारियली का अर्क (२) भूत-प्रेत का लगाव (३) भोपाओं द्वारा

३१ कुदरत

१ कुदरत के कानून न्याय ही नहीं, भयंकर हैं। उनमें दुर्बल पर दया नहीं है
—लांग फेलो

२ कुदरत कोई गलतियाँ माफ नहीं करती। उसकी हां में हां और ना में ना।

३ **गुरु-शिष्य संवाद:—**

छोटी-छोटी बेलों के बड़े-बड़े मतीरे और बड़े-बड़े आम्रवृक्षों के छोटी-छोटी केरियाँ देखकर शिष्य ने कहा—कुदरत के घर में अन्धेर है। गुरु बोले—तेरे समझने में भूल है। परस्पर विवाद बढ़ने ही लगा था कि एक केरी टूटकर शिष्य के सिर पर पड़ी एवं शिष्य चिल्लाया। गुरु ने कहा-केरी की जगह मतीरा आ गिरता तो ?

४ **अंधेर नहीं देर है:—**

छोटे से कस्बे में एक सेठ-सेठानी पुत्र के लिए बिलख रहे थे। एक योगी ने कहा—सेठ! पड़ौसी के बच्चे के खून से सेठानी को नहला दो, पुत्र हो जाएगा। सेठ तो इस दुष्कर्म से कांपने लगा लेकिन सेठानी ने गुप्त रूप से यह पाप कर डाला। वह गर्भवती हो गई, सवा नौ महीनों के बाद एक तेजस्वी पुत्र हुआ। सेठ घर से निकल गया और पागल की तरह बकने लगा—अंधेर है! अंधेर है। तत्त्व यह था कि कुदरत के राज्य में न्याय नहीं है। पापी मौज उड़ा रहें और धर्मी दुःख पा रहे हैं इधर सेठानी बधाइयां बांटती हुई परम आनन्द मनाने लगी। पुत्र बड़ा हुआ, पढ़ा-लिखा और ब्याहा गया। उसके भी चार-पुत्र हो गए। दादी पोतों के लाड़-प्यार में पागल हो रही थी और सेठजी अन्धेर है—अन्धेर है की टेर लगाते हुए गाँवों-नगरों में भटक रहे थे। एक दिन सेठानी बेटा बहू एवं पोतों के साथ रसोई में बैठी थी अचानक भूकंप आया और

उनका समूचा मकान जमीन में धंस गया। वे सारे के सारे मर गए। भटकते हुए सेठ से किसी स्वजन ने सेठानी के समाचार सुनाए। सेठ खिल-खिलाकर हंसा और कहने लगा—**अन्धेर नहीं देर है—अन्धेर नहीं देर है!** (कुदरत के राज्य में अन्धेर नहीं हैं, कुछ देर तो हो सकती है।) अच्छा हुआ पापिनी को पाप का फल मिल गया।

—सन् १९३४ बिहार-प्रान्त में घटी हुई घटना।

दूसरा कोष्ठक

१ उद्यम

१ उद्योगः पुरुषलक्षणम् ।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

उद्यम करना पुरुष का लक्षण है ।

२ उद्योगे नास्ति दारिद्र्यम् —चाणक्यनीति ३।११

जहाँ उद्यम है वहाँ दरिद्रता नहीं रह सकती ।

३ दैवमुद्यमायत्तम् ।

भाग्य उद्यम के आधीन है ।

४ नास्त्युद्यमसमो बन्धु-र्यंत्कृत्वा नावसीदति ।

—भर्तृहरिनीतिशतक ८७

उद्यम के समान कोई बन्धु-स्वजन नहीं है, जिसके करने से व्यक्ति नहीं सीदाता ।

५ उद्योग प्रत्यक्ष है और भाग्य अनुमान है । अनुमान की अपेक्षा प्रत्यक्ष का महत्त्व अधिक है । —गुरु वशिष्ठ

६ उद्यमः साहसं धैर्यं, बलं बुद्धिः पराक्रमः ।
षडेते यत्र विद्यन्ते, तस्माद्देवोऽपि शङ्कते ।।

—सुभाषितरत्नभाण्डागार पृ० ८६

उद्यम, साहस, धैर्य, बल, बुद्धि और पराक्रम—ये छः जिसके पास होते हैं, उससे देव भी डरता रहता है ।

७ यथैकेन न हस्तेन, तालिका संप्रपद्यते।
तथोद्यमपरित्यक्तं न फलं कर्मणः स्मृतम् ॥

—पञ्चतन्त्र २।१३५

जैसे—एक हाथ से ताली नहीं बजती, वैसे ही उद्यम के बिना कर्मों का फल नहीं मिलता।

८ विद्या धन उद्यम बिना, कहो जु पावै कौन,
बिना डुलाये ना मिले, ज्यों पंखे की पौन।

—कविवृन्द

९ फरेल तो चरेल —मराठी कहावत

० फिरे सो चरे —राजस्थानी कहावत

० फरे ते चरे, बांध्युं भूखे मरे —गुजराती कहावत

१० रोयां बिना माँ ही बोबो को देवैनी

० संदेशां खेती को हुवैनी

० बोलै जिकै रा बूमडा (बेर) बिकै,
नहीं जिकै री जवार ही पड़ी रेवै।

—राजस्थानी कहावतें

११ जब तक जीना तब तक सीना। —हिन्दी कहावत

१२ नो थिंग वेन्चर नथिंग हैव —अंग्रेजी कहावत

उद्यम के बिना कुछ नहीं मिलता

२

उद्यम से कार्यसिद्धि

१ उद्यमेन हि सिद्धयन्ति, कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य, प्रविशन्ति मुखे मृगाः।

—पञ्चतन्त्र २।१३८

उद्यम करने से ही काम सिद्ध होते हैं मनोरथ मात्र से नहीं होते। सोए हुए सिंह के मुख में मृग अपने आप नहीं घुसते। उसको उद्यम करना ही पड़ता है।

२ उद्यमेन हि सिद्धयन्ति, कार्याणि न मनोरथैः।
कातरा इति जल्पन्ति, यद्भाव्यं तद् भविष्यति।

—पञ्चतन्त्र २।१३९

उद्यम से ही काम सिद्ध होते हैं मनोरथ मात्र से नहीं। जो होनहार है, वही होगा—यह कायर व्यक्तियों का कथन है।

३ **उदयराज** उद्यम किए, सब कुछ हो तैयार।
गाय-भैंस घर में नहीं, दूध पिवे मंजार।

४ गच्छन् पिपीलको याति, योजनानां शतान्यपि।
अगच्छन् वैनतेयोऽपि, पदमेकं न गच्छति।

चलता हुआ कीड़ा, सैंकड़ों योजन क्षेत्र पार कर देता है और न चलने वाला गरुड़ एक कदम भी नहीं सरकता।

५ फालो दी रिवर एन्ड यू विल गो टू दी सी।

—**अंग्रेजी कहावत**

पूछते-पूछते लंका जाय।

६ आलसियों के भाग्य में, यश प्रताप नहीं होय।
नाम-काम संसार में, उद्यम से ही होय।

७ उद्यम से इस जगत में, क्या-क्या किया न जाय ?
सरकसवाले शेर को, बना डालते गाय।

—दोहासंदोह

८ उद्यम तोता-मैना आदि पक्षियों को भी पढ़ा देता है।

९ पुरुष की ७२ एवं स्त्री की ६४ कलाएँ तथा विचित्र विद्याएँ उद्यम से ही पढ़ी जाती हैं, मिट्टी से सोना, सीप से मोती, एवं पत्थर से रत्न, उद्यम द्वारा ही निकाले जाते हैं। उद्यम से राम ने लंका जीती ! कृष्ण द्रौपदी को लाए एवं केशीस्वामी ने प्रदेशीराजा को आस्तिक बनाया। भगवान महावीर भी उद्यम पर विशेष बल देते थे।

—उद्यमवादी

१० व्रजत्यधोऽधोयात्युच्चै—र्नरः स्वैरेव चेष्टितैः।
अधः कूपस्य खनक, ऊर्ध्वं प्रासादकारकः।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ ९०

मनुष्य अपनी चेष्टाओं के अनुसार ही ऊपर या नीचे जाता है। जैसे—कुआँ खोदनेवाला नीचे उतरता है एवं प्रासाद बनानेवाला ऊपर चढ़ता है।

३ उद्यम की प्रेरणा

१ अभितुर पारं गमित्तए।

—उत्तराध्ययन १०।३४

हे गौतम! संसार समुद्र से पार होने के लिए शीघ्रता करो! किनारे पर क्यों रुक रहे हो?

२ हो सकता है तुम्हारा मोती तुम्हारे एक और गौते की इन्तजार कर रहा हो।

३ कर्मानुरूपः प्रयत्नः वयोऽनुरूपो वेषः।

—कौटलीय-अर्थशास्त्र

कार्य के अनुरूप प्रयत्न-उद्यम होना चाहिए और अवस्था के अनुसार वेष रखना चाहिए।

४ अन्तःकरण की पवित्रता, दृढ़निश्चय और धीरवृत्ति, बस इतनी पूंजी से उद्योग शुरू कर देना चाहिए।

—विवेकानंद

५ कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।

—गीता २।४७

अनासक्तभाव से कर्म—उद्यम करने का ही तुझे अधिकार है। फल की इच्छा करने का नहीं।

४ उद्यमी

१ उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी-
दैवं प्रधानमिति कापुरुषा वदन्ति।
दैवं विहाय कुरु ! पौरुषमात्मशक्त्या।
यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्र दोषः।

—पञ्चतन्त्र १।१३८

पुरुषों में सिंह के समान उद्यमी के पास लक्ष्मी अपने आप आती है। भाग्य ही मुख्य है – ऐसे कायर मनुष्य कहा करते हैं। अतः भाग्य को छोड़कर आत्मा की शक्ति लगाकर उद्यम करो ! प्रयत्न करने पर भी कार्य सिद्ध न हो तो कोई दोष नहीं।

२ श्रेयांसि सकलान्यनलसानां हस्ते नित्यसांनिध्यानि।

—दशकुमारचरित

उद्यमी पुरुषों के हाथ में समस्त कल्याण सदा रहते हैं।

३ मैंने आज तक ऐसा कोई आदमी नहीं देखा, जो प्रतिदिन जल्दी उठता हो, मेहनत करता हो और ईमानदारी से रहता हो, फिर भी दुर्भाग्य की शिकायत करता हो। —एडिसन

४ आस्ते भग आसीनस्यो-र्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः।
शेते निपद्यमानस्य, चरति चरतो भगः।
कलिः शयानो भवति, संजिहानस्तु द्वापरः।
उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति, कृतं संपद्यते चरन्।

—ऐतरेय ब्राह्मण ७।१५

बैठे हुए का सौभाग्य बैठा रहता है उठने पर खड़ा हो जाता है। पड़ा रहनेवाले का पड़ा रहता है। चलनेवाले का चलने लगता है। जो सो रहा है, वह **कलि है,** जो निद्रा से उठ बैठता है, वह **द्वापर** है। खड़ा

होनेवाला **त्रेता** है किन्तु जो श्रम—उद्यम करता है, वह **सत्ययुग** बन जाता है।

५ जिन ढूंढ़ा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।
मैं बपुरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ ॥ **—कबीर**

६ मैं मार्ग खोज लूंगा अथवा अपना मार्ग स्वयं बना लूंगा।
—बरले

७ आकाशवाणी हुई कि १२ वर्ष वृष्टि नहीं होगी। लोग निराश हुए। एक किसान खेत खेड़ता ही रहा आखिर मेघ देव बरस गये।
—जापानी-लोककथा

८ जीवन् मृतः कस्तु? निरुद्यमो यः। **—शंकर-प्रश्नोत्तरी ३**

प्रश्न—जीता हुआ भी मृतक के समान कौन है? **उत्तर**—निरुद्यमो

९ उद्यमियों ने क्या-क्या नहीं किया?

(तर्ज—आजादी का दीवाना था)

इस दुनियां में उद्यमी, क्या-क्या न कर सके।
सच पूछो तो उद्यमी, सब कुछ ही कर सके ॥ध्रुव॥
उद्यमी बनिये कहाँ के जा डटे कहीं,
बन गये लाखोंपति, क्या-क्या न कर सके ॥ इस० १॥
उद्यमी वैज्ञानिकों ने, गजब बनाये यन्त्र,
जिनके जरिये आज जन, क्या-क्या न कर सके ॥इस० २॥
गांधीजी ने हिन्द को आजाद कर दिया,
दुनिया में नाम कमा गये, क्या-क्या न कर सके ॥इस० ३॥
उद्यमी श्री भिक्षु ने कैसा निकाला पंथ,
डंका बजाया धर्म का, क्या-क्या न कर सके ॥इस० ४॥
धनमुनि तुम धर्म का, उद्यम करो सदा,
देखो तुम्हारी आत्मा, क्या-क्या न कर सके ॥ इस० ५॥

—उपदेश सुमनमाला

५ उद्यम से प्रकृति का परिवर्तन

१ **जैनी शेर**—मुलतान के गर्वनर मुजफ्फरखाँ ने श्रावक उदयरामजी को एक शेर का बच्चा दिया और कहा—इसे जैनी बनाकर लाओ। उन्होंने उसे दूध-खीर-रोटी आदि से पालकर तीन वर्ष के बाद हाजिर किया।

२ इटावा (मुहल्ला छिपैटी) निवासी श्री बलदेवबिहारी मिश्र के घर एक कुतिया पली हुई है। एक दिन उनके घर एक नन्हा (कुछ ही दिनों का) बिल्लो का बच्चा आ गया। दिन भर वह अपनी मां के लिए आवाज लगाता रहा, किन्तु बिल्ली नहीं आई। श्री मिश्र के सामने बिल्ली के बच्चे के भरण-पोषण की समस्या खड़ी हो गई। अकस्मात् उसकी नजर अपनी कुतिया पर पड़ी, जिसके कुछ दिन पूर्व ही बच्चे हुए थे। श्री मिश्र बिल्ली के बच्चे को लेकर कुतिया के पास गये। कुतिया बच्चे को देखते ही झपट्टा मारने को उद्यत हुई, किन्तु श्री मिश्र उसे बराबर-शान्त करते रहे। फिरी भी कुतिया का गुर्राना बन्द नहीं हुआ। धीरे-धीरे प्रयास करके श्री मिश्र ने बिल्ली के बच्चे को कुतिया के थन से लगा दिया। कुतिया ने प्रथम काफी विरोध किया, किन्तु बाद में शांत हो गई। बिल्ली का बच्चा कुतिया को ही अपनी मां समझकर थन से लगकर दूध पीने लगा। धीरे-धीरे कुतिया और बिल्ली के बच्चे में इतना प्रेम हो गया कि बिल्ली का बच्चा कुतिया को देखते ही दौड़कर उसके पास पहुंच जाता है और उसके थन से लग जाता है। कुतिया भी सहज-वैर बिसराकर सुखपूर्वक लेटकर उसको अपना दूध पिलाने लगती है। दोनों ही इस समय माता-पुत्रवत् प्रेमपूर्वक साथ-साथ रह रहे हैं।

—हिन्दुस्तान १४ दिसम्बर १९७२

पुरुषार्थ

१ कुरु-कुरु ! पुरुषार्थं निर्वृतानन्दहेतोः । —शुभचन्द्राचार्य

रे जीव ! मुक्तिसुखों के लिए पुरुषार्थ कर ।

२ पुरुषाकारमनुवर्तते दैवम् —चाणक्यसूत्र ९८

भाग्य पुरुषार्थ के पीछे चलनेवाला है ।

३ पुरुषाकारेण विना देवं न सिद्ध्यति —हितोपदेश प्रास्ताविका ३२

पुरुषार्थ किये बिना भाग्य कभी नहीं फलता ।

४ न खलु दैवमीहमानस्य कृतमप्यन्नं मुखे स्वयं प्रविशति ।।१०।।
न हि देवमवलम्बमानस्य धनुः स्वयमेव शरान् संधत्ते ।।११।।
आयुरौषधयोरिव दैवपुरुषकारयोः परस्परसंयोगः समीहितमर्थं साधयति ।।१४।। —नीतिवाक्यामृत २९

जिस प्रकार भाग्यवश प्राप्त हुआ अन्न भाग्य के भरोसे रहनेवाले व्यक्ति के मुख में स्वयं प्रविष्ट नहीं होता, किन्तु हस्तसंचालन आदि पुरुषार्थ द्वारा ही प्रविष्ट होता है ।

जिस प्रकार धनुष अपनी डोरी पर बाणों को स्वयं (पुरुष-प्रयत्न के बिना) स्थापन नहीं कर सकता, उसी प्रकार भाग्यवान भी पुरुषार्थ के बिना किसी कार्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता ।

जिस प्रकार आयु और योग्य-औषधि का मिलाप जीवन रक्षा करता है, उसी प्रकार भाग्य व पुरुषार्थ दोनों का संयोग मनोवांछित वस्तु उत्पन्न करता है ।

५ विक्लवो वीर्यहीनो यः, सदैवमनुवर्तते ।
—वाल्मीकिरामायण २।२३।१६

डरपोक और शक्तिहीन पुरुष ही भाग्य के पीछे चलता है ।

६ धीमन्तो वन्द्यचरिता, मन्यन्ते पौरुषं महत् ।
अशक्ताः पौरुषं कर्तुं, क्लीबा दैवमुपासते ।

—शुक्रनीति

वन्दनीय-चरित्रवाले विद्वान मनुष्य पुरुषार्थ को बड़ा मानते हैं। जो पुरुषार्थ करने में अशक्त एव क्लीब (कायर) हैं, वे ही भाग्य की उपासना करते हैं।

७ सुइं च लद्धुं सद्धं च, वीरियं पुण दुल्लहं ।

—उत्तराध्ययन ३।१०

धर्म को सुनकर और उसमें श्रद्धा पाकर भी उसके लिए पुरुषार्थ करना कठिन है।

८ अकिरियं परियाणामि, किरियं उपसंपज्जामि ।

—आवश्यक-४

निष्क्रियता को त्यागता हूं और क्रिया-पुरुषार्थ को अपनाता हूं।

९ कृतं में दक्षिणे हस्ते, जयो मे सव्य आहितः ।

—अथर्ववेद

मेरे दाहिने हाथ में कृत-पुरुषार्थ और बाएं हाथ में विजय निहित है।

१० **सत्पुरुषार्थ**—एकेन्द्रिय जीव सत्पुरुषार्थ से ही द्वीन्द्रिय यावत् मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय बनकर सिद्धिगामी होता है, पुरुषार्थमात्र से नहीं। एक व्यक्ति कचरा साफ करता है, दूसरा उसे बिखेरता है। एक अमृतपान करता है और दूसरा विषपान। एक कुएं से निकलता है, दूसरा उसमें गिरता है, पुरुषार्थ तो सभी कर रहे हैं पर उन्नति एवं विकास सत्पुरुषार्थ करने वालों के ही होंगे ?

११ **पुरुषार्थ चार हैं**—१. धर्म २. अर्थ ३. काम ४. मोक्ष।
धर्म साधन है और मोक्ष साध्य। इधर अर्थ साधन है और काम साध्य। पहले दो अध्यात्मदृष्टि से धर्म और मोक्ष उपादेय हैं और शेष दो हेय।

१२ भक्ति के हृदय है, ज्ञान के आँखें हैं और पुरुषार्थ के पैर हैं।

७ श्रम

१ श्रमाधीना हि सिद्धयः ।

सिद्धियाँ परिश्रम के अधीन हुआ करती हैं ।

२ श्रम प्रत्येक वस्तु पर विजय कर सकता है

—होमर

३ श्रम और स्वच्छता मनुष्य के लिए सर्वोत्तम वैद्य हैं

—रोमसिन

४ बुद्धि नए-नए कार्य को प्रारम्भ कर सकती है । लेकिन श्रम ही उसको पूरा करता है । जिस श्रम से आनन्द प्राप्त होता है, वह हमारी व्याधियों के लिए अमृत-तुल्य है ।

—शेक्सपियर

५ यदि सही तरीके से विचार करें कि वस्तुओं में कितना अंश प्राकृतिक है और कितना श्रम से प्राप्त, तो ज्ञान होगा कि सौ में निन्यानवें अंश श्रम के ही परिणाम हैं

—जॉन-लॉक

६ न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ।

—ऋग्वेद ४।३३।११

जो श्रम नहीं करता, उसके साथ देव मित्रता नहीं करते ।

७ अरे आलसी ! चींटियों के पास जा और उनका श्रम देख ।

—बाइबिल

८ जँग लगकर नष्ट होने की अपेक्षा घिस-घिस कर खत्म होना कहीं अच्छा है ।

—विशप कम्बर लैंड

९ कर मजूरी ते खा चूरी

० जिन्नी गोड़ी उन्नी डोडी

—**पंजाबी कहावतें**

परिश्रम के अनुसार ही फल मिलता है ।

१० **बोपदेव**—ये अत्यन्त मन्दबुद्धि थे, इन्हें काफी थप्पड़ खाने पड़ते थे । एक दिन निराश होकर कुएं में गिरने लगे । उस समय रस्सी के आने-जाने से घिसे हुए शिलापट्ट को देखकर सोचने लगे कि शिला भी घिस जाती है तो आदमी क्या नहीं कर सकता । बस, परिश्रम करने लगे और अन्त में दक्षिण के महादेवराजा की सभा में मुख्य-पण्डित बन गये । फिर इन्होंने मुग्धबोधव्याकरण की रचना भी की ।

११ **श्रम का माप**—शक्ति खर्च करने के अनुपात से पुरुष १ स्त्री $\frac{4}{5}$ बूढ़े $\frac{3}{4}$ युवक लड़के १$\frac{1}{4}$ युवती लड़कियाँ १$\frac{1}{8}$ मजदूर १$\frac{1}{2}$ और सुखजीवी कुल $\frac{2}{3}$ परिश्रम करते हैं ।

—**कविराज हरनामदास**

८ श्रम की कमाई

१ मुफ़्त की मिली हुई खीर से अपनी मेहनत का रूखा-सूखा टुकड़ा कहीं अच्छा है। —**गांधी**

२ मुफ्त माल दिले-बेरहम —**पारसी कहावत**

मुफ्त के माल में दिल दयाहीन हो जाता है।

३ बाकुन कीसा, बुहुर हरीसा —**पारसी कहावत**

टके खर्च कर मोहनभोग उड़ाओ !

४ धान्याला धतूरा चोराला मलीदा। —**मराठी कहावत**

पसीने की कमाई का अपव्यय नहीं हो सकता, मुफ्त का माल अंधा-धुन्धी में उड़ जाता है।

५ दर्द ओ तकलीफ से, मिलती है जो दुनिया में चीज।
उसको रखता है वो अपनी, जॉन से बढ़कर अजीज ॥
—**उर्दू शेर**

६ कमाई पै गैरों की थूके दलेर,
के गीदड़ का जूठा न खाएगा शेर। —**उर्दू शेर**

७ अरब के महादानी हातिम ने एक गरीब कठियारे को कुछ देना चाहा। उसने कहा—"अपने श्रम की कमाई खानेवाला हातिम के सामने हाथ क्यों फैलाए"। हातिम विस्मित हुआ एवं उसे अपने से अधिक प्रभावशाली माना।

८ **श्री कृष्ण यशोदा से कह रहे हैं—**

मैय्या मैं गाय चरावन जैंहों।
वृन्दावन के भाँति-भाँति फल, अपने करते खैंहों ॥

अर्थात् अपनी गोंएँ ग्वालों के भरोसे क्यों रखी जाएँ, मैं खुद चराऊँगा।

९ एक जमींदार प्रतिवर्ष खेती में नुक्सान उठाता था। तंग होकर उसने आधी जमीन तो बेच दी और आधी बंटाई पर दे दी। जमीन लेनेवाला इक्कीसवें वर्ष बंटाई वाली जमीन भी लेने को तैयार हो गया। मालिक ने पूछा—इस जमीन में इतनी आमदनी कैसे हुई ? (मैं तो सदा घाटा खाता था) उत्तर मिला — **मैं कहता हूँ आओ और तुम कहते थे जाओ** अर्थात् मैं नौकरों से पहले तैयार रहता हूँ एवं तुम केवल हुक्म चलाते थे।

१० आराम हराम है ! —**जवाहारलाल नेहरु**

११ एक जमीदार के यहाँ काम करनेवाला खाती खाना खा रहा था। खाने में घी से गलगच रोटियां थीं एवं मशालेदार दाल-शाक थे। अचानक वहाँ एक डोम (मिरासी) आ गया। सरस खाना देखकर डोम ने सोचा कि मैं भी खाती बन जाऊँ, लेकिन खाना खाने के बाद खाती ज्यों ही धूप में लकड़ियां चीरने-फाड़ने लगा, डोम ने घबरा कर निम्नलिखित दोहा कहा—

खाती देखूं जीमतो, हूँ पिण खाती होऊँ।
लकड़ा देखूं फाड़तो, डूम को डूम रैऊँ।।

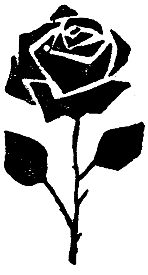

९ परिश्रम की व्यर्थता

१ घरनां ऊठ्या वन मां गया वन मां लागी लाय ।

० ऊलथी नीकल्या ने चूलमां पड्या ।

० घांची नो बलद आखो दहाड़ो फर्यो पण ठेर नो ठेर ।

० आखी रात रोई ने एक डोशी मूई ।

—गुजराती कहावतें

२ सारी रात रोया र मर्यो एक ही कोनी ।

० सारी रात पीस्यो र ढकणी में उसार्यो ।

० हाथ बाल्या र होला ही को खायानी ।

—राजस्थानी कहावतें

३ वहेला उठ्या ने भूला पड्या ।

० भाभी लीपती जाय ने बाबूड़ो रमतो जाय । —गुजराती कहावतें

४ बेठिया ! धाड़ करी ? तो कहे, हां ! करी ! केवी करी ?
तो कहे वाय बाय, त्यारे तूटी पड़े तेवी ।

—गुजराती रूपक

५ पाणी बलोवे माखण न निकले ।

० हाथ चाटवाथी भूख न भागे ।

० गधेड़ा ना लींड़ा थी पापड़ न थाय ।

० दाँतण बेचे दलदर न जाय, थूके पड़ा न वलाय ।

—गुजराती कहावतें

६ डज फोर दि गुडमच क्राइ एण्ड लिटल बुल । —अंग्रेजी कहावत

० ब्रह्मा रै आगै वेद बाँचै । —राजस्थानी कहावत

१०　विश्राम

१ श्रम का अन्त ही विश्राम है। —अरस्तू

२ कार्य के लिए विश्राम वैसा ही है, जैसे नेत्रों के लिए पलकों का होना। —टैगोर

३ विश्राम में भी उद्यम की गति है। शान्त समुद्र की तरंगें भी गति-हीन नहीं होतीं। —टैगोर

४ विश्राम परिश्रम की मधुर चटनी है। —प्लूटार्क

५ बहुत अधिक विश्राम स्वयं दर्द बन जाता है। —तोमर

६ ठीक ढंग से उचित समय पर किया हुआ विश्राम फटे कपड़े में समय पर टांका लगाने जैसा है। —गांधी

७ विषय परिवर्तन से, खेल-कूद से व हँसने से विश्राम होता है। निद्रा से भी अच्छा विश्राम होता है।

८ संसारतापदग्धानां, तिस्रो विश्रान्तिभूमयः।
अपत्यं च कलत्रं च, सतां संगतिरेव च ॥

—चाणक्यनीति ४।१०

संसार के ताप से जलते हुए प्राणियों के लिए तीन विश्राम के स्थान हैं—अपत्य—संतान, कलत्र—स्त्री और सत्संगति।

११ सफलता

१ सतत साधना के महापरिणाम का नाम ही सफलता है। —**नलिन**

२ जीवन में तुम्हें सबसे अधिक आवश्यकता, अभिज्ञता और विश्वास की है–सफलता निश्चित है। —**एफ. एल. कीमैन्स**

३ कॉन्फीडेन्स इज दि कंम्पेनियन आफ सक्सेस

—**रामतीर्थ**

सफलता का मूल विश्वास है।

४ सफलता मीठी है, पर परिश्रम के बाद और अधिक मीठी है।

—**अल्काट**

५ सफलता सबसे मीठी उन्हें लगती है, जो कभी सफल नहीं होते।

—**एमिली**

६ सफलता प्राप्त करने के लिए संसार में व्यक्ति को विद्वान होकर भी मूर्ख-सा दिखाई पड़ना चाहिये। —**मान्टेस्की**

७ सफलता और उन्नति पाने के दो ही मार्ग हैं—एक तो अपने श्रम द्वारा और दूसरा दूसरों की मूर्खता का लाभ उठाकर। —**लाब्रेयर**

८ अपने काम को चाँद-सूरज के काम की तरह निःस्वार्थ बना दो, तभी सफलता मिलेगी। —**शेक्सपियर**

९ या तो कार्य का आरम्भ मत करो, यदि आरम्भ कर चुके हो तो पूर्ण करके ही हटो ! —**ओविद**

१० चाहे सफलता मेरे हाथ में नहीं है पर डटे रहना तो हाथ में ही है।

— **लिंकन**

११ पढ़ने में आया है कि बिजली का आविष्कार करने में ९०० बार असफलता मिली, आखिर प्रयोग सफल हुआ।

१२ असफलता में धैर्य

१ चरित्रविकास में असफलता अद्‌भुत उपादान-सामग्री है।

—एनन

२ एव्रीथिंग राइजेज बट टु फाल। —अंग्रेजी कहावत
चढ़े सो पड़े।

३ न घबरा जो मकसद में ताखीर[1] हो।
के दिल्ली न इक दिन में तामीर[2] हो। —उर्दू शेर

४ अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन सन् १८३१ से १८५६ तक चुनावों में तथा व्यापार में अनेक बार हारे, फिर भी निराश न हुए तो १८६० में राष्ट्रपति बन गये।

५ महावीर प्रभु के केवल ७०० साधु मुक्त हुए फिर भी पिछलों ने साधना चालू रखी!

६ **असफलता के चार कारण** :—

१ दिमाग की अस्थिरता।

२ युग की गति के साथ आगे न बढ़ना

३ आज का काम कल पर छोड़ना।

४ कर्त्तव्य का पालन आधे मन से करना। —स्वेटमार्टन

७ बह्वारम्भे लघु क्रिया। —संस्कृतकहावत

महान कार्य के प्रारम्भ में अल्प क्रिया करना असफलता का कारण है।

★

१. असफलता २. आबाद

१३ सावधानी और असावधानी

१ जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए।
जयं भुंजंतो भासंतो, पावकम्मं न बंधइ ।। —**दशवैकालिक ४**

यत्ना से चलो ! यत्ना से ठहरो ! यत्ना से बैठो ! यत्ना से शयन करो ! यत्ना से खाओ और बोलो ! पूर्वोक्त सभी कार्य यत्नापूर्वक करने से पाप-कर्म का बन्धन नहीं होता । (यत्ना अर्थात् सावधानी) ।

२ बिना देखे किसी वस्तु का पान न करो और और बिना पढ़े कभी कहीं हस्ताक्षर न करो ! —**स्पेनिश लोकोक्ति**

३ वस्तु खरीदते समय नेत्रों का उपयोग करो, श्रवणों का नहीं ।
—**चेक लोकोक्ति**

४ इन पाँचों से सावधान रहो !

१ जिसके वचन जलप्रवाहवत् बहते हों
२ जिसके हृदय-कपाट अनावृत हों
३ जो कान में तुलसी का दल लगाकर भक्ति प्रदर्शित करता हो
४ जो स्त्री दीर्घ-अवगुंठन में रहती हो
५ जो तालाब सेवाल से आवृत हो (उसका जल स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है) —**रामकृष्ण**

५ तीन समय विशेष सावधान रहो !

१ बीमारी के समय
२ ऋतु-परिवर्तन के समय
३ घर की फूट के समय

६ सावधानी बुद्धिमत्ता की सबसे बड़ी बालिका है।

—विक्टरह्यूगो

७ जो व्यक्ति अत्यधिक सावधान है, वह कुछ भी कार्य पूर्ण नहीं कर सकता।

—शिलर

८ **असावधानी** :—

क—असावधानी से आटे में ईलियां पड़ जाती हैं, रोटी जल जाती है, दूध उफन जाता है, वस्त्र कट जाता है, खेती बिगड़ जाती है, ईमारतें ढह जाती हैं, लड़ाई में हार तथा व्यापार में हानि हो जाती है, व्रत टूट जाते हैं एवं स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है।

—उपदेशसुमनमाला, के आधार से

ख—असावधानी सभी जगह खतरनाक है।

—मौनवाणी पृष्ठ ७०

१४ उत्साह

१ हिताहितप्राप्तिपरिहारहेतुरुत्साहः ।

—नीतिवाक्यामृत ६।२६

जिस कर्त्तव्य के करने में हित-अभीष्ट की प्राप्ति तथा अहित-अनिष्ट का त्याग होता है, उसे उत्साह कहते हैं ।

२ उत्साह वह आग है, जो हमारे कार्यों का इंजिन चलाने के लिए भाप तैयार करती है ।

३ अनिर्वेदः श्रियोमूल-मनिर्वेदः परं सुखम्

—वाल्मीकिरामायाण ५।१२।२०

उत्साह लक्ष्मी का मूल एवं उत्कृष्ट सुख है ।

४ उत्साहवतां शत्रवोऽपि वशीभवन्ति, निरुत्साहाद् दैवं पतति ।

—कौटलीय अर्थशास्त्र

उत्साही पुरुषों के शत्रु भी वश हो जाते हैं और उत्साहहीनों से भाग्य दूर हो जाता है ।

५ उत्साही बच्चा ही कवि, डाक्टर, वकील, न्यायाधीश, इंजीनियर एवं व्यापारी बन सकता है । उत्साही वक्ता ही परिषद् को प्रफुल्लित कर सकता है और उत्साही सैनिक ही विजयी बन सकता है ।

६ एकेनापि सुधीरेण, सोत्साहेन रणं प्रति ।
सोत्साहं जायते सैन्यं, भग्ने भङ्गमवाप्नुयात् ।

पञ्चतन्त्र ४।४२

एक ही धीर एवं उत्साही वीर द्वारा सारी सेना उत्साह वाली बन जाती है और एक के भागने से सारी भाग जाती है ।

७ उत्साह का महत्त्व होता है किन्तु जब वह अनुशासन की आत्मा का हनन कर डालता है; सफलता की संभावना अत्यल्प रह जाती है ।

★

१५ उत्साहहीनता

१ अनुत्साहः सर्वव्यसनानामागमद्वारम् ।

—नीतिवाक्यामृत १७।१७

उत्साहहीनता सब दुःखों का आगम द्वार है ।

२ असज्झायमला मन्त्रा, अनुट्ठानमला घरा ।

—धम्मपद २४१

मन्त्रों का मल अस्वाध्याय हैं और घरों का मल अनुत्थान अर्थात् उन्नति का काम करने में अनुत्साह है, जैसे—स्वाध्याय न करने से मन्त्र नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही अनुत्थान से घर-कुटुम्ब नष्ट हो जाते हैं ।

३ सहारा जो गैरों का तकते रहे ।
वे तसवीर बन कर लटकते रहे ।

—उर्दू शेर

४ **अनुत्साह की पराकाष्ठा:—**

पुत्र खाना खाते समय बोला—माँ, मक्खी है ।
मां ने कहा—बेटा ! उड़ा दे ! बेटा बोला—माँ ! दो हैं ।

१६ साहस

१ साहसे श्रीः प्रतिवसति ।

—**मृच्छकटिक**

साहस में लक्ष्मी निवास करती है ।

२ साहस के सामने पर्वत भी काँपते हैं—यह मैंने इतिहास से सीखा है ।

—**जवाहरलाल नेहरू**

३ कान्टेक्ट एण्ड करेज लीड टु आनर ।

—**अंग्रेजी कहावत**

सम्पर्क और साहस इज्जत का रास्ता दिखाते हैं ।

४ तस्य किमसाध्यं नाम यो महामुनिरिव सर्वान्नीनः सर्वक्लेशसहः सर्वत्र सुखशायी च ।

—**नीतिवाक्यमृत** ३२।५३

जो महमुनि के समान सब कुछ (सरस-नीरस) खा सकता है, सब दुःखों को सह सकता है एवं सब जगह सुखपूर्वक सो सकता है । उसके लिये कोई भी कार्य असाध्य नहीं ।

५ **अद्‌भुत साहसी छत्रपति शिवाजी**—इन पर समर्थ गुरु रामदास की कुछ विशेष कृपा थो । शिष्यों को सन्देह हुआ कि राजा होने के कारण गुरु इनसे अधिक प्रेम रखते हैं । गुरु शिष्यों की भावना भाँप गये । वे उदर-पीड़ा का मिष बनाकर एक गुफा में जा लेटे । पता पाते ही शिवाजी वहाँ पहुंचे । पीड़ा का उपचार पूछा, गुरु ने सिंहनी के दूध की आवश्यकता बतलाई । शिवाजी गुरु की तुम्बी लेकर दौड़े । सिंहनी के दो बच्चे मिले । शिवाजी उनके पास ज्यों ही गये, सिंहनी ने आकर अपने जबड़े में उनकी गर्दन पकड़ ली । उन्होंने कहा—माँ ! मैं तेरे बच्चों को कुछ नहीं कहता ।

गुरुजी के लिए थोड़ा-सा तेरा दूध चाहिये । सिंहनी प्रसन्न हो गई, बस शिवाजी उसका दूध दुहकर गुरु के चरणों में आ पहुँचे । समर्थ ने शिष्यों से कहा—देखो, इसका साहस एवं गुरु भक्ति । शिष्यों का संदेह दूर हुआ उन्होंने क्षमा मांगी ।

—'समर्थांचे सामर्थ्य' के आधार पर

६ लंगडा तैमूर, एक आँख और एक टांग वाला महाराणा सांगा तथा एक चक्षु रणजीतसिंह ने भी ख्याति प्राप्त कर ली, तो फिर संपूर्ण अवयवों वाले तुम क्या नहीं कर सकते ? साहस की आवश्यकता है ।

७ **साहसी पत्नी**—पति ने घबराकर पत्नी से कहा—कल सरकार हमारी सारी सम्पत्ति नीलाम कर देगी ।

पत्नी—क्या आप को भी बेच देगी ?

पति—नहीं, मुझे तो नही बेचेगी ।

पत्नी—मुझे या बच्चों को ?

पति—नहीं, तुम्हें भी नहीं बेचेगी ।

पत्नी—हमारे अनुभव, पुरुषार्थ एवं सद्गुणों को ?

पति—इनको तो वह बेच ही कैसे सकती है ।

पत्नी—तो फिर हमें क्या डर है । जब तक मूल हमारे पास है, भले ही सरकार पत्तों, फूलों एवं फलों को ले ले !

१७ हिम्मत

१ हिम्मत किम्मत होय, बिन हिम्मत किम्मत नहीं !
करै न आदर कोय, रद कागद ज्यूं राजिया !

—सोरठासंग्रह

२ हिम्मत का व्यवहार जोर-जुल्म हिम्मत का,
हिम्मत के पाण चोर फाड़ै जा विराना घर।
हिम्मत का रगड़ा और झगड़ा सब हिम्मत का,
हिम्मत से किला-गढ़-कोट कर लेते सर।
हिम्मत का गाना रु बजाना सब हिम्मत का,
हिम्मत से देश-परदेश जाय लाते जर।
कहै **विप्रजाल** सब काम बने हिम्मत से,
हिम्मत बिना माणस की कीमत ना कोड़ी भर।

३ हिम्मते-मर्दा, मददे-खुदा !
बादशाह की लड़की, फकीर से निकाह !

—उर्दू कहावत

४ हम मर्द हैं, गैरों का सहारा नहीं लेते,
जो तैराक हैं, दरिये का किनारा नहीं लेते।
जो शेर हैं शैय्यद, औरों का मारा नहीं लेते,
हो आहो मस्की, के चुंकारा नहीं लेते।

—उर्दू शेर

५ लावां तीतर लार, टेडाऊ हर कोई हुवै।
सिंहां तणीं शिकार, कोइयक खेलै किसनिया !

—सोरठा-संग्रह

१८ हिम्मतहार मत बनो !

१ इङ्गलैंड के प्रधान मन्त्री विलियम पिट ने परिश्रम, वाक्पटुता, उत्साह आदि सब गुणों में हिम्मत को मुख्य कहा है।

२ राम, कृष्ण, बुद्ध एवं महावीर कहते हैं—अरे देखो ! हमारे पास क्या साधन था किन्तु हिम्मत थी। तुम भी हिम्मत रखो और आगे बढ़ो !

३ जो मिट्टी, पानी, सूर्य एवं हवा बीज को नष्ट करते हैं, वे पैदा भी कर सकते हैं, लेकिन अपनी ताकत चाहिये।

४ सूरज हर सांझ को ढल जाता है।
हर पतझर वसन्त में बदल जाता है।
मेरे मन ! मुसीबतों में हिम्मत मत हार।
समय कैसा ही हो, निकल जाता है॥

५ आशा कर आषाढ़ में, बीज दिया जो न्हाख,
अब निःसासा न्हाख मत, राम-भरोसै राख ॥१॥
सगा-सनेह्यां रे कह्यां, कर्‌यो अजाण्यो शाख,
अब निःसासा न्हाख मत, राम-भरोसै राख ॥२॥
कियां ठगीज्यो ठा नहीं, तूं हो चतुर चलाक,
अब निःसासा न्हाख मत, राम-भरोसै राख ॥३॥

—राजस्थानी दोहे

६ फस गई तां फड़कन की। —पंजाबी कहावत
काबू में आ गए तो रोना क्या है, हिम्मत रखो !

७ जाग्या त्यांथी सवार, भूल्या त्यांथी फरी गणो !

० खेप हार्‌या भव नथी हार्‌या, एक स्वपने काईं रात बही गई छे ?

—गुजराती कहावतें

८ **सफलता का मंत्र**—प्रसिद्ध वैज्ञानिक आंईस्टीन से एक विद्यार्थी ने सफलता का मंत्र पूछा—उन्होंने कहा—हिम्मत न हारना। विद्यार्थी ने पूछा--कैसे ? आंईस्टीन बोला—पढ़ाई के समय मैं तुम्हारे से भी बुद्धू था। सब छात्र मुझे "बुद्धू" कहते थे एवं कभी-कभी मोटे अक्षरों में पीठ पर बुद्धू लिख भी देते थे। मुझे प्रायः खड़ा ही रहना पड़ता था। अध्यापक तो यहां तक भी कह देते थे कि तुझे सात जन्म में भी गणित नहीं आयेगा। मजाक एवं तिरस्कार होने पर भी मैं हिम्मती बनकर परिश्रम करता रहा तो देख लो ! आज एक जगत्प्रसिद्ध वैज्ञानिक बन गया।

९ **हिम्मती महारानी**—एक दिन राजा ने रानी से कहा—एक बहुत बुरा समाचार आया है कि अपनी फौजें युद्ध में हार गईं। महारानी बोली — मैंने इससे भी अधिक बुरा समाचार सुना है वह है कि आप हिम्मत हार बन गए। राजा की हिम्मत बढ़ी, युद्ध में गया एवं विजय हुई।

१० कार्य के प्रारम्भ में ही हिम्मत हारनेवालों के लिये—

(क) हजी तो श्री गणेशाय नमः छे। हजी तो शेर माँ पहली पूणी छे। हजी तो सोले सोगटी बाकी छे। हजी तो धड़ो थाय छे तोल बधो बाकी छे। हजी तो धरघड़ी ने धरदहाड़ो छे।

—**गुजराती कहावतें**

(ख) हाल तो पायली में पाव ही को पिसीज्योनी,

- हाल तो सेर में पूणी ही को कतीजी नी।
- हाल रात आडी है।
- चाली तो कोय नी र तिसाई हुयगी।

—**राजस्थानी कहावतें**

१६ अभ्यास

१ चित्तवृत्तीनामेकस्मिनालम्बने सर्वतः समाहृत्य पुनः-पुनः स्थापन मभ्यासः।

चित्तवृत्तियों को सब तरफ से खींच कर एक ही आलम्बन में पुनः-पुनः स्थापन करना **अभ्यास** कहलाता है।

२ एक डुबकी से मोती नहीं मिलते, एक दिन लड़ने से सुभट नहीं बनता। एक दिन के व्यापार से व्यापारी नहीं बनता, एक लेख लिखने से लेखक नहीं बनता, एक व्याख्यान देने से व्याख्यानी नहीं बनता। एक दिन दान देने से दानी नहीं बनता, एक दिन ध्यान करने से ध्यानी नहीं बनता एवं एक दिन धर्म कर लेने से धर्मी नहीं बनता, अभ्यास करते रहना जरूरी है।

—अध्ययन के आधार पर

३ यथाग्निर्दारुमध्यस्थो, नोत्तिष्ठेद् मथनं विना।
विना चाभ्यासयोगेने, ज्ञानदीपस्तथा नहि।

—योगशिखोपनिषद्

काष्ठ में रही हुई अग्नि जैसे मथे विना प्रज्वलित नहीं होती, उसी प्रकार ज्ञान का दीपक भी अभ्यास के बिना नहीं जलता।

४ जं अब्भस्सइ जीवो, गुणं च दोषं च एत्थ जम्मम्मि।
तं पावइ परलोए, तेण अब्भास जोएण।

—धर्मसंग्रह २।२४

इस जन्म में जीव जिस गुण एवं दोष का अभ्यास करता है, उसके योग से परलोक में उसी गुण-दोष की प्राप्ति हो जाती है।

५ अनभ्यासे विषं शास्त्र-मजीर्णे भोजनं विषम् ।
दरिद्रस्य विषं गोष्ठी, वृद्धस्य तरुणी विषम् ।

—चाणक्यनीति ४।१५

अभ्यास नहीं किया हुआ शास्त्र, अजीर्ण में खाया हुआ भोजन, दरिद्र का गोष्ठी में जाना एवं वृद्ध के साथ जवान स्त्री का रहना—ये चारों विष के समान खतरनाक हैं ।

६ अनभ्यासे विषं शास्त्र-मभ्यासे त्वमृतं भवेत् ।

—विश्वामित्र-स्मृति

अभ्यास के अभाव में जो शास्त्र विष के समान है, अभ्यास होने पर वही अमृत बन जाता है ।

२० अभ्यास का महत्त्व

१ अभ्यासः कर्मणां सम्यग्, उत्पादयति कौशलम् ।

—सुभाषितरत्न-भाण्डगार पृष्ठ २६५

अभ्यास से कार्यकुशलता प्राप्त होती हैं ।

२ अभ्यासाद् धार्यते विद्या ।

—चाणक्यनीति ५।८

अभ्यास से ही विद्या धारण की जाती है ।

३ करत-करत अभ्यास नित, जड़मति होत सुजान ।
रसरी आवत-जात ही, पत्थर परत निशान ।

४ अज्ञोपि तज्ज्ञतामेति, शनैः शैलोऽपिचूर्ण्यते ।
बाणोप्येति महालक्ष्यं, पश्याभ्यासविजृम्भितम् ।।२६।।
अबन्धुर्बन्धुतामेति, नैकट्याभ्यासयोगतः ।
यात्यनाभ्यासतो दूरात्, स्नेहो बन्धुषु तानवम् ।।२६।।

—योगवाशिष्ठ ६।३०।६७

अभ्यास का माहात्म्य देखो ! जिससे मूर्ख भी विद्वान बन जाता है । धीरे-धीरे पर्वत भी चूर्ण हो जाता है एवं बाण भी अपने महान् लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है (२६) बार-बार मिलने से अबन्धु भी बन्धु बन जाता है तथा दूर रहने से मिलने का अभ्यास नहीं रहने के कारण बन्धुओं में भी स्नेह की कमी आ जाती है ।

५ अभ्यासेन क्रियाः सर्वा, अभ्यासात् सकलाः कलाः ।
अभ्यासाद् ध्यान-मौनादि, किमभ्यासस्य दुष्करम् ।

—श्राद्धविधि पृष्ठ ८६

अभ्यास से सभी क्रियाएँ सफल होती हैं, सभी कलाएं प्राप्त होती हैं एवं

ध्यान-मौन आदि की योग्यता मिलती है। अभ्यास के सामने कोई भी चीज दुष्कर नहीं है।

६ अभ्यास हो जाने के बाद अनाज कूटनेवाली स्त्री की तरह एक साथ तीन-तीन काम भी किये जा सकते हैं।

—**विलियम जेम्स**

७ अंधारा मां खाय पण कोलियो नाकमां न जाय।

—**गुजराती कहावत**

८ पेरिसनिवासी कुमारी **निकोली हम्बर्ट** ने अभ्यास के बल से प्रति मिनट २६० शब्द लिखकर स्टेनोटाइम प्रतियोगिता में विजय प्राप्त की।

—**हिन्दुस्तान ६ मई १९६३ से**

९ डिजरायली (इंग्लैंड के प्रमुख नेता) संसद में भाषण करने खड़े हुये, किन्तु बोल न सके, उनका शरीर कांपने लगा, सदस्य मजाक उड़ाने लगे। लज्जित होकर बैठते-बैठते उन्होंने कहा—मित्रो! आज तो मैं अपना स्थान ग्रहण कर रहा हूँ लेकिन वह दिन भी दूर नहीं, जब आप मेरा भाषण सुनने के लिये दोड़े-दौड़े आयेंगे।

बस, उसी दिन से भाषण का अभ्यास शुरू किया एवं ऐसी सफलता मिली कि उनके कई भाषण विश्वव्यापी-प्रसिद्धि के पात्र बने

—**अध्ययन के आधार पर**

१० अभ्यास बड़ा है :—

(तर्ज—कलदार रुपइया चांदी का)

हमने तो दिल में समझ लिया, अभ्यास बड़ा है दुनियाँ में।ध्रुव।

जो ए बी सी डी पढ़ते थे, जो प्राइमर में अड़बड़ते थे।
प्रोफेसर वे ही पुरुष बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। १

जो क का कि की करते थे, जिनसे नहीं हर्फ उखड़ते थे।
सम्पादक वे ही शक्श बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। २

जो रामः रामौ रटते थे, संधियों में मुँह तकते थे।
वे ही व्याकरणाचार्य बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ३

जो अ आ इ ई पट्टी पर, लिखते थे कब ही रेती पर।
वे लेखक नंबर एक बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ४

जो टूं टां करते डरते थे, परिषद में जो थरहरते थे।
व्याख्यानी वे ही बन्धु बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ५

जो झाड़ू सुबह लगाते थे, खरलों में मुसल चलाते थे।
वे भाई नामी वैद्य बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ६

जो कपड़ा काढ़ दिखाते थे, ले वापस वहीं जमाते थे।
वे दुकांदार होशियार बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ७

उपवास कभी नहीं करते थे, तप नाम श्रवण से डरते थे।
वे घोर-तपस्वीराज बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में। ८

शिवमहल की चौदह पेड़ियाँ है, चढ़ने का घन अभ्यास करो!
तो परमेश्वर यह जीव बने, अभ्यास बड़ा है दुनिया में ९।

—उपदेश सुमनमाला

२१ रामकृष्ण परमहंस का अद्भुत अभ्यास

१ भाई के कहने से वे दक्षिणेश्वर स्थित कालीबाड़ी में पूजा करने लगे किन्तु लगन लगने के बाद इन्हें कुछ भी खबर नहीं लगती ! कभी घण्टों तक घण्टा बजाते, कभी-कभी घण्टों तक आरती उतारते रहते एवं भजन गाते रहते। उन्हें पागल समझकर पूजा का काम उनके भानजे **हृदय** को दे दिया गया।

कांचन-त्याग का अभ्यास करने के लिए वे गंगातट पर बैठते और दोनों हाथों में माटी और टाका (रुपया) लेकर चिंतन करते कि माटी से धान्य तेल-सोना-चाँदी आदि पैदा होते हैं। टाका से वे सब खरीदे जाते हैं लेकिन माटी से वे यदि उत्पन्न ही न हों तो टाका से क्या खरीदें ? भगवान तो दोनों से नहीं मिलते, फिर भी टाका से माटी अच्छी है। लेकिन टाका लेते हैं और माटी फेंकते हैं, यह उनकी मूर्खता है-यों चिंतन करते हुये वे दोनों को ही गंगा में फेंक देते।

कामिनी-त्याग का अभ्यास करने को वे निर्विकार रहकर कईबार अपनी स्त्री के साथ एक शय्या पर भी रात बिताते, एक बार उन्हें पकड़ कर लोगों ने वेश्या के यहां रखा किन्तु वे तो उसे माँ-माँ कहकर प्रणाम करने लगे।

उन्होंने कालीभक्त होते हुए भी ईसाई, इस्लाम, वैदिक आदि धर्मों की साधना की थी। कहते हैं कि उन्हें महमूद-ईसा आदि अनेक महापुरुषों का साक्षात्कार भी हुआ।

अहंकारनाश के लिए वे हरिजनों की बस्ती में झाड़ू लगाते एवं काली-बाड़ी के भिखारियों की ऐंठी पत्तलों को भी फेंक आते।

— **अध्ययन के आधार पर**

२२ कारण

१ प्रकृति की प्रत्येक वस्तु एक कारण है, जिसका कुछ न कुछ परिणाम अवश्य होता है।

—स्पिनोजा

२ कारणमन्तरा न कार्यस्योत्पत्तिः।

—न्यायशास्त्र

कारण के बिना कोई भी कार्य नही होता।

३ आदमी अपने आप ही अपने सुख-दुःख का कारण है।

—गांधी

४ कारण को बंद कर दो, कार्य दूर हो जायेगा।

— अंग्रेजी कहावत

५ कारण मुख्यतया दो हैं—

उपादान कारण और **निमित्त कारण**।

घड़े का उपादान कारण मिट्टी है और निमित्त कारण कुम्हार-चाक आदि है।

काम-कर्म

१ काम के मानी है अपने वास्तविक स्वरूप में सामञ्जस्य और ब्रह्माण्ड में एकरूपता। —**रामतीर्थ**

२ सर्वोच्च स्थिति में जाने का कर्म ही एक उपाय है और वह कर्म पूर्णमुक्ति के बाद भी रहता है। —**अरविन्द घोष**

३ कर्म छोड़ना अशक्य है, क्योंकि छोड़ना भी तो कर्म है। —**विनोबा**

४ चित्तस्य शुद्धये कर्म, न तु वस्तूपलब्धये। —**विवेक चूड़ामणि**
कर्म चित्त-शुद्धि के लिये करना चाहिये, वस्तु की प्राप्ति के लिये नहीं।

५ यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा काम अवश्य हो जाये तो उसे स्वयं करो अन्यथा दूसरों को भेज दो।

६ **काम करने के प्रकार**— सेवाबुद्धि, कर्त्तव्यबुद्धि, उपकारबुद्धि और स्वार्थबुद्धि—इन चार प्रकार की बुद्धि (भावना) से मनुष्य काम करता है। सेवाबुद्धि वाला सफलता को मुख्य रखता है। कर्त्तव्य-बुद्धि वाला अपनी जिम्मेदारी से आगे नहीं बढ़ता। उपकारबुद्धि वाला एहसान करना चाहता है, काम में दिल नहीं लगाता और स्वार्थबुद्धि वालों के लिए कहावत है, **गंजेड़ी यार किसके, दम लगाया और खिसके**।

७ **काम में शर्म**—वाशिंगटन का जन्म सन् १५३२ में हुआ। इसके पूर्वज १५४५ में अमेरिका जा बसे। वाशिंगटन पढ़-लिखकर सेना में भर्ती हुआ एवं बढ़ता-बढ़ता प्रधानसेनापति बन गया। उसने अमेरिका को स्वतन्त्रता दिलाई। फिर सबने मिलकर उसे राष्ट्रपति बनाया एवं नगर बसाया—उसका नाम **वाशिंगटन** रखा, जो आज अमेरिका की राज-धानी है।

एकबार सेनापति वाशिंगटन घोड़े सवार होकर कहीं जा रहा था। मजदूर शहतीर (बीम) उठा रहे थे। एक आदमी कम होने से वह न उठा। जमादार से कहा गया—'जरा हाथ लगाइये'। उत्तर मिला—"मैं जमादार हूँ।" वाशिंगटन खुद कूद आया और शहतीर उठवा दिया। जमादार से कहा—"मियाँ! आपको तो शर्म आती है। जब-कभी काम पड़े, मुझे बुलवा लेना। मैं वाशिंगटन हूँ"। यह सुनते ही जमादार के होश उड़ गए।

२४ काम का महत्त्व

१ काम की दवा काम है।

—रामतीर्थ

२ परेशानी को काम से ज्यादा कोई परेशान नहीं कर सकता।

—सरदारपटेल

३ बाहरी काम अंदरूनी इरादे का पता लगा देते हैं।

—लेटिन सूत्र

४ काम जीने का साधन है, पर वह जीना नहीं है।

—जे० बी० हालेंड

५ काम मानो बोली में घुला हुआ है। आदमी के बोलते ही पता लग जाता है कि यह काम कर सकता है।

—कार्लाइल

६ शरीर के लिए काम ढूंढ़लो। मन को खुशी स्वयं मिल जाएगी।

—हिन्दी कहावत

७ कर्मशील-व्यक्ति प्रायः उदास नहीं रहते, क्योंकि कर्मशीलता और गमगीनी साथ-साथ नहीं रह सकतीं।

—बोवी

८ कार्य में ध्येय होता है और रमत-गमत में उन्माद।

—रस्किन

२५ अच्छा काम

१ दर अमल कोश, हरचें खाही पोश।

—पारसी कहावत

काम अच्छा करो, पोशाक चाहे जैसी हो।

२ काम वही ठीक है, जिसे करके पछताना न पड़े और जिसके फल को प्रसन्नता से भोगा जा सके।

—महात्मा बुद्ध

३ अच्छी तरह सोचना अक्लमन्दी है, अच्छी योजना बनाना बड़ी-अक्लमन्दी है और अच्छा काम करना सर्वोत्तम अक्लमन्दी है।

—इरानी कहावत

४ सर्वोत्तम काम धन के खातिर कतई नहीं किया जाता और नहीं किया जाएगा

—रस्किन

५ कोई भी शुभ कार्य करते समय अपनी आत्मा से पूछो कि तुम निष्कपट हो न? जो कुछ बोल रहे हो, निःस्वार्थ भाव से ही न? जो कुछ दान-उपकार करते हो, बदले की आशा के बिना ही न? और जो धन संचय कर रहे हो, कृपणता छोड़ कर ही न?

—हातिम हासम

६ निष्काम-कर्म करते समय तीन बातों का त्याग आवश्यक है—कर्म फल का, कर्म में आसक्ति का और कर्म में कर्तापन का।

७ स्वार्थ-अहंकार को छोड़े बिना सच्चा काम नहीं होता।

—रामतीर्थ

८ नेवर लुक टु दी क्वान्टिटि आफ यूअर एक्सन्स, बट पे पर्टिक्यूलर एटेन्सन टु दी क्वालिटी देयर-आफ!

—अंग्रेजी कहावत

काम की मात्रा मत देखो! उसकी किस्म पर ध्यान दो।

२६ करने योग्य काम

१ कर्त्तव्यमेव कर्त्तव्यं, प्राणैः कण्ठगतैरपि ।
अकर्त्तव्यं न कर्तव्यं, प्राणैःकण्ठगतैरपि ॥

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ १६६

करने योग्य काम अवश्य करना चाहिये और न करने योग्य कभी नहीं करना चाहिए। चाहे प्राणान्त कष्ट भी उपस्थित क्यों न हो जाय।

२ यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात्, परितोषोऽन्तरात्मनः।
तत् प्रयत्नेन कुर्वीत, विपरीतं तु वर्जयेत् ॥

—मनुस्मृति ४।१६१

जो काम करने से इस अन्तरात्मा को संतोष हो, वही काम करना चाहिये उससे विपरीत नहीं।

३ बुद्धि और हृदय को सच मालूम पड़े, वही काम करना चाहिये।

—गांधी

४ आरम्भस्तस्य कुर्याद्धि, यत्समाप्तिः सुखं व्रजेत्।
नारम्भो बहुकार्याणा-मेकदैव सुखावहः ॥

—शुक्रनीति

उसी काम को शुरू करना चाहिये, जिसे सुख से पूरा किया जा सके। एक साथ अनेक कार्यों का प्रारम्भ सुखद नहीं होता।

५ यदतीतमतीतं तत्, संदिग्धं यदनागतम्।
तस्माद् यत् प्राप्तकालं तद्, मानवेन विधीयताम्।

—रश्मिमाला १६।१

जो हो चुका है, वह तो हो ही चुका है। जो अनागत है, वह संदेहयुक्त है। अतः मनुष्य को वही काम करना चाहिए, जिसका वर्तमानकाल से सम्बन्ध हो।

६ दिवसेनैव तत्कुर्याद्, येन रात्रौ सुखं वसेत्।
अष्टमासेन तत्कुर्याद, येन वर्षा सुखं वसेत्। ६७।
पूर्वे वयसि तत्कुर्याद्, येन वृद्धः सुखं वसेत्।
यावज्जीवेन तत्कुर्याद्, येन प्रेत्य सुखं वसेत्। ६८।

—विदुरनीति ३

दिन में वह काम करो, जिससे रात्री सुख से व्यतीत हो, आठ महीनों में वह काम करो, जिससे वर्षाऋतु सुखपूर्वक निकल जाये। ६७। आयु के पहले भाग में वह काम करो, जिससे बुढ़ापे में सुख हो और जीवन भर वह काम करो, जिससे अगले जन्म में सुख हो। ६८।

७ यो यत्र कर्मणि कुशलः, तं तत्र विनियोजयेत्।

—नीतिवाक्यामृत १८।६०

जो जिस कार्य में कुशल हो, उसे उसी कार्य में लगाना चाहिये।

२७ न करने योग्य काम

१ अफलानि दुरन्तानि, समव्यय - फलानि च।
अशक्यानि च वस्तूनि, नारभेत विचक्षणः, ॥

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ १६६

समझदार व्यक्ति ऐसे कार्यों का प्रारम्भ न करे, जिनका कोई फल न हो, व्यय और फल (लाभ) समान हों तथा जो अशक्य हों।

२ यत्कृत्वा न भवेद् धर्मो, न कीर्तिर्न यशो ध्रुवम्।
शरीरस्य भवेत्खेदः, कस्तत्कर्म समाचरेत्॥

—वाल्मीकिरामायण ३।५०।१६

जिस काम से न तो धर्म हो, न कीर्ति हो और न स्थायी यश हो। शरीर को केवल कष्ट ही हो, उस काम को कौन करेगा!

३ यदन्येषां हितं न स्या - दात्मनः कर्म पौरुषम्।
अपत्रपेत वा येन, न तत्कुर्यात् कदाचन॥

—महाभारत

वह काम नहीं करना चाहिए। जिस अपने काम से दूसरों का हित न हो अथवा जिससे लज्जा आती हो।

४ बालसखित्वमकारणहास्यं, स्त्रीषु विवादमसज्जनसेवा।
गर्दभयानमसंस्कृतवाणी, षट्सु नरो लघुतामुपयाति॥

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ-१८१

(१) बच्चों से मित्रता (२) बिना कारण हास्य (३) स्त्रियों के साथ विवाद (४) दुर्जनों की सेवा (५) गदहे की सवारी (६) असंस्कृत (अशुद्ध) वाणी का प्रयोग—इन छः कार्यों से मनुष्य हीनता को प्राप्त होता है।

५ कियां करै ? जाणैं नातै आयोड़ी ढ़ेढ़णी करै।
० कियां देखै ? जाणैं गैली बजार (कागलो नींबोली) कानी देखै।
० कियां नाचै ? जाणै हंसराजरी घोड़ी नाचै।
० कियां फिरै ? जाणै बिगड्यै ब्याव में नाई फिरै।

—**राजस्थानी कहावतें**

(अनुचित क्रियाएँ देखकर उपरोक्त कहावतें कही जाती हैं।)

६ खल ने गाड़े गोलपापड़ी नु भात न होय,
मसाणियां लाडुमां एलची नो गंध न होय,
खातरनां गाड़ा साथे चोपदार न शोभे,
अने अंबाड़ी बैसी छाणा न बीणाय।

—**गुजराती कहावत**

७ **निषिद्ध कार्य के कर्त्ता—**

समाय - व्यय - कार्यारम्भो राभसिकानाम् ।४२।
बहुक्लेशेनाल्पफल-कार्यारम्भो महामूर्खाणाम् ।४३।
दोषभयान्नकार्यारम्भः कापुरुषाणाम् ।४४।
आत्मसंशयेन कार्यारम्भो बालहृदयानाम् ।४८।

—**नीतिवाक्यामृत—१०**

समान आय-व्यय वाले काम को प्रारम्भ करने वाले उतावले हैं।४२।
अधिक श्रम एवं अल्पलाभ वाले काम को शुरू करनेवाले महामूर्ख हैं।४३।
विघ्न के भय से काम शुरू नहीं करनेवाले कापुरुष (कायर) हैं।४४।
संदेहसहित काम करनेवाले बालहृदय (अज्ञानी) हैं।४८।

८ **निषिद्ध कार्य का फल—**

राम के पूछने पर मरते समय रावण ने कहा—

(१) शुभ कृत्यो में विलम्ब न करना चाहिये।
(२) क्रोध के समय कोई भी कार्य न करना चाहिये।
(३) दुष्कृत करने से पूर्व गुणी जनों की सलाह अवश्य लेनी चाहिये।

मैं शुभ कार्यों को कल पर टालता रहा, क्रोध में भाई को निकाला और सीताहरण के समय किसी की सलाह नहीं ली। अतएव तुम्हारे हाथों से मारा जा रहा हूँ।

तुम्हारा संगठन, बंधुप्रेम, पितृभक्ति, नारी-सम्मान आदि गुण सुयश बढ़ायेंगे, वहां बंधुद्रोही-विभीषण को कार्यसिद्धि के लिए साधन बनाना एवं सीता की अग्निपरीक्षा लेना कुयश भी करेंगे।

२८ व्यर्थ काम

१ वृथा वृष्टिः समुद्रेषु वृथा तृप्तेषु भोजनम् ।
वृथा दानं धनाढ्येषु, वृथा दीपो दिवापि च ।

—चाणक्यनीति ५।१५

समुद्र में वृष्टि का होना व्यर्थ है, तृप्त के लिए भोजन करना व्यर्थ है, धनवान को दान देना व्यर्थ है और दिन में दीपक जलाना व्यर्थ है ।

२ अन्धस्य दीपो बधिरस्य गीतम् ।

—संस्कृतकहावत

अंधे को दीपक दिखाना और बहरे को गीत सुनाना व्यर्थ है ।

३ अन्ने अग्गे रोना, अखियाँ दा खो ।

—पंजाबी कहावत

४ निर्वाणदीपे किमु तैलदानम् ?

दीपक बुझने के बाद उसमें तेल डालना व्यर्थ है ।

५ संदीप्ते भुवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक-८०

मकान में आग लग जाने के बाद कुआँ खोदने का प्रयास व्यर्थ है ।

६ नग्नक्षपणके देशे, रजकः किं करिष्यति
नग्न बाबाओं के देश में धोबी का रहना व्यर्थ है ।

७ बलादत्तं बलाद् भुक्तं, बलाद् यच्चापि लेखितम् ।
सर्वान् बलकृतानर्थान्, अकृतान् मनुरब्रीत् ।

—मनुस्मृति ८।१६८

बलपूर्वक दिया हुआ, बलपूर्वक भोग किया हुआ और बलपूर्वक लिखवाया हुआ—ये सब कार्य निरर्थक (नहीं किये के समान) हैं—ऐसे महर्षि मनु ने कहा है ।

८ दुराग्रहस्य हितोपदेशो बधिरस्याग्रतो गानमिव ।४०।
अकार्यज्ञस्य शिक्षणमन्धस्य पुरतो नर्तनमिव ।४१।
अविचारकस्य युक्तिकथनं तुषकण्डनमिव ।४२।
नीचेषूपकृतमुदके विशीर्णं लवणमिव ।४३।
अविशेषज्ञे प्रयासः शुष्कनदीतरणमिव ।४४।
परोक्षे किलोपकृतं सुप्तसंवाहनमिव ।४५।
अकाले विज्ञप्तमूषरे कृष्टमिव ।४६।
उपकृत्योद्घाटनं वैरकरणमिव ।४७।
उपकारापकारासमर्थस्य तोषरोषकरणमात्मविडम्बनमिव ।५०।

—**नीतिवाक्यामृत ११**

हठधर्मी पुरुष को हित का उपदेश देना बहरे के सामने गीत गाने के समान निष्फल है ॥४०॥

कर्तव्यज्ञान-शून्य-मूर्खपुरुष को शिक्षा देना अंधे के सामने नाचने के समान व्यर्थ है ॥४१॥

नीच मनुष्य के साथ किया हुआ उपकार पानी में फेंके हुए नमक की तरह नष्ट हो जाता है ॥४२॥

मूर्ख पुरुष को समझाने में परिश्रम करना सूखी नदी में तैरने के समान निष्फल है ॥४३॥

जो मनुष्य पीठ पीछे किसी का उपकार करता है, वह सोते हुए के पैर दबाने के समान व्यर्थ कष्ट उठाता है ॥४४॥

बिना मौके की बात कहना ऊषर जमीन में बीज बोने के समान निरर्थक है ॥४६॥

जो पुरुष किसी की भलाई करके उसके सामने प्रकट करता है, वह उससे वैर-विरोध करने के समान है ॥४७॥

जो मनुष्य उपकार करने में समर्थ नहीं है, उसे सन्तुष्ट करना और अपकार करने में असमर्थ को असंतुष्ट करना अपनी हंसी कराने के सदृश है ॥५०॥

९ तीन सुंहाली तेरह थाली, वांटण वाली सत्तर जणी ।
झीणी चाल चौहटे चालै, हांती थोड़ी र हलफल घणी ।

—राजस्थानी पद्य

१० कोगले दव होलवाय नहिं, फूंके बादलो खसे नहिं ।
मोवाला तोड़े मड़ा हलवा थाय नहिं, मण नां तूट्या शेरे संधाय नहिं
अने चूंटियो खणे वैर वले नहिं ।

• हाटडी नान्ही ने हरकत घणी, चकली नान्ही ने फड़को मोटो ।
वैंकुंठ नान्हुं ने भगतड़ा बहु, धंधो थोड़ो ने धांधल घणी ।

• घड़ी नी नवराश नहिं ने पैसा नी पैदाश नहिं ।

—गुजराती कहावतें

११ तेली रो बलद सौ कोस चाले, पण रहैं बठै रो बठै

—राजस्थानी कहावत

२६ निकम्मा-बेकार

१ जो काम नहीं करता, उसे खाना भी नहीं चाहिए।

—बाईबिल

२ संसार में कर्तृत्वहीन पुरुष न तो स्त्री है और न पुरुष।

—देवी रानी विदुला

३ है जान के साथ काम, इन्सान के लिए।
बनती नहीं है जिन्दगी, बेकाम के लिए॥

० वाकई मुर्दा है वो, जो आदमी बेकार है।
जिन्दगी बेकार की, जीना नहीं बेजार है।
यानि जो बेकार हैं, दुनियां में वो नादार है।
और इस दुनियाँ में, नादारों की मिट्टी ख्वार है।

—उर्दू शेर

४ जुगनू तभी तक चमकता है जब तक उड़ता रहता है, यही हाल मन का है, जब भी हम रुकते हैं, अन्धेरे में पड़ जाते हैं।

—बेली

५ तावद् गर्जति खद्योत-स्तावद् गर्जति चन्द्रमाः।
उदिते तु सहस्रांशौ, न खद्योतो न चन्द्रमाः।

—जैन-पाण्डवचरित्र

खद्योत और चन्द्रमा वहीं तक गर्जते हैं अर्थात् चमकते हैं; जहां तक सूर्य उदय नहीं होता, उसके उदय होने पर न खद्योत नजर आता है और न चन्द्रमा। दोनों बेकार हैं।

६ एकड़ा वगरनां मींडा, वर बगरनी जान, मीठा वगरनो तीवण ने सरदार वगरनी फौज।

६ भूडंनु छाण न लीप्या नुं न थाप्यानुं

—गुजराती कहावतें

७ त्यागिना किं दरिद्रेण किं कुलीनेन पापिना।
तुष्टेन किं कदर्येण, दर्पान्धेन बुधेन किम्?

दरिद्र का दानी होना, पापी का कुलवान होना, कृपण का तुष्टमान होना और विद्वान का मदान्ध होना काम का नहीं।

८ स किं बन्धुर्यो व्यसनेषु नोपतिष्ठते ॥९॥
तत्किं मित्रं यत्र नास्ति विश्वासः ॥१०॥
स किं गृहस्थो यत्र यस्य नास्ति सत्कलत्रसम्पत्तिः ॥११॥
तत्किं दानं यत्र नास्ति सत्कारः ॥१२॥
तत्किं भुक्तं यत्र नास्त्यतिथिसंविभागः ॥१३॥
तत्किं प्रेम यत्रकार्यवशात् प्रत्यावृत्तिः ॥१४॥
तत्किमाचरणं यत्र वाच्यता मायाव्यवहारो वा ॥१५॥
तत्किमपत्यं यत्र नाध्ययनं विनयो वा ॥१६॥
तत्किं ज्ञानं यत्र मदेनान्धता चित्तस्य ॥१७॥
तत्किं सौजन्यं यत्र परोक्षे पिशुनभावः ॥१८॥
सा किं श्रीर्यया न सन्तोषः सत्पुरुषाणाम् ॥१९॥

—नीतिवाक्यामृत २७

वह स्वजन निकम्मा है, जो आपत्तिकाल में सहायता नहीं करता ॥९॥ वह मित्र निन्द्य है, जो अपने मित्र के धन, धान्य व कलत्र (स्त्री) की रक्षा करने में विश्वासघात करता है ॥१०॥ वह गृहस्थ किस काम का, जिसके यहाँ पतिव्रता एवं रूपवती स्त्री नहीं ॥११॥ वह दान बेकार है, जिसमें सत्कार नहीं ॥१२॥ वह भोजन भोजन नहीं, जिसमें अतिथियों का संविभाग न हो! १३॥

वह प्रेम निन्द्य है, जो किसी से स्वार्थ-सिद्धि के आधार पर जब-कभी किया जाय ॥१४॥

मनुष्य का वह व्यवहार निंदनीय है, जिसमें पाप प्रवृत्तिद्वारा उसकी लोक-निंदा होती हो अथवा जो व्यवहार छल-कपट पूर्ण हो ॥१५॥

वह पुत्र निन्द्य है जो विद्या-विहीन है और माता-पिता आदि शुभचिन्तकों का विनय भी नहीं करता ॥१६॥ उस मनुष्य का ज्ञान निन्द्य है, जिसकी चित्तवृत्ति विद्या के गर्व से दूषित हो चुकी है ॥१७॥

वह सज्जनता किस काम की, जिसमें पीठ पीछे निन्दा-चुगली हो और सामने प्रिय वचन बोलने का प्रदर्शन हो ॥१८॥

सत्पुरुषों की वह संपत्ति किस काम की, जिससे हृदय में संतोष न हो ॥१९॥

९ **अलं तेनामृतेन यत्रास्ति विषसंसर्गः ।५।७२**

उस अमृत से बचो, जिसमें विष का संसर्ग हो ।

० **किं तया गवा, या न क्षरति क्षीरं न गर्भिणी वा ॥११।११॥**

उस गाय से क्या लाभ, जो न तो दूध देती है और न गर्भवती है !

० किं तेन जलदेन, यः काले न वर्षति ॥२२।२३॥

उस मेघ से क्या लाभ ? जो समय पर पानी नहीं वर्षाता ।

० **स किं धन्वी तपस्वी वा, यो रणे, मरणे शरसन्धाने, मनः समाधाने च मुह्यति ॥२६॥** —**नीतिवाक्यामृत**

वह धनुर्धारी निन्द्य है, जो युद्धभूमि में मरते समय एवं कमान पर तीर चढ़ा कर एकाग्रचित्त से लक्ष्यवेध करने में संमोह का प्रदर्शन करता है ।

१० भट्ठ पया सोना, जो कन्ना नु खावे ?

—**पंजाबी कहावत**

वह सोना किस काम का जिस से कान टूटें ।

११ **निकम्मों के काम :**

(क) बैली जट्टी ऊन बैले । —**पंजाबी कहावत**

(ख) नहीं ज्ञान अरु ध्यान, काम-काज पिण को नहीं ।
ते कूकर सम जान, फिरै चरै कलहो करै । —**जयाचार्य**

३० विचारपूर्वक काम

१ लुक बिफोर यू लीप

—अंग्रेजी कहावत

काम करने से पहले सोचो !

२ सोच करे सो शूर है, कर सोचे सो कूर।
सोच कर्‌या मुख नूर है, कर सोच्यां मुख धूड़ ।

३ कभी न करना चाहिये, बिना विचारा काम ।
अब तक मिट पाया नहीं, रावण का बदनाम ।

—दोहासंदोह

४ बिना विचारा जो करे, सो पाछे पछताय ।

५ सहसा करि पीछे पछताही, कहहि वेदबुध ते बुध नांही ।

० सहसा करि पिछताही विमूढ़ा ।

—रामचरित मानस

६ यद् बुद्ध्वा कर्तुमारब्धं, ततोऽन्यद् न विचिन्तयेत्,
तदेव तावन्निष्पाद्यं, तद्‌गतेनान्तरात्मना ।

—बोधिचर्यावतार

विचारपूर्वक जो काम शुरू कर दिया, उसके अतिरिक्त दूसरा चिन्तन भी मत करो । अन्तरात्मा से लीन होकर उसी को सम्पन्न करो ।

७ न पतत्यापदाम्भोधौ, विमृश्यकार्य कारकः ।
विचार कर काम करनेवाला दुःखसमुद्र में नहीं डूबता ।

३१ अपना-पराया काम

१ **वर्णाश्रम के हिसाब से काम :—**

शमो दमस्तपः शौचं, क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं, ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ।४२।
शौर्यं तेजो धृतिदाक्ष्यं, युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च, क्षात्रंकर्म स्वभावजम् ।४३।
कृषि-गोरक्ष्य-वाणिज्यं, वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म, शूद्रस्यापि स्वभावजम् ।४४!

—गीता १८

शम-अन्तःकरण का निग्रह, इन्द्रियदमन, तप, आत्मशुद्धि, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता— ये ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म हैं ।४२। शूरता, तेज, धैर्य, चतुरता, युद्ध में स्थिरता, दान और स्वामिपन–ये क्षत्रिय के स्वाभाविक कर्म हैं ।४३।

खेती, गोपालन और क्रय-विक्रय रूप सत्य-व्यापार—ये वैश्य के स्वाभाविक कर्म हैं सेवा करना शूद्र का स्वाभाविक कर्म है । ४४ ।

२ स्वकार्यं साधयेत् पूर्वं ।

—संस्कृत कहावत

सर्वप्रथम अपना काम सिद्ध करना चाहिए ।

३ अक्कल खेश बाद दरबेश ।

—पारसी कहावत

पहले अपना पीछे पराया ।

४ घर का पूत कुँवारा फिरै पाड़ोस्यां नैं फेरा

—राजस्थानी कहावत

५ रैंट्यो पूणी राम, इतरो मतलब आपरो।
की डोकरियां काम, राजकथा स्यूं राजिया।

—सोरठा संग्रह

६ धोबी ने कारणवश गुस्से होकर अपने कुत्ते को रोटी नहीं दी। रात को चोर आये, कुत्ता नहीं भौंका, गदहे ने उसे भौंकने के लिए कहा, पर कुत्ता नहीं माना तब गदहे ने रेंकना शुरू किया। धोबी चौंक कर उठा और हाथ में मूशल लेकर गदहे पर दो चार प्रहार करके यों कहता हुआ वापस सो गया, कि नालायक! मेरी नींद खराब क्यों कर रहा है। इस रहस्य को पाकर कवि ने निम्नोक्त दोहा कहा—

कामा ब्यारां धामा, करै जिणां नै छाजै।
पड़ै पराई बात में, (तो) मोरा में मूसल बाजै।

७ छोटा काम बड़ो करे, तो न बड़ाई होय।
ज्यों रहीम हनुमंत को गिरधर कहे न कोय।

८ परकार्येषु को नाम, न शीतलः।

—नीतिवाक्यामृत ११।३३

दूसरों का काम करने में कौन ठंडा नहीं होता।

९ आखों का काम भौंहों से नहीं निकलता।

—हिन्दी कहावत

३२ यथाशक्ति काम

१ स्वशक्ति ज्ञात्वा कार्यमारभेत ।

—कोटलीय-अर्थशास्त्र

अपनी शक्ति को देखकर काम शुरू करना चाहिए ।

२ अपनी पहुँच विचारिके, करिये कारज दौड़ ।
तेते पाँव पसारिये, जेती लम्बी सौर ।

—वृन्दकवि

३ (क) पाथरणु जोई पग ताणवा—
० सोड़ प्रमाणे साथ रो करवो, गजा प्रमाणे गातर करवो ने घर प्रमाणे वारशाख ।

—गुजराती कहावतें

(ख) व अन्दाजेगलीम पादराज कुन्

—पारसी कहावत

(ग) कट योर कोट एकार्डिंग टू यौर क्लोथ

—अंग्रेजी कहावत

४ अयथाबलमारम्भो, निदानं क्षयसंपदः ।

—शिशुपालवध २।९४

अपनी शक्ति का अतिक्रमण करके किया गया काम अत्यन्तहानि का कारण होता है ।

५ लांबानी साथे टुंको जाय, मरे नहिं तो मांदो थाय ।

—गुजराती कहावत

६ सूरज साह्मो थूक्योड़ो आपरै ही माथै पड़ै ।
० सूरज साह्मी धूंड़ उछालै तो आपरै ही माथै पड़ै ।

—राजस्थानी कहावतें

७ कीड़ी कहै, मां ? गुड़ री भेली लांवु ! हां बेटी, थारी कमर कंवे हैं नी

—राजस्थानी रूपक

८ मियैं जी री दौड़ मशीत तांई।

—राजस्थानी कहावत

९ **होड से हानि—**

(क) होडा-होड क्यूं गोडा फौड़ै ?

(ख) होड करयां भोड फूटै ।

—राजस्थानी कहावतें

१० **देखा-देखी से नुकशान—**

० आड तिरंती देख नै, तू क्यूं डूबै कग।
देखा देखी जो करै, तल मूंडी ऊपर पग ॥

० देखा देखी साधे जोग, छीजे काया बाधे रोग,

—राजस्थानी पद्य

३३ अतिकाम

१ अतिदानाद् बलिर्बद्धो, ह्यतिगर्वेण रावणः।
अतिरूपेण वै सीता, अति सर्वत्र वर्जयेत् ॥

—चाणक्यनीति ३।१२

अतिदान से बलि बंधा, अति अभिमान से रावण मारा गया और अति रूप से सीता का अपहरण हुआ। अतः अति का सर्वत्र वर्जन करना चाहिये।

२ टू मच ऑफ वन थिंग इज गुड फोर नथिंग।

—अँग्रेजी कहावत

अति सर्वत्र वर्जनीय है।

३ **अतिवर्जनीय :**

अति वर्जनीय है सब जगह, सिद्धान्त सुनाते हैं।[1]
हद से जो बाहर जाते हैं, वे सुख नहीं पाते हैं ॥ध्रुव॥
अति खाने से रोगवृद्धि, अति पढ़ने से सिरदर्द।
अति सोने से नर, निकम्मे से बन जाते हैं ॥१॥
अति बक-बक करनेवालों का, मान नहीं रहता।
अति मौनी संसार में, गूँगे कहलाते हैं ॥२॥
अति धन संचय-कर्ता सुख से, सो नहीं सकते।
अति मोटे तनवालों को, आ लोग उठाते हैं ॥३॥
अति खर्चे से तंगी, अति कंजूसी से बदनाम।
अधिक हास्य से प्रेम में, पत्थर पड़ जाते हैं ॥४॥

---

१ तर्ज—आजादी का दीवाना था।

९

अति मंथन से अमृत-सा घी, विष बन जाता है।
अति स्नेह से वक्त पर, नर शान गँवाते हैं ॥५॥
अति सर्दी से निमोनिया, अति गर्मी से हैजा।
अधिक वृष्टि से नाज-पात, सारे सड़ जाते हैं ॥६॥
अति क्रोधी चण्डकौशिक के, कैसे गये थे प्राण।
अति भोगी ब्रह्मदत्त नरक में, मार खाते हैं ॥७॥
अति लोभी सागर की, कैसी बिगड़ी थी दशा।
धनमुनि अति में अन्त है, ज्ञानी जन गाते हैं ॥८॥

—उपदेश सुमनमाला

४ अतिभुक्तिरतीवोक्तिः, सद्यः प्राणापहारिणी।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

अति खाना एवं अति बोलना—ये दो क्रियायें शीघ्र ही प्राणनाश करने वाली हैं।

५ व्यायाम-हास्य-भाष्याध्वं, ग्राम्यधर्म-प्रजागरान्।
नोचितानपि सेवते, बुद्धिमानतिमात्रया ॥

—चरकसंहिता-सूत्रस्थान ७।३४॥

अभ्यस्त हो गए हों तो भी व्यायाम, हास्य, भाषण, मार्गगमन, मैथुन, जागरण ये कार्य अति मात्रा में न करें।

६ अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप,
अति का भला न बोलना, अति की भली न चुप ॥

७ मांसं मृगाणां दशनं गजाना-मत्यन्तरूपं प्रमदाजनानाम्।
अर्थो नराणां फलितं द्रुमाणां, गुणाधिका वैरकरा भवन्ति ॥

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ १७८

मृगों का मांस, हाथी के दाँत, स्त्रियों का अधिक रूप, पुरुषों का धन, और वृक्षों का फलना, अधिक गुणवाली होने से ये सब चीजें वैर का कारण बनती हैं।

८ घण जायां कुलहाण, घण बूठां कण हाण ।

० घणी चतुराई चूल्है में पड़ै, घणी सैणप में किर-किर पड़ै ।

० घणी दायां जापै रो नाश करै, घणी सराही खीचड़ी दांता रै लागै ।

० घणी खांची टूटै, घणो हेत लड़ाई रो मूल ।

० घणो हेत टूटण नै, बड़ी आँख फूटण नै ।

० घणां मामां रो भाणजो भूखो मरै ।

—राजस्थानी कहावतें

९ टू मैनी कुक्स स्पोइल डिनर ।

—अँग्रेजी कहावत

० बहुत जोगी मठ उजड़ ।

—हिन्दी कहावत

३४ अतिपरिचय अपमान का हेतु

१ अतिचिरं निवासेन, पियो भवति अप्पियो ।

—जातक १८।५२८।१३६

लम्बे सहवास से प्रिय भी अप्रिय हो जाता है ।

२ अति परिचयादवज्ञा, संततगमनादनादरो भवति ।
लोकः प्रयागवासी, कूपे स्नानं समाचरति ।।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ १७६

अति परिचय से अवज्ञा एवं सदा जाने से अनादर होता है । इसी कारण प्रयागनिवासी लोग गंगा को छोड़कर कूप में स्नान करते हैं ।

३ टू मच फैमिलियरिटी ब्रिग्ज कॉटेप्ट ।

—अंग्रेजी कहावत

कदर खो देता है रोज का आना-जाना ।

—उर्दू कहावत

४ प्रथमदिवसचन्द्रो वन्द्यते सर्वलोकैः,
स च सकलकलाभिः पूर्णचन्द्रो न वन्द्यः ।
अतिपरिचयदोषात् कस्य नो मानहानि-
र्नव-नवगुणरागी प्रायशः सर्वलोकः ।।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ १८३

दूज के दिन चन्द्रमा को सब लोग नमस्कार करते हैं किन्तु पूर्णिमा के दिन सोलहकला युक्त होने पर भी उसे कोई नमस्कार नहीं करता । अति संसर्ग होने पर किसका अपमान नहीं होता । लोग नए-नए गुणों के अनुरागी हैं ।

५ बिना नव्यता के कहाँ ! आकर्षण और मान ।
दिलचस्पी रहती नहीं, (जो) रोज बने पकवान ।।

—दोहासंदोह

६ मुंहडे चढ़ायां माथै चढ़ै, सेंधो कुत्तो घररां ने खावै,
० सेंधो सगो सूंठ रो गांठियो।

—राजस्थानी कहावतें

७ **सम्मान रह सकता नहीं, अति परिचय होने से।**[1]
सत्कार रह सकता नहीं, अति परिचय होने से ।।ध्रुव।।

दूज के दिन चांद को, सब दुनियाँ देखती।
पूनम को फिर कोई नहीं, अति परिचय होने से ।।

तीन कोड़ियों के पाजी भी, राजा साहब को।
दिलचाही कह देते हैं, अतिपरिचय होने से ।।

मलयाचल की भीलनी, चन्दन जला देती।
लकड़ी-सी लकड़ी मानती, अतिपरिचय होने से ।।

तैराक जल से नहीं डरते, त्यों सुभट लड़ाई से।
गार्डों के रेल खेल है, अतिपरिचय होने से ।।

तीर्थ बनाए हैं इसी कारण पहाड़ों में।
नित्य-गंगा पानी है, अतिपरिचय होने से ।।

थियेटर और सिनेमा में, पर्दा है इसीलिए।
आनन्द वह रहता नहीं, अतिपरिचय होने से ।।

दुकानदार अलमारियों में, माल सजाते हैं।।
आकर्षण हो सकता नहीं, अतिपरिचय होने से ।।

इसी हेतु से मुनियों का, नवकल्प विहार है।
संयम को खतरा है सही, अतिपरिचय होने से ।।

—उपदेश सुमनमाला

---

१ तर्ज—आजादी का दीवाना था····।

३५ उल्टा काम

१ कागलो हंस री चाल सीखण नें गयो,
पण आपरी ही भूल आयो।
○ लेवण गई पूत, खो आई खसम।
○ मैं लेण आई तनैं, तू ले बेठी मनैं।
○ रोवती नें राखी तो कहै, सागै ही ले चालो!

—**राजस्थानी कहावतें**

२ आऊट ऑफ दि फ्राइंग पेन इन टु दि फायर। —**अंग्रेजी कहावत**
○ नमाज छोड़ावण गया तो रोजा गलै पड़्या।

—**राजस्थानी कहावत**

○ गो आऊट फॉर वल एन्ड कम होम शोर्न। —**अंग्रेजी कहावत**
○ चौबेजी गये छब्बे होने, दो घर के खोय लगे रोने।

—**हिन्दी कहावत**

३ **उल्टे भये राम**—गांव के ठाकुर घोड़ी पर चढ़कर कहीं जा रहे थे। पीछे-पीछे सईस (नौकर) नंगे पैर दौड़ रहा था। जेठ मास की कड़ी धूप होने से उसके पैर जलने लगे और वह दीनस्वर में चिल्लाया—**जोड़ा दे राम-जोड़ा दे राम-जोड़ दे राम**! ठाकुर को दया आ गई उन्होंने अपना कीमती जूतियों का जोड़ा उसे दे दिया। जूतियां पहनकर वह फिर चिल्लाने लगा—**घोड़ा दे राम-घोड़ा दे राम**! यह तो बड़ा बदमाश निकला—ठाकुर यों सोच ही रहे थे कि चलती-चलती घोड़ी रास्ते में ही ब्या गई। ठाकुर ने कहा—उठाले इस बछेड़े को, राम ने दे दिया तुझे घोड़ा। बेचारा नौकर होने के नाते उस बछेरे को लेकर चला तो सही लेकिन उसके मुख से सहसा पुकार होने लगी—**उल्टे भये राम-उल्टे भये राम**! अर्थात् मैं घोड़े पर चढ़ना चाहता था पर घोड़ा मेरे सिर पर चढ़ गया।

४ उछाल र भाटो करम में क्यूं लेणो? —**राजस्थानी कहावत**

३६ मनचाहा काम

१ भावतुं हतुं ने वैद्ये कह्युं, रोती हती ने पीहरिया मल्या ।

० सोनुं ने तेमां सुगंध, मोसाल विवाह ने मा पीरसणे, शंख ने दूध-भर्यो, दूध ने साकर भली, सिंह ने पांखालो ।

—गुजराती कहावतें

२ (क) मामै रो व्याव र मा पुरसगारी,
जीम रे बेटा रात अंधारी ।

(ख) सोनो र सुगंध ।
चोपड़ी र दो-दो ।

(ग) ऊंघती ने बिछावणो लाधग्यो,

० भूखै नै खीर-खांड रो भोजन लाधग्यो

० बैन तो उमाही बैठी ही र. भाई लेवण आग्यो ।

—राजस्थानी कहावतें

३७ हाथ कमाया काम

१ पेट चोली ने शूल पैदा कर्‌युं,
० हाथे करी होली रम्यां,
० हाथ नां कर्‌या हैये वाग्या,
० दीवो लई कूवामां पड्‌या,
० देखते डोले छेतरायां,
० कोणे कह्य हतुं के बेटा बाबलिये चढ़जे।

—गुजराती कहावतें

२ कुंए में एक बूढ़ा मेंढ़क परिवार सहित रहता था। बार-बार कहा-सुनी करने से परिवार वाले नाराज हो गए और उसे हैरान करने लगे। गुस्से होकर बूढ़ा एक सांप को ले आया। सांप प्रतिदिन दूसरे मेढ़कों को खाने लगा। उसे देखकर बूढ़ा खुश हो रहा था। खाते-खाते सब मेंढ़क समाप्त हो गये। अब बूढ़े की बारी आई और ज्योंही सांप उसे निगलने लगा, बूढ़े ने रोते-बिलखते निम्नोक्त दोहा कहा—

भीड़ करावण लावियो, कर न्यात्यां सूं रोष।
हाथ कमाया कामड़ा, किण नै दीजै दोष।

३८ दो-दो काम नहीं होते

१ **दो-दो बातें :—**

कैसे बने-कैसे-बने-कैसे बने जी ?[१]
एक साथ कहो ! दो-दो बातें कैसे बने जी ?
कैसे बने-कैसे बने-कैसे बने ज़ी ?
माल भी खाना मोक्ष भी जाना कैसे बने जी ? ध्रुवपद

घूंघट रखकर नाच दिखाना बन सकता नहीं,
छाछ मांगकर कुल्हड़ी छिपाना बन सकता नहीं,
पथ्य न रखना रोग मिटाना कैसे बने जी । एक० १

खर्च न करके अच्छा खाना बन सकता नहीं,
व्यापार न करके धन कमाना बन सकता नहीं,
दान न देना मान बढ़ाना कैसे बने जी ? एक० २

दीप बिना अंधेर मिटाना बन सकता नहीं,
नहीं पढ़ करके डिगरी पाना बन सकता नहीं,
विजय न करना वीर कहाना कैसे बने जी ? एक० ३

दूध-दही खा मक्खन चाहना बन सकता नहीं,
लोलुपता रख व्रती कहाना बन सकता नहीं,
ध्यान भी करना दिल न टिकाना कैसे बने जी ? एक० ४

मन नहीं धोना और खमाना बन सकता नहीं,
बीज न बोकर खेत कटाना बन सकता नहीं,
व्रत नहीं लेकर **धन** ! शिव पाना कैसे बने जी ? एक० ५

—**उपदेशसुमनमाला**

---

१ तर्ज—दिल्ली चलो····

२ दो-दो पंथ न चालै पंथा, दो-दो वस्त्र न सींवै कंथा।
दो-दो काम न हुवै अयाणा ! माल भी खाणा र. मोख भी जाणा।

—राजस्थानी पद्य

३ बे घोड़े चढ़ाय नहिं, बेघर नो परोणो भूखे मरे।
- दही मां ने दूध मां बन्ने मां हाथ न रखाय।
- खांडणीमां माथुं ने धमकारा थी बीहवुं ?
- हसवुं ने भसवुं साथे बने नहिं।
- नातो ने नाणुं बे रखाय नहिं।
- दरिया में रहेवुं ने मगरमच्छ थी वैर।
- गाम मां रहेवुं ने पटेल थी वैर।
- बत्तीस दांत बच्चे रही जीभ ने दांत थी वैर।

—गुजराती कहावतें

४ इट इज हार्ड टु सिट ऐट रोम एन्ड स्ट्राइव विथ दि पोप।

—अंग्रेजी कहावत

रोम में रहना और पोप से मनमुटाव।

५ चींटी चावल ले चली, बिच में मिल गई दाल,
दो-दो बातां नहीं हुवै, एक झाल एक डाल।

६ इश्क के शौकीन खर्च के कोता।

—हिन्दी कहावत

७ मीठा खाऊ-मंद कमाऊ।
- हाथी सूं बायला करै र दरवाजा सांकड़ा राखै,
- गाय घास स्यूं बायला करै तो खावै कांई ?

—राजस्थानी कहावतें

८ धान खावुं धणी नुं ने गीत गावा वीरांना,
रहेवुं कोरवों मां ने वांचवी पांडवोंनी।

० पँगड़े पग अने ब्रह्म-उपदेश।

—गुजराती कहावतें

९ चाहे बाबा रेल में, चाहे बाबा जेल में।

—हिन्दी कहावत

१० आ पार के पेले पार।

० गादी-तकिया के दोरी लोटो।

—गुजराती कहावतें

११ पल्ले नहीं धेला, करदी मेला-मेला।

—पंजाबी कहावत

एक पंथ दो काज

१ चलो सखी वहां जाइए, जहाँ वसे व्रजराज।
महिरस बेचण हरि मिलण, एक पंथ दो काज।

२ एक पंथ बेकाज।
दाढ़ी नीं दाढ़ी ने सांवरणी नी सांवरणी।

• मानीए त्यां सुधी शालिग्राम, नीकर ऊपर वटणा (पत्थर)।

० गाजरनीं पींपूड़ी बागी तो बागी नीकर करड़ खाधी।

—गुजराती कहावतें

३ गाजर की पूंगी बाजी जितै बजाई, नहीं तो तोड़ खाई।

—राजस्थानी कहावतें

४ नाले चोपड़ियां, नाले दो।
नाले मुंजवगड़-नाले देवी दे दर्शन।

—पंजाबी कहावतें

५ गंगा का स्नान और मूंज बगड़ का सौदा।

—हिन्दी कहावत

६ पुजारी रात के समय तो छोटे-छोटे पत्थरों से गोफण चलाकर खेत में पक्षियों को उड़ाता था और सबेरे उन्हें जोड़कर शालिगरामजी की मूर्ति बना देता था। एकदिन गांव के ठाकुर सबेरे जल्दी ही दर्शन करने आ गए और मूर्ति न देखकर पूछने लगे—

देव तो दीसै नहीं, पड़ी दीसै पाघां।
अरे अजोग भखड़ा! पगां किणरै लागां!

पुजारी ने कहा—

थे तो ठाकरां भोला घणां, मैं यूंहीं चलाऊं काम।
राते वाहूं गोफणां, दिन में शालिगराम॥

४० काम को अधूरा मत रखो

१ अधूरे काम मैं पसन्द नहीं करता। यदि वे उचित हैं तो पूरे मन से करो और अनुचित हों तो उन्हें छोड़ दो।

—गिलपिल

२ लाला ! लाख त्यांरे सवा लाख, नवाणु ं त्यारे पूरा सौ,

- ∘ गाड़ा ऊपर गांसडी ने लादी ऊपर पूलो।
- ∘ सांप ने भेगा बींछी ना पण जाणवा।
- ∘ सौ मण सूंठ नुं थसे त्यारे अच्छेर आदा नुं पण थसे।

—गुजराती कहावतें

३ सो ज्यूं ही सवा सौ,

- ∘ सौ ज्यूं ही पच्चास, गांगो ज्यूं हरदास।

—राजस्थानी कहावतें

४ जाट कहै हे जाटणी ! होला किताक सरसी ?
आखो खेत उन्नाल ले ! बार-बार कुण सरसी।

१ अव्याक्षेपो भविष्यन्त्याः, कार्यसिद्धेर्हि लक्षणम् । —रघुवंश
बीच में विघ्न न होना होनेवाली कार्यसिद्धि का लक्षण है ।

२ मनः परिजन-शकुन-पवनानुलोम्यं भविष्यतः कार्यस्य सिद्धेर्लिङ्गम् ।
—नीतिवाक्यामृत २५।६२

मन, स्वजन, शकुन व वायु की अनुकूलता भविष्य में किये जाने वाले कार्य की सिद्धि (सफलता) के ज्ञापक चिन्ह हैं ।

३ मन्त्ररक्षणे कार्यसिद्धिर्भवति । —चाणक्यसूत्र २३
मंत्र-गुप्त बात की रक्षा करने से ही कार्यसिद्धि होती है ।

४ मिन्नी री चाल जावणो कुत्तैरी चाल आवणो ।
—राजस्थानी कहावत

५ तदन्धवर्तकीयं काकतालीयं वा यद् मूर्खमन्त्रात कार्यसिद्धिः ।
—नीतिवाक्यामृत १०।६२

जो मूर्ख की सलाह से कार्य सिद्धि हो जाय, उसे अन्धवर्तकीय या काकतालीय न्याय ही समझना चाहिए ।

६ देश-काल-बलं ज्ञात्वा, सर्वकार्याणि साधयेत् ।
देश, काल और अपने बल को देखकर सभी कार्य साधने चाहिये ।

७ दक्षिणे यदि वा वामे, यत्र वायुर्निरन्तरम् ।
तं पादमग्रतः कृत्वा, निःसरेन्निजमन्दिरात् । १६ ।
स्वजन-स्वामि-गुर्वाद्या, ये चापि हितचिन्तकाः ।
जीवाङ्गे ते ध्रुवं कार्याः, कार्यसिद्धिमभीप्सुभिः । २१ ।
—श्राद्धविधि पृष्ठ ७७

दक्षिण अथवा वाम जो भी स्वर निरन्तर चलता हो, उसी तरफ के पैर को आगे करके अपने स्थान से प्रयाण करो । कार्यसिद्धि हो जायेगी ।१६। कार्यसिद्धि एवं जय-सुख-लाभ के इच्छुकों को स्वजन, स्वामी एवं गुरु आदि जो भी अपने हित-चिन्तक हों, उन्हें दाहिनी तरफ रखना चाहिए ।२१।

४२ कार्य की असिद्धि

१ सर्वत्र संशयानेषु नास्ति कार्यसिद्धिः ।

—नीतिवाक्यामृत २६।५३

सभी स्थानों में सन्देह करनेवालों के कार्यसिद्धि नहीं होते ।

२ नालसाः प्राप्नुवन्त्यर्थं, न तुष्टा न च मानिनः ।
न च लोकरवाद् भीता, न च शश्वत् प्रतीक्षिणः ।

—भगवान् व्यास

आलसी, सन्तुष्ट, अभिमानी, लोकापवाद से डरने वाले, सदा प्रतीक्षा करते रहने वाले व्यक्ति कभी अपने लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर सकते ।

३ आसन–शयन–गमन--जल्पन--पठन--भोजन-पान--औषधिसेवन-कृषि-वाणिज्य-संग्राम आदि सभी कार्य विधिपूर्वक अच्छे हैं । विधि का पालन न करके कार्यसिद्धि न होने की शिकायत करना अज्ञान है ।

४ मनसा चिन्तितं कर्म, वचसा न प्रकाशयेत् ।
अन्यलक्षितकार्यस्य, यतः सिद्धिर्न जायते ।

—सुभाषितरत्न-भांडागार १६७

मन में सोचा हुआ कार्य मुंह से प्रकाशित नहीं करना चाहिए, क्योंकि अन्य-लक्षित कार्य की सिद्धि नहीं हुआ करती ।

५ वशर ! राजेदिली कहकर, जलीलो-ख्वार होता है ।
निकल जाती है खुशबू तो, गुल बेकार होता है ।

—उर्दू शेर

६ छठ चौदस मावस रवि होई,
तामें कार्य-सिद्धि नहीं होई ।

जन्मे सो जीवे नहीं, बसे सो उज्जड़ जाय।
संग्राम चढ्यो जीते नहीं, बरै सो विधवा थाय ।।

—राजस्थानी पद्य

७ न सिद्धावौत्सुक्यं गच्छेत्, नासिद्धौ दैन्यम् ।

—चरकसंहिता-सूत्रस्थान

सफलता में उत्सुकता और असफलता में दीनता नहीं लानी चाहिए ।

८ **विघ्न :—**

(क) प्रथमे ग्रासे मक्षिकापातः ।

—संस्कृत कहावत

पहले ग्रास में ही मक्खी आ पड़ी ।

(ख) श्री गणेशाय नमः में ही डबको,
सिद्ध श्री में ही खोट, बिस्मिल्ला ही गलत ।

—राजस्थानी कहावतें

(ग) बहुविघ्नास्तु सदा कल्याणसिद्धयः ।

—कथासरित्सागर

एक साथ अनेक विघ्नों का होना कल्याणप्रद माना जाता है ।

४३ कर्तव्य

१ अनासक्त-चित्त से अपनी सुखकल्पना में पड़े बिना प्राप्त हुए कार्यों को ईश्वर-आज्ञा समझकर पूरा करना व फल उसी को अर्पण कर देना—यही कर्तव्य की व्याख्या है। —**विवेकानन्द**

२ कर्तव्य में मिठास है। —**गांधी**

३ कर्तव्यपालन स्वभावतः आनन्द में पुष्पित होता है। —**फिलिप्स ब्रुक्स**

४ कर्तव्य के प्रति कठोर रहो, पर हृदय में सरल ! अपने पर कठोरता बरतो, पर मित्रों पर नहीं ! —**चीनी सुभाषित**

५ कर्तव्य के आगे प्रेम का भी बलिदान दे दो !

६ कर्तव्यपालन करते समय शरीर को भी जाने दो ! किन्तु शक्ति से बाहर कुछ उठा लेना कर्तव्य के प्रति राग होगा। —**गांधी**

७ भली भाँति अपने कर्तव्य का पालन करके संतुष्ट हो जाओ और दूसरों को इच्छानुसार करने के लिए छोड़ दो। —**पीथागोरस**

८ अपना फर्ज पूरा करने की कोशिश कर। तभी तू जान पाएगा कि तेरे अन्दर क्या है। —**गेटे**

९ पृथ्वी-पानी-अग्नि-हवा-वृक्ष-चन्द्र-सूर्य आदि सभी अपना कर्तव्य निभा रहे हैं, इन्सान को भी इनसे कुछ सीखना चाहिए।

१० यदि मैं अपने वर्तमान कर्तव्य के प्रति वफादर हूं तो मेरे भविष्य की रक्षा ईश्वर स्वयं करेगा। —**बीडेल**

११ जो व्यक्ति सत्य के साथ कर्तव्यपरायणता में लीन है, उसके मार्ग में बाधक होना कोई सरल मार्ग नहीं। —**टैगोर**

४४ विशेष कर्तव्य

१ गन्तव्यं राजपथे ।

—संस्कृत कहावत

राजमार्ग में चलना चाहिए ।

२ घनाम्बुना राजपथे हि पिच्छले,
क्वचिद् बुधैरप्यपथेन गम्यते ।

—नैषध

मेघ के जल से यदि राजमार्ग कर्दम युक्त हों तो बुधजन कभी-कभी अमार्ग से भी चला करते हैं ।

३ प्रतिपाद्यानुरूपं वचनमुदाहर्तव्यम् । ४३
आयानुरूपो व्ययः कार्यः । ४४
ऐश्वर्यानुरूपो विलासो विधातव्यः । ४५
धनश्रद्धानुरूपस्त्यागोऽनुसर्तव्यः । ४६

—नीतिवाक्यामृत २६

मनुष्य को अपने प्रतिपाद्य विषय के अनुकूल वचन बोलना चाहिए । ४३ ।
अपनी आमदनी के अनुसार खर्च करना चाहिए । ४४ ।
अपने धन-वैभव के अनुरूप विलास (ऐश-आराम) करना चाहिए । ४५ ।
अपने धन और श्रद्धा के अनुरूप दान देना चाहिए । ४६ ।

४ तीर लगने पर डाक्टर को सबसे पहले खून बन्द करना एवं तीर निकालना जरूरी है, न कि किसने मारा, कहां मारा गया आदि-आदि पूछना ।

५ त्यजेद्धर्मं दयाहीनं, विद्याहीनं गुरुं त्यजेत् ।
त्यजेत् क्रोधमुखीं भार्यां, निस्नेहान् बान्धवांस्त्यजेत् ।

—चाणक्यनीति ४।१६

दयाहीन धर्म, विद्याहीन गुरु, क्रोधवाली स्त्री और स्नेहहीन स्वजन इन चारों का त्याग कर देना चाहिए।

६ त्रीण्यवश्यं भर्तव्यानि।
माता कलत्रमप्राप्तव्यवहाराणि चापत्यानि।

—नीतिवाक्यामृत १८।२

माता, स्त्री और काम के योग्य नहीं बनी हुई संतान इन तीनों की अवश्य रक्षा करनी चाहिए।

७ विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य, स्वयं छेत्तुमसांप्रतम्।

—कुमारसंभव

अपने बढ़ाये हुए विष वृक्ष को भी नहीं काटना चाहिए।

●●

४५ व्यवहार

१ व्यवहार वह दर्पण है, जिससे प्रत्येक का मुँह देखा जा सकता है।
—गेटे

२ धर्मादपि व्यवहारो गरीयान्। —कौटलीय अर्थशास्त्र
धर्म से भी व्यवहार बड़ा है।

३ मैनर्स मेक दी मैन —अंग्रेजी कहावत
व्यवहार ही मनुष्य को गिराता-उठाता है।

४ जाति मात्रेण किं कश्चिद्, वध्यते पूज्यते क्वचित्।
व्यवहारं परिज्ञाय वध्यते पूज्यतेऽथवा।
—हितोपदेश १।५८

जातिमात्र से कोई भी कहीं वध्य अथवा पूज्य नहीं होता। व्यवहार देख कर ही उसका वध अथवा पूजन किया जाता है।

५ चन्दन ! तन हलका भला, मन हलका सुखकार।
पर हलके अच्छे नहीं, वाणी अरु व्यवहार। —दोहाद्विशती

६ मेरे प्रति जो अच्छा व्यवहार नहीं करते मैं उनके प्रति अच्छा व्यवहार करता हूँ, ऐसे सब लोग अच्छे बनते हैं। —लाओत्से

७ पति-पत्नी का, माता-पिता और संतान का, भाई-भाई का, मित्र-मित्र का एवं राजा-प्रजा का इस तरह संसार में पांच सम्बन्ध हैं। इन सबसे व्यवहार करने में तीन बातें चाहिए विवेक, कल्याण-कामना और साहस। —कांगफ्यूत्सी

८ घर में तीन तरह के व्यक्ति होते हैं—बच्चे, स्त्रियां और वृद्ध। बच्चों से स्नेह, स्त्रियों का सम्मान और वृद्धों के साथ उचित व्यवहार होना चाहिए।

४६ लोकव्यवहार

१ यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं, नादरणीयं नाचरणीयम् ।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

अच्छा काम भी यदि लोकविरुद्ध हो, तो उसको पूरा सोचे समझे बिना नहीं करना चाहिए ।

२ दांता रो पीस्योड़ो नहिं खावणो, घट्टीरो पीस्योड़ो खावणो ।

—राजस्थानी कहावत

३ लोकः खलु आधारः, सर्वेषां धर्मचारिणां यस्मात् ।
तस्माल्लोकविरुद्धं, धर्मविरुद्धं च संत्याज्यम् ।

—प्रशमरति १३१

धर्म का आचरण करनेवालों का आधार लोक है, अतः लोक-विरुद्ध और धर्मविरुद्ध व्यवहार को त्याग देना चाहिए ।

४ लोकन के व्यवहार को, डर करिये दिन रैन ।
रघुपति सीता परिहरी, सुनत रजक के बैन ।

—वृन्द कवि

५ लोकव्यवहरज्ञो हि सर्वज्ञोऽन्यस्तु प्राज्ञोप्यवज्ञायत एव ।

—नीतिवाक्यामृत १७।६०

लोक व्यवहार को जाननेवाला ही वस्तुतः सर्वज्ञ है । अव्यवहारज्ञ प्राज्ञ होने पर भी अपमानित ही होता है ।

६ लोकस्थितिं यदि न वेत्ति यथानुरूपं,
सर्वस्य मूर्खनिकरस्य स चक्रवर्ती ।

जो लोकस्थिति को यथारूप नहीं जानता, वह मूर्खों के संघ का चक्रवर्ती है ।

७ शास्त्रज्ञोप्यलोकज्ञो मूर्खतुल्यः ।

—चाणक्यसूत्र ५४३

शास्त्र को जानता हुआ भी जो लोक-व्यवहार को नहीं जानता, वह मूर्ख के समान है।

८ जामनगर में एक सेठ घोड़े सवार होकर श्मशान यात्रा में जाया करता था। लोगों ने उसे काफ़ी कहा। लेकिन वह नहीं माना। नतीजा यह निकला कि जब उसकी माँ मरी तब राजमहल से २०० घोड़े लेकर सारे लोग उन पर चढ़ कर आए। सेठ ने माफी माँगी।

—श्रुति के आधार पर

९ वयसः कर्मणोऽर्थस्य, श्रुतस्याभिजनस्य च।
वेष-वाग्-बुद्धि सारूप्य-माचरन् विचरेदिह ॥

—मनुस्मृति ४।१८

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने वय, कर्म, धन, ज्ञान एवं परिवारवालों के अनुसार ही वेष-वाणी एवं बुद्धि रखे।

१० काणों के देश में तू भी अपनी एक आँख बँद कर ले?

११ बहुजनविरुद्धमेकं नानुवर्तेत।

—कौटलीय अर्थशास्त्र

बहुत लोगों से विरोध रखनेवाले एक व्यक्ति का अनुसरण नहीं करना चाहिए।

●●

४७ लोकप्रियता

१ लोकप्रियता के चार लक्षण हैं—

१ हंसमुख चेहरा २ उदार हाथ, ३ मीठी बोली ४ स्नेही हृदय।

—चाणक्य

२ पुजवाने की जगह पूजना, मनवाने की जगह मानना, चलाने की जगह चलना और करवाने की जगह करना सीखो !

३ का कोई नै कर लेणो र का कोई रो हो रहणो।

—राजस्थानी कहावत

४ लोकप्रियता के इच्छुक निम्न २२ प्रश्न अपने आपसे पूछें।

१ क्या तुम प्रण के पक्के हो ?

२ क्या तुम्हें अपने कर्त्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान है ?

३ क्या तुम सत्य को लेने एवं असत्य को छोड़ने तैयार हो ?

४ क्या तुम वाद-विवाद व लड़ाई-झगड़ों से बचने का प्रयत्न करते हो ?

५ क्या तुम माता-पिता आदि का उचित आदर करते हो ?

६ क्या तुम नये या पुराने विचारों को धैर्यपूर्वक सुन सकते हो ?

७ क्या तुम्हारा पड़ोसियों एवं जाति-बन्धुओं के साथ व्यवहार अच्छा है ?

८ क्या तुम प्रतिदिन आध्यात्मिक पुस्तकें पढ़ते हो ?

९ तुम्हें लोग मतलबी तो नहीं समझते ?

१० तुम दूसरों का हक मारने का यत्न तो नहीं करते ?

११ तुम फैशन के गुलाम तो नहीं हो ?

१२ तुम्हें देखकर तुम्हारे स्त्री-बच्चे या नौकर डरते तो नहीं ?

१३ तुम्हें दुनियाँ गप्पी या बातूनी तो नहीं समझती ?

१४ तुम सुस्त या सुखप्रिय तो नहीं हो ?

१५ तुम नौकरों व बच्चों को बार-बार झिड़कते तो नहीं ?

१६ तुम झूठी हाँ में हाँ तो नहीं मिलाते ?
१७ तुम ताश, चौपड़, शतरंज, व नॉवल पढ़ने में तो समय व्यतीत नहीं करते ?
१८ तुम शराब-तम्बाकू आदि तो नहीं पीते ?
१९ तुम्हारे में जूआ, रंडीबाजी आदि व्यसन तो नहीं है ?
२० तुम खाने-पीने के लोलुप तो नहीं हो ?
२१ तुम नाटक सिनेमा के शौकीन तो नहीं हो ?
२२ तुम अन्याय की कमाई तो नहीं खाते ?

—संलिकत

५ लोकप्रियता प्राप्त करने के सात साधन हैं—
सेवा, सद्भावना, सहयोग की वृत्ति, उदारता सदा प्रसन्न मुख रहना, दूसरों को सन्मान देना और मधुर व्यवहार करना।

तीसरा कोष्ठक

१ कर्म

१ कम्मं च मोहप्पभवं वयंति,
कम्मं च जाई-मरणस्स मूलं। —उत्तराध्ययन ३२।७

कर्म मोह से उत्पन्न होता है और वह जन्म-मरण का मूल कारण है।

२ कम्ममूलं च जं छणं। —आचारांग १।३।१

कर्म का मूल क्षण अर्थात् हिंसा है।

३ कम्माणि बलवंति हि। —उत्तराध्ययन २५।३०

निश्चित रूप से कर्म बलवान है।

४ कम्मेहि लुप्पंति पाणिणो। —सूत्रकृतांग २।१।४

प्राणी कर्मों से ही दुःखी होते हैं।

५ कम्मुणा उवाहि जायइ। —आचारांग ३।१

कर्म से उपाधि-विपत्तियाँ उत्पन्न होती हैं।

६ गाढा य विवाग कम्मुणो। — उत्तराध्ययन १०।४

कर्मों का विपाक (फल) अत्यन्त कड़ुआ होता है।

७ कम्मानि नयंति दुग्गतिं। —धम्मपद २४०

कर्म ही जीव को दुर्गति में ले जाते हैं।

८ अयमात्मैव चिद्रूपः, शरीरी कर्मयोगतः। —योगशास्त्र

कर्मों के योग से ही यह चिद्रूप आत्मा शरीर धारण करता है।

९ संसारी कर्मसंबन्धाद्, नटवद् परिभ्राम्यति।

प्राणी अपने कर्मों के संबन्ध से नट की तरह संसार में परिभ्रमण करता है।

१० ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे,
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासंकटे।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः,
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे ॥

—भर्तृहरि-नीतिशतक ९६

जिस कर्म ने ब्रह्मा को कुम्हारवत् सृष्टि रचना में नियत किया, विष्णु को दश अवतार लेने के संकट में डाला, रुद्र को खोपड़ी हाथ में लेकर भीख मांगने का दुःख दिया और जिसके बल से सूर्यदेव सदा आकाश में भ्रमण करता है। उस कर्म को हमारा नमस्कार है।

११ वैद्या वदन्ति कफ-पित्त-मरुद्विकारं,
ज्योति - र्विदो ग्रहगणं परिवर्तयन्ति।
भूताभिषङ्ग इति भूतविदो वदन्ति,
प्राचीनकर्म बलवन् मुनयो वदन्ति ॥

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ १८३

जिसको वैद्य कफ, पित्त और वायु का विकार (रोग) कहते हैं, ज्योतिषी लोग ग्रहगणों का चक्र बतलाते हैं और भूतवादी भूतों का लगाव मानते हैं। ज्ञानी मुनि उसी को पूर्वकृत कर्म बलवान् है और सब उसी का दोष है—ऐसा कहते हैं।

१२ जानामि पापं च न च मे निवृत्ति-र्जानामि पुण्यं न च मे प्रवृत्तिः।
केनापि भूतेन हृदिस्थितेन व्यादिश्यते यत्तदहं करोमि ॥

पाप को जानता हूँ, फिर भी उससे निवृत्ति नहीं होती, पुण्य (धर्म) को जानता हूं, फिर भी उसमें प्रवृत्ति नहीं होती। मेरे हृदय में कोई एक भूत बैठा हुआ है, वह जो कुछ कहता है, मैं वही काम करता हूँ। (भूत से कर्म का उदय समझना चाहिए)

२ स्वकृत-कर्म ही सुख-दुख के दाता

१ सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता, परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ।
अहं करोमीति वृथाभिमानः, स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः ॥

—**अध्यात्मरामायण, अयोध्याकांड** १।२३

सुख और दुःख को देनेवाला दूसरा कोई नहीं है । कोई अन्य सुख-दुख देता है—यह समझना कुबुद्धि है । 'मैं ही करता हूँ'—यह मनुष्य का वृथा अभिमान है । क्योंकि संसार के सभी प्राणी अपने-अपने कर्मों के धागे से आबद्ध हैं ।

२ सव्वे पुव्वकयाणं, कम्माणं पावए फलविवागे ।
अवराहेसु गुणेसु य, निमित्तमित्तं परो होई ॥

सबको अपने कर्मों का ही फल प्राप्त होता है । अपराधों या गुणों के विषय में दूसरा तो निमित्त मात्र है ।

३ सकम्मुणा विप्परियासुवेई । —**सूत्रकृतांग** ७।११

प्रत्येक आत्मा अपने कर्म से ही विपरीत स्थिति को प्राप्त होता है ।

४ सव्वे सकम्मकप्पिया, हिंडंति भयाउला ।

—**सूत्रकृतांग** २।३।१८

सब जीव अपने कर्मों के अनुसार ही भयभ्रान्त होकर संसार में भटक रहे हैं ।

५ सयमेव कडेहिं गाहइ, नो तस्स मुच्चेज्जऽपुट्ठयं ।

—**सूत्रकृतांग** १।२।१।४

आत्मा अपने स्वय के कर्मों से ही बंधन में पड़ता है । कृतकर्मों को भोगे बिना मुक्ति नहीं है ।

६ करै सो भरै।

- करंता सो भोगंता, खणंता सो पडंता।
- थारा काँटा तनैं ही भागैला।
- अपनी करणी पार उतरणी।
- करणी आपो आपरी, कुण बेटो कुण बाप।
- आप-आपरी चादर खींचो 'र' ओढ़ो।
- आप-आपरै भाग सारू सै खावै।

—राजस्थानी कहावतें

७ घेवर जमाई जीमियो, बेटा बहु सब कोई।
काम पड्‌यो दरबार में, कूटाणो कन्दोई।।

हलवाई ने राजा के चार घेवर चोरे। उन्हें स्त्री, पुत्र, पुत्रवधू एवं दामाद खा गए। पकड़ा जाने पर अकेला हलवाई पीटा गया। घर वाले सब दूर हो गए।

●●

३ कर्मानुसार फल

१ कर्मायत्तं फलं पुंसां, बुद्धिः कर्मानुसारिणी ।

—चाणक्यनीति १३।१०

फल कर्मों के आधीन है एवं मनुष्यों की बुद्धि भी कर्मों के अनुसार ही होती है ।

२ कर्म प्रधान विश्व रचि राखा ।
जो जस करहि सो तस फल चाखा ।।

—रामचरितमानस

३ यादृशं क्रियते कर्म, तादृशं भुज्यते फलम् ।

—भर्तृहरि-नीतिशतक ९०

प्राणी जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल भोगता है ।

४ डू इविल एण्ड लुक फॉर लाइक ।
जैसा बोए वैसा लूने ।

० ऐज यू सो, सो यू रीप ।

—अंग्रेजी कहावतें

जैसी करणी वैसी भरणी ।

५ जहा कडं कम्मं तहा से भारे । —सूत्रकृतांग ५।१।२६

कर्मों के अनुसार ही बोझ होता है ।

६ जं जारिसं पुव्वमकासि कम्मं, तमेव आगच्छइ संपराए ।

—सूत्रकृतांग ५।२।२३

पूर्वकाल में जिसने जैसा कर्म किया है, संसार में उसका वैसा ही फल मिलता है ।

७ एगया देवलोएसु नरएसु वि एगया।
एगया आसुरं कायं अहाकम्मेहिं गच्छइ ॥३॥
एगया खत्तिओ होई, तओ चंडाल-बोक्कसो।
तओ कीड-पयंगो य, तओ कुंथु-पिवीलिया ॥४॥

—उत्तराध्ययन ३।३-४

कर्मानुसार जीव कभी देवलोक में, कभी नरक में एवं कभी असुरयोनि में जाता है। (३)

ऐसे ही कभी क्षत्रिय होता है और कभी चाण्डाल एवं बुक्कस होता है। फिर कभी कीट-पतंग कुंथु एवं चींटी के रूप में जन्म लेता है।

८ सुचिन्ना कम्मा सुचिन्ना फला, दुचिन्ना कम्मा दुचिन्ना फला।

—औपपातिक सूत्र ५६

अच्छे कर्मों के अच्छे फल हैं एवं बुरे कर्मों के बुरे फल हैं।

९ हंड़िया में जो कुछ डाला होगा, वही निकाल सकोगे!

१० प्लेटफार्म पर हैं खड़े, सरखे लोक हजार।
किन्तु मिलेगी क्लास तो, टिकिटों के अनुसार॥

—दोहा संदोह

११ हिकमत करो हजार, गढ़पतियां जाचो घणां।
धीरज मिलसी धार, कर्म प्रमाणे किसनिया!॥
० सोनो घड़ै सुनार, कंदोई खाजा करे।
खावै खावंण हार, कोयक पहरै किसनिया॥

—सोरठा-संग्रह

४ कर्मों का अवश्य भोग

१ कडाण कम्माण न मुक्ख अत्थि ।

—उत्तराध्ययन ४।३

किये हुए कर्मों को भोगे विना छुटकारा नहीं होता ।

२ अवश्यमेव भोक्तव्यं, कृतं कर्म शुभाशुभम् ।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म, कल्पकोटिशतैरपि ।।

—विक्रमचरित्र

भुगते बिना करोड़ों कल्पों में भी कर्मों का क्षय नहीं होता । किए हुए शुभा-शुभ कर्म अवश्य भोगने ही पड़ते हैं !

३ ह्वाट इज लोटेड, कैन नॉट बी ब्लोटेड । —अंग्रेजी कहावत

कर्म गति टारी नाहिं टरे ।

४ हसद्भिः क्रियते कर्म, रुदद्भिर्भुज्यते फलम् ।

—संस्कृत सूक्ति

हंसते-हंसते कर्म किए जाते हैं और रोते-रोते उनका फल भोगा जाता है ।

५ हत्थां दीयाँ दितियाँ दंदां नाल खोलनीयां पैंदीयां हन ।

—पंजाबी कहावत

६ अथ पापानि कम्मानि, करं बालो न बुज्झति ।
सेहि कम्मेहि दुम्मेधो, अग्गिदड्ढो व तप्पति ।।

—धम्मपद ३६

अज्ञानी जीव पाप करते समय नहीं समझता, किन्तु वह दुर्बुद्धि उन कर्मों द्वारा अग्नि में जले हुए की तरह संतप्त होता है ।

७ इत एकनवतेः कल्पे, शक्त्या मे पुरुषो हतः।
तस्य कर्मविपाकेन, पादे विद्धोऽस्मि भिक्षवः।।

—महात्मा बुद्ध

अब से इक्यानवे कल्प पहले मेरी शक्ति द्वारा पुरुष मारा गया था। उसके कर्म-विपाक से हे भिक्षुओ! मेरा पैर काटे से बींधा गया है।

८ सदाचारी - दुराचारी - क्रोधी-क्षमावान, कपटी-सरल, संतोषी-लोभी—ये सब कर्मानुसार ही होते हैं। ऋषभ, पार्श्व तथा महावीर भगवान ने कष्ट पाए, सगर राजा के साठ हजार पुत्र एक साथ मारे गए, सनत्कुमार चक्रवर्ती ने सात-सौ वर्षों तक रोग सहे, राम वनवास, सीताहरण तथा कृष्ण की मृत्यु—ये सब कर्म के ही भोग हैं।

—कर्मवादी

●●

५ कर्म, कर्त्ता के पीछे-पीछे

१ कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं । —उत्तराध्ययन १३।२३

कर्म कर्त्ता के ही पीछे जाते हैं ।

२ यथा धेनुसहस्रेषु, वत्सो विन्दति मातरम् ।
तथैवेह कृतं कर्म, कर्तारमनुगच्छति ।।

—चाणक्यनीति १२।१५

जैसे हजारों गायों के होने पर भी बछड़ा सीधा अपनी माता के पास जाता है, उसी प्रकार इस संसार में कृत-कर्म भी अपने कर्त्ता का ही अनुसरण करता है अर्थात् उसी को सुख-दुःख रूप फल देता है ।

३ शेते सह शयानेन, गच्छन्तमनुगच्छति ।
नराणां प्राक्तनं कर्म, तिष्ठत्यथ सहात्मनः ।।

—पंचतन्त्र २।१३०

मनुष्यों का पूर्वकृत कर्म सोते समय साथ सोता है, चलते समय पीछे-पीछे चलता है और ठहरते समय साथ-साथ ठहरता है ।

६ कर्मों की विचित्र गति

१ गहना कर्मणो गतिः ।

—ब्रह्मानन्द गीता ४४

कर्मों की गति गहन है ।

२ विषमा कर्मणः सृष्टि-दृष्टा करभपृष्ठवत् ।

—ज्ञानसार

ऊँट की पीठ के समान कर्मों की रचना विषम है ।

३ देवाची गति विलक्षण अति । —मराठी कहावत

४ कागद होय तो बांचल्यूं, करम न बांच्यो जाय ।

—राजस्थनी कहावत

५ किंकुर्मः कस्य वा ब्रूमो, मोहस्य गतिरीदृशी ।
दुषधातोरिवास्माकं, दोषनिष्पत्तये गुणाः ।

क्या करें और किससे कहें ? कर्म की गति ही ऐसी है । हमारे गुण भी दुष् धातु की तरह दोष पैदा करनेवाले होते हैं । दुष को गुण करने से दोष शब्द बनता है ।

६ बंगाल के एक युवक की थाली में ५१ चीजें रखी जाती थीं, बीमारी के कारण वह केवल एक जव का रस ले सकता था ।

७ लाहौर का धनिक खाद्य पदार्थों को देखकर रोता था, कारण उसके कुछ हज़म नहीं हो सकता था ।

८ कहावतें—

(क) छाणनों कीड़ों घीमां मरे, विष्ठानों कीड़ो कमलमां मरे, अने खाराजलनुं माछलुं मीठा जलमां मरे ।

० वनचरने बस्ती साथे वैर ।
साकर गली पण गधेड़ा ने झेर ।

- समुद्र सरखा सखा ने अलूणु खांवु ।
  नदीये जईने तरस्या आवव ।
- पाणीमां माछलु तरस्यु ।
- भूड़ी भैंस ने चाँदरो पाडो ।
  आंधली दोहनारी ने गोवाल गांडो ।
- करमनां कस्या जाँन जोड़ी ने कूतरा भस्या कोडिया जेटलु कपाल ने बच्चे भंवरो ।

  खावा-पीवानां सांसा त्यारे परोणानां वासा ।
  - गधेड़ा चाले बार गाऊ तो कुम्हार चाले चौद गाऊ ।
    हूं जाऊं रैलमां ने नशीब जाय तारमां ।
- करवा गया कंसार ने थई गई थूली ।
- सई नो दीकरो जीवै, त्यां सुधी सीवै ।
- जीव्या त्यां सुधी बह्या, मरता सुधी नाथ काढी नहि, बांधी भेटे गया ।
- करड़े मांकण ने मार खाय खाटलो ।
- खाई जाय खोड़ी ने मारपड़े हरोड़ी[1] ने ।
- खाय-पीये खांडणी ने कुटाई मरे सूपडु ।

—गुजराती कहावतें

(ख) खाण-पीण ने दीवाली र. कूटीजण नै छाज ।
- नसीब दो पग आगै रो आगै ।
- तीन आंगुल रो लिलाड़ जके में ही दो सल ।
- रामदेवजी ने मिल्या जिका ढेढ़ ही ढेढ़ ।
- काणी रो काजल ही को सुहावै नी ।
- सिन्धु तर कर सरस्वती में डूब्या ।
- आकाश स्यूं पड़ी र धरती को झाली नी ।

---

१ भटकने वाली गाय ।

- आगे कूवो र, लारै खाड़ ।
- कर्म कारी नहि लागण दै जद कांई हुवै ?
- कलंक रो टीको लागणों ही है ।
- चिणा है जठै दांत कोनी, दांत है जठै चिणा कोनी ।

—मारवाड़ी कहावतें

६ आज मेरी मंगनी कल मेरा ब्याह ।
टूट गई टंगड़ी रह गया ब्याह ।

- दाख पके तब काग के, होत कंठ में रोग ।
- मन राजा का और कर्म कमेड़ी का ।

—हिन्दी कहावतें

७. कर्म-बन्ध

१ अज्झत्थहेउं नियमस्स बंधो,
संसार हेउं च वयंति बंधं।

—उत्तराध्ययन १४।१९

मिथ्यात्वादि ही आत्मा के कर्मबन्ध के कारण हैं और कर्मबन्ध संसार में परिभ्रमण का कारण है।

२ अणुमित्तो वि न बंधो, परवत्थुपच्चओ भणिओ

—ओघनिर्युक्ति, गाथा-५३

वस्तुतः कर्मबन्ध में आत्मपरिणाम (भाव) ही कारण है, पर-वस्तु बिल्कुल नहीं।

३ ण य वत्थुदो दु बंधो, अज्झवसाणेण बंधोत्थि।

—समयसार २६५

कर्मबन्ध वस्तु से नहीं, राग और द्वेष के अध्यवसाय (संकल्प) से होता है।

४ रत्तो बंधदि कम्मं मुच्चदि जीवो विरागसंपत्तो।

—समयसार १५०

जीव रागयुक्त होकर कर्म बाँधता है और विरक्त होकर कर्मों से मुक्त होता है।

५ अकुव्वओ णवं णत्थि।

—सूत्रकृतांग १।१५।७

जो अन्दर में राग-द्वेषरूप-भावकर्म नहीं करता, उसे नए कर्म का बंध नहीं होता।

६ सुहपरिणामो पुण्णं, असुहो पावं ति हवदि जीवस्स ।

—पंचास्तिकाय-१३२

आत्मा का शुभ परिणाम (भाव) पुण्य है और अशुभ परिणाम पाप है।

७ रागो जस्स पसत्थो, अणुकंपासंसिदो य परिणामो ।
चित्तम्मि णत्थि कलुसं, पुण्णं जीवस्स आसवदि ॥

—पंचास्तिकाय-१३५

जिसका राग प्रशस्त है, अन्तर में अनुकंपा की वृत्ति है और मन में कलुषभाव नहीं है, उस जीव को पुण्य का आस्रव होता है।

८ चरियापमादबहुला, कालुस्सं लोलदा य विसयेसु ।
परपरितावपवादो, पावस्स य आसवं कुणदि ॥

—पंचास्तिकाय-१३६

प्रमादबहुल चर्या, मनकी कलुषता, विषयों के प्रति लोलुपता, परपरिताप (परपीड़ा) और परनिंदा—इनसे पाप का आस्रव (आगमन) होता है।

९ जस्स ण विज्जदि रागो, दोसो मोहो व सव्वदव्वेसु ।
णासवदि सुहं असुहं, समसुहदुक्खस्स भिक्खुस्स ॥

—पंचास्तिकाय-१४२

जिस साधक का किसी भी द्रव्य के प्रति राग, द्वेष और मोह नहीं है, जो दुःख-सुख में समभाव रखता है, उसे न पुण्य का आस्रव होता है और न पाप का।

१० **बन्ध के चार भेद—**

चउव्विहे बंधे पन्नत्ते, तं जहाँ—पगइबंधे, ठिइबंधे,
अणुभागबंधे, पएसबंधे ।

—**स्थानांग** ४।३।२९६

चार प्रकार का कर्मबन्ध कहा है। यथा—(१) प्रकृतिबन्ध (२) स्थितिबन्ध (३) अनुभागबन्ध (४) प्रदेशबन्ध ।

० स्वभावः प्रकृतिः प्रोक्तः, स्थितिः कालावधारणम् ।
अनुभागो रसो ज्ञेयो, प्रदेशो दलसंचयः ॥

कर्मों के स्वभाव का निश्चित होना प्रकृतिबन्ध है, काल का निश्चय होना स्थितिबन्ध है, तीव्र—मंदरस का निश्चय होना अनुभागबन्ध है और आत्मप्रदेशों पर कर्मदलों का संचय होना प्रदेशबन्ध है ।

११ अट्ठ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ, तं जहा—णाणावरणिज्जं दंसणावरणिज्जं, वेयणिज्जं, मोहणिज्जं, आउयं, नामं, गोयं, अंतराइयं ।

—प्रज्ञापना-२१।१

आठ कर्म प्रकृतियाँ कहीं गईं हैं । तद्यथा—ज्ञानावरणीय (२) दर्शनावरणीय (३) वेदनीय (४) मोहनीय (५) आयुष्य (६) नाम (७) गोत्र (८) अन्तरायिक ।

१२ **आठकरण—**

**बंधण संकमण वट्टणा य, अववट्टणा उदीरणया ।
उवसमणा निहत्ति, निकायणा चेति करणाइं ।**

—कर्मप्रकृति गाथा-२

कर्मों की मुख्यतया ८ अवस्थायें हैं—जो आठकरण कहलाती हैं—(१) बन्ध (२) संक्रमण (३) उद्वर्तना (४) अपवर्तना (५) उदीरणा (६) उपशमना (७) निधत्ति (८) निकाचना ।

(१) मित्यात्वादि के निमित्त से आत्मप्रदेशों में कंपन होकर निकटवर्ती अनन्तानन्त कर्मयोग्य पुद्गलों का प्रत्येक आत्मप्रदेश के साथ चिपक जाना **बन्ध** है ।[1] उसके प्रकृति आदि चार भेद हैं ।

(२) एक कर्म का दूसरे सजातीय कर्म के रूप में (जैसे—क्रोध का मान के रूप और मान का क्रोध के रूप में) बदल जाना **संक्रमण** है ।

---

१ सब जीव अपने आस-पास छहों दिशाओं में रहे हुए कर्मपुद्गलों का ग्रहण करते हैं ।

३ स्थिति और अनुभाग का बढ़ जाना **उद्वर्तना** है।

४ इन दोनों का घट जाना **अपवर्तना** है। उद्वर्तना अपवर्तना के कारण ही कर्म जल्दी या देर से उदय में आते हैं तथा तीव्र-मंदरस वाले बनते हैं।

५ पीछे उदय आनेवाले कर्मदलिकों को विशेष प्रयत्न द्वारा खींचकर उदयप्राप्त कर्मों के साथ भोग लेना **उदीरणा** है।

६ मोहनीयकर्म की सर्वथा अनुदय-अवस्था (प्रदेशोदय-विपाकोदय दोनों का) अभाव **उपशमना** है।

७ उद्वर्तना- अपवर्तना के सिवा संक्रमण आदि का न होना **निधत्ति** है।

८ निश्चित-स्थिति एवं अनुभाग के आधार पर कर्मों का भोगा जाना **निकाचना** है। इसमें उद्वर्तना आदि नहीं हो सकते।

८ कर्मक्षय के बाद्

१ परिहीणकम्मा सिद्धा सिद्धालयमुवेंति।

—औपपातिक सूत्र सिद्धाधिकार

सब कर्मों के क्षीण हो जाने से जीव सिद्ध होकर सिद्धस्थान में चले जाते हैं।

२ कम्मबीएसु दड्ढेसु, न जायंति भवंकुरा।

—दशाश्रुतस्कंध ५।१५

कर्मरूप बीजों के जल जाने पर जन्म-मरण रूप अंकुर उत्पन्न नहीं होते।

३ दग्धे बीजे यथात्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः।
कर्मबीजे तथा दग्धे, नारोहति भवाङ्कुरः।।

—शास्त्रवार्ता समुच्चय

जैसे बीज के जल जाने पर अंकुर पैदा नहीं होता, वैसे कर्मबीज के भस्म हो जाने के बाद संसार में आगमन रूप अंकुर भी पैदा नहीं होता।

४ अकम्मस्स ववहारो न विज्जई। **—आचारांग ३।१**

कर्मरहित जीव के संसार में जन्म-मरण रूप व्यवहार नहीं होता।

५ तम्हा एएसिं कम्माणं, अणुभागं वियाणिया।
एएसिं संवरे चेव, खवणे य जए बुहो।।

—उत्तराध्ययन ३३।२५

इसलिये कर्मों के विपाक को जानकर विद्वान् इनका निरोध एवं क्षय करने का प्रयत्न करे!

६ कर्मपाश अपने आप नहीं कटेंगे, काटोगे तब कटेंगे। **—शीलनाथ**

७ दुष्कर्म के नाश का सच्चा उपाय सद्विचार और सदाचार है।

विधि-भाग्य

१ भाग्यं फलति सर्वत्र, न विद्या न च पौरुषम्।
समुद्रमथनाल्लेभे, हरिर्लक्ष्मी हरो विषम्॥

सब जगह भाग्य ही फलता है, विद्या एवं पुरुषार्थ नहीं। समुद्र का मन्थन करने से भाग्यानुसार हरि को लक्ष्मी एवं महादेव को जहर मिला।

२ अक्कल एक टोकरो र भाग एकलो,
भगवान एकलो र भागवान सौ। —**राजस्थानी कहावत**

३ तीर तकदीर अज सिपरे तदबीर रद नमी गर्द।

—**पारसी कहावत**

तकदीर के सामने तदबीर नहीं चलती।

४ अभद्रं भद्रं वा विधिलिखितमुन्मूलयति कः ?

—**सुभाषितरत्नखंडमंजूषा**

अच्छा या बुरा जो विधि ने लिख दिया, उसे कौन मिटा सकता है ?

५ अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं, सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।

—**पञ्चतन्त्र १।१२**

भाग्य का रखा हुआ रक्षा न करने पर भी रह जाता है और भाग्य का मारा हुआ रक्षा करने पर भी नष्ट हो जाता है।

६ पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं,
नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।
वर्षा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणं,
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः॥

—**चाणक्यनीति १२।५**

करीर वृक्ष पर पान नहीं आते, इसमें वसन्त ऋतु का क्या दोष ? उल्लू दिन में नहीं देखता, इसमें सूर्य का क्या दोष ? चातक-पक्षी के मुख में मेघ

की धारा नहीं जाती (उसके गले में छिद्र होता है)। इसमें मेघ का क्या दोष ? विधि द्वारा लिखे गये लेखों को कोई नहीं मिटा सकता। यह सब उन्हीं का फल है।

७ स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी,
दशशतकरकारी ज्योतिषां मध्यचारी।
विधुरपि विधियोगाद् ग्रस्यते राहुणाऽसौ,
लिखितमिह ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः॥

—**हितोपदेश १।२०**

जो आकाश में विहार करता है, अंधकार का विध्वंसक है, हजार किरणों को धारण करने वाला है, नक्षत्रों के बीच में विचरनेवाला है—वह चाँद भी विधि के वश राहु द्वारा ग्रसित हो जाता है, क्योंकि ललाट में लिखे हुए को कोई भी नहीं मिटा सकता।

८ शशि-दिवाकरयोर्ग्रहपीडनं, गज-भुजंगमयोरपि बन्धनम्।
मतिमतां च विलोक्य दरिद्रतां, विधिरहो! बलवानिति मे मतिः॥

—**भर्तृहरिनीतिशतक ९२**

चन्द्र-सूर्य की ग्रह-पीड़ा, गजों-भुजंगमों का बांधा जाना, और विद्वानों के घर दरिद्रता देखकर मेरी बुद्धि तो यही कहती है कि विधि (भाग्य) ही बलवान है।

९ पूर्णोऽहमर्थैरिति मा प्रसीद! रिक्तोऽहमर्थैरिति मा विषीद!
रिक्तं च पूर्णं भरितं च रिक्तं, करिष्यतो नास्ति विधेर्विलम्बः।

रे जीव! मैं धन से परिपूर्ण हूँ—ऐसे फूल मत! और मैं धन से रीता हूँ ऐसे विषाद मत कर। रीते को भरा और भरे को रीता करने में विधि (भाग्य) को देर नहीं लगती।

१० सुनहु भरत! भावी प्रबल, विलख कहेउ मुनिनाथ।
हानि-लाभ - जीवन-मरण, जस-अपजस विधि हाथ॥

—**रामचरित मानस**

११ दुर्गस्त्रिकूटः परिखा समुद्रो, रक्षांसि योधा धनदाच्च वित्तम् ।
शास्त्रं च यस्योशनसा प्रणीतं, स रावणो दैववशाद्विपन्नः ।।

—पञ्चतन्त्र ५।८६

दुर्ग-किला त्रिकूट पर्वत था, समुद्र की खाई थी, योद्धा राक्षस थे, कुबेर से धन प्राप्त था और जिसके शास्त्र शुक्राचार्य द्वारा रचित थे, वह रावण भी दुर्भाग्यवश मर गया ।

१२ यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च,
यावच्च यत्र च शुभाशुभमात्मकर्म ।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च,
तावच्च तत्र च विधातृवशादुपैति ।।

—चन्दचरित्र पृष्ठ १६

जिस निमित्ति से, जिसके द्वारा, जिस प्रकार, जिस समय जो, जितना एवं जहाँ अपना शुभाशुभ कर्म का फल मिलना होता है उसी निमित्ति से, उसी के द्वारा उसी प्रकार, उसी समय, वह, उतना ही एवं वही विधिवश पहुँच जाता है ।

१३ राष्ट्रस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं, मनोरथं दुर्जनमानसानाम् ।
स्त्रियश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं, देवो न जानाति कुतो मनुष्यः ।।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार-पृष्ठ १८६

सरकार का चित्त, कृपण का धन, दुर्जनों का मनोरथ, स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य—इन सबको देवता भी नहीं जान सकता, मनुष्य की तो बात ही क्या ?

१४ किसान का भाग्य बादलों पर, साहूकार का भाग्य राजा पर, डिक्टेटर का भाग्य बंदूक पर, गृहस्थी का भाग्य चूल्हे पर और डेमोक्रेसी का भाग्य फाइल पर निर्भर करता है । राष्ट्रसंघ के भूतपूर्व महामंत्री **ऊथांट** ने ये शब्द कहे ।

—हिन्दुस्तान ५ फरवरी १९७३

१० भाग्यानुसार लाभ

१ यद्धात्रा निजभालपट्टलिखितं स्तोकं महद् वा धनं।
तत्प्राप्नोति मरुस्थलेऽपि नितरां मेरौ ततो नाधिकम् ॥
तद्धीरो भव वित्तवत्सु कृपणां वृत्तिं वृथा मा कृथाः।
कूपे पश्य पयोनिधावपि घटो गृह्णाति तुल्यं जलम् ॥

भर्तृहरि-नीतिशतक—४९

थोड़ा या बहुत-जो धन विधाता ने ललाट में लिखा है, वह तो मरुस्थल में भी मिल जाता है, स्वर्णमय मेरु पर उससे भी अधिक नहीं मिलता। इसलिये धैर्य धारण करो एवं धनाढ्य लोगों के सामने व्यर्थ हाथ मत पसारो। (क्योंकि) देखो ! घड़ा कुए और सागर दोनों में से जल की समान मात्रा ग्रहण करता है।

२ कर्मकमंडलु कर लिए, तुलसी जहां-जहां जाय।
सागर सरिता कूप जल, बूंद न अधिक समाय ॥
३ मानसरोवर मांय, बक - मराल भेला वसै।
खाज आपणो खाय, भागप्रमाणे भेरिया ॥

— सोरठा-संग्रह

४ रत्नाकरो पिता यस्य, लक्ष्मीर्यस्य सहोदरी।
शङ्खो रोदिति भक्ष्यार्थी, फलं भाग्यानुसारतः ॥

—चन्दचरित्र पृष्ठ-६५

पिता जिसका रत्नाकर-समुद्र है और लक्ष्मी जिसकी बहन है, वह शङ्ख भक्ष्यार्थी होकर रोता है, अतः यह मानना चाहिये कि भाग्यानुसार ही फल मिलता है।

११ विधि की विचित्रता

१ विधेर्विचित्राणि विचेष्टितानि ।

—सुभाषितरत्न खंडमंजूषा

विधि की प्रवृत्तियाँ विचित्र हुआ करती हैं ।

२ भग्नाशस्यकरण्डपीडिततनोर्म्लानेन्द्रियस्य क्षुधा,
कृत्वाखुर्विवरं स्वयं निपतितो नक्तं मुखे भोगिनः ।।
तृप्तस्तत्पिशितेन सत्वरमसौ तेनैव यातः पथा,
लोका पश्यत दैवमेव हि नृणां वृद्धौ क्षये कारणम् ।।

—भर्तृहरि-नीतिशतक-८५

भूख से म्लान इन्द्रियोंवाला निराश एक साँप पिटारी में पड़ा हुआ है । चूहा आया और पिटारी को काटकर अन्दर घुसा कि सीधा सांप के मुख में जा पड़ा । साँप उसके मांस से तृप्त होकर उसी के किये हुए मार्ग से निकल कर चला गया । लोगों ! देखो, वृद्धि और हानि में भाग्य ही मुख्य कारण है, उद्यम नहीं ।

३ रांधे कोक ने जमे कोक, खोदे उंदर ने भोगे भोरिंग ।

—गुजराती कहावत

४ लड़ै सिपाही र जश जमादार नै ।

◦ लड़ै सिपाही र नाम सरदार रो ।

◦ घी सुधारे साग ने, नाम बहू रो होय ।

—राजस्थानी कहावतें

५ कर्णछिद्र युत कुटिलतनु, कंचन भूषण पाय ।
दैव अहो ! शुचि दृगन को, दिय कज्जल दुखदाय !

६ अपना-अपना भाग्य—

दिसम्बर १५, सन् १६७० को पूर्वी पाकिस्तान में आये भयंकर तूफान के समय एक बाबा ने ३ से १२ वर्ष के अपने छः बच्चों को लकड़ी के एक सन्दूक में बैठा दिया और स्वयं भी बैठ गया। वह सन्दूक तीन दिन तक तूफानी लहरों में बहता हुआ किनारे आ लगा। बच्चे तो सारे के सारे बच गये, लेकिन सूझबूझ वाला बाबा स्वयं उस तूफान में मर गया।

—नवभारत, नवम्बर १६, १६७०

७ मसा वहीं का वहीं—

एक साहब पैर का मसा कटवाने अस्पताल में आया। अधिक दर्द महसूस न हो अतः सूंघनी सुंघाई गई। उससे हार्ट बंद हो गया, तब छाती को चीरा और होश में लाने के लिए ऑक्सीजन देने लगे, यंत्र की खराबी से पेट में गड़बड़ हो गई। आखिर होश आया, तब उन्हें स्ट्रेचर पर लिटा कर ऊपर के कमरे में ले जाने लगे। उठानेवालों की असावधानी से सीढ़ियों में ही गिर पड़े (लिफ्ट खराब था) जांघ की हड्डी और हंसली टूट गई। सांस बन्द हो गया, फिर आपरेशन थियेटर में लाया गया, प्रयत्न करने पर सांस तो चालू हो गया, लेकिन पैर का मसा फिर भी वहीं का वहीं है। इसे कहते हैं विधि की विडम्बना।

—नवभारत १६६७, अक्टूबर १, ब्यूनस आयर्स २६ सितम्बर

१२ सद्भाग्य-पुण्योदय

१ नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं,
विद्यापि नैव न च यत्नकृतापि सेवा ।
भाग्यानि पूर्वतपसा खलु संचितानि,
काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षाः ।।

—भर्तृहरि-नीतिशतक ९७

न तो सुन्दर आकृति फल देती है और न कुल, शील, विद्या एवं यत्न से की हुई सेवा । पूर्वकाल में तपस्या द्वारा संचित भाग्य ही समय आने से वृक्षों की तरह फलते हैं ।

२ अनुकूले सति धातरि, भवत्यनिष्टादपीष्टमविलम्बम् ।
पीत्वा विषमपि शम्भु-मृत्युंजयत्वामवाप तत्कालम् ।

—चन्दचरित्र, पृष्ठ ९५

भाग्य के अनुकूल होने पर अनिष्ट से भी इष्ट हो जाता है । शंकर जहर पीकर भी तत्काल मृत्युंजयता को प्राप्त हो गये ।

३ इङ्गलैंड में ७३ साल की एक स्त्री जिसकी एक आँख २२ साल एवं दूसरी आँख ७ साल पूर्व चली गई थी । अचानक रसोई में सिर टकराते ही उसे दोनों आँखों से दीखने लगा ।

—हिन्दुस्तान, अक्टूबर १३, १९६२

४ रोहतक अस्पताल में एक आदमी का आपरेशन हुआ, एवं २-३ घंटों के बाद वह मर गया । डॉक्टर ने मेडिकल कॉलेज में उपयोग करने के लिए उसका दिल निकालना चाहा । मृतक के छोटे भाई ने जगत की भलाई समझकर अनुमति दे दी । ज्यों ही ऑपरेशन किया गया हार्ट चल पड़ा और मृत-व्यक्ति जी गया । (जुलाई १९६८)

—कैलाश जैन' से श्रुत

५ भड़ौंच में एक मुस्लिम परिवार के यहाँ ४० मेहमान भोजन कर रहे थे। इतने में जोर से आवाज करता हुआ ऊपर से हैलीकॉप्टर गुजरा। उसको देखने के लिए सारे लोग ज्योंही बाहर आए, मकान गिर गया। आयुष्यबल के कारण चालीस के चालीस व्यक्ति बच गये।

—**वीर अर्जुन—अगस्त** २, १९६८

६ फ्राके ब्राउन को लड़ाई में चोट लगी। उससे उनके मस्तक में एक छेद हो गया, जिससे वह सिगरेट पी सकते थे।

—**नवभारत १९ जून, १९५५**

७ औषधं मन्त्रवादश्च, नक्षत्रं गृहदेवता।
भाग्यकाले प्रसीदन्ति, चाभाग्ये यान्ति विक्रियाम्॥

—**चन्दचरित्र, पृष्ठ ९७**

औषधि, मंत्र, नक्षत्र, ग्रह और देवता ये सभी भाग्य अनुकूल होने पर अनुकूल होते हैं और प्रतिकूल होने पर ये भी प्रतिकूल हो जाते हैं।

८ असाध्यं साधयत्यर्थं, हेलयाऽभिमुखो विधिः।

अनुकूलविधि—भाग्य, असाध्य—अर्थ को भी साध्य बना देता है।

९ मत्स्यादयोऽपि जानन्ति, क्षीर-नीर विवेचनम्।
प्रसिद्धिरेव हंसस्य, यशः पुण्यैरवाप्यते॥
पञ्चभिः कामिता कुन्ती, तद्वधूरथ पञ्चभिः।
सतीं वदति लोकोऽयं, यशः पुण्यैरवाप्यते॥

—**सुभाषितरत्नभाण्डागार, पृष्ठ १६२**

यद्यपि मत्स्य आदि भी क्षीर-नीर का विवेचन जानते हैं तथापि इस विषय में हंस की ही प्रसिद्धि है, क्योंकि यश पुण्यों से मिलता है।

कुन्ती की पांचों द्वारा (धर्म-वायु-इन्द्र-दो अश्विनीकुमार) कामना की गई और उसकी बहू द्रौपदी भी युधिष्ठिर आदि पाँचों की स्त्री बनी फिर भी दोनों सतियाँ मानी गई, अतः मानना चाहिये कि यश पुण्यों से ही मिलता है।

१० पुण्यं विना नहि भवन्ति समीहितार्थाः ।

—सुभाषितसंग्रह

पुण्यों के बिना मन चाहे पदार्थ नहीं मिलते ।

११ वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये, महार्णवे पर्वतमस्तके वा ।
सुप्त प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि ।।

—भर्तृहरि-नीतिशतक-९८

वन में, रणभूमि में, शत्रुओं में, जल में, अग्नि में, बड़े समुद्र में, पर्वतों के शिखर पर, सोने के समय, प्रमाद की अवस्था में, विषम परिस्थिति में—इन सब प्रसंगों में पूर्वसंचित पुण्य ही रक्षा करते हैं ।

१२ आकाश सूं पड़ी तो खजूर में अटकी

- अंबर दुझै र भूत कमावै, आकाशीधन आपे आवै ।
- रूप रोवै र भाग कमावै
- कांकरै नैं हाथ घालतां रूपियो आवै
- ज्यांरा वखत पावणा, वारां सैं काम सुहावणा ।

—राजस्थानी कहावतें

१३ बम्बई (चैंबूर) में बनारसी साड़ी की दुकान करनेवाले राजेन्द्रप्रसाद शर्मा १० रुपये की टिकट पर (रायल वेस्टर्न-इंडिया टर्फ क्लब के इतिहास में) ४ लाख ९४ हजार ५७८ की अंधी रकम जीत ली, जबकि रात को महालक्ष्मी में ३०० रुपये हारकर घर आया था ।

—नवभारत, १ जनवरी १९६९ से

१४ लूखै धान न धापता, ल्यास पलासां तेल ।
सीरो ही बादी करै, देख दई का खेल ।

—राजस्थानी दोहा

१५ प्रभु पाधरा तो वैरी आँधला, प्रभु राखे तेने कोण चाखे ।

—गुजराती कहावतें

१६ खुदा मेहरबान तो गधा पहलवान

- जाको राखे साइयां, मार सकै ना कोय ।
  बाल न बांका करि-सकै जो जग बैरी होय ।

—हिन्दी कहावतें

१७ तोंड़ बाँकड़े पण देव फाँकड़े ।

(कुरूप होकर भी जो भाग्यशाली हो उसके लिए ऐसा कहा जाता है)

० ओसधा वांचून खरूज गेली

—**मराठी कहावतें**

औषधि के बिना ही व्याधि चली गई ।

१८ अपने पराये बने तब दुर्भाग्य के दिन और पराये अपने बने तब सौभाग्य के दिन ।

—**टैगोर**

१९ **भाग्य से उल्टे काम भी सुल्टे:—**

सेठ परदेश जाना चाहता था । सेठानी रोक रही थी । रात को कुलदेवी ने भी सेठ को रोका । सेठ ने कहा—माता ! क्या काम करूं ? देवी बोली—उल्टे-सुल्टे दिल चाहे सो कर ले । सेठ ने एक दिन राजसभा में जाकर राजा के मुंह पर इतने जोर से थप्पड़ मारा कि राजा का मुकुट भी नीचे पड़ गया । अपराधी को ज्यों-ही पकड़ने लगे, राजा के मुकुट से काले नाग से भी अधिक जहरीला एक **ऐलिक नाग** नजर आया । राजा ने प्रसन्न होकर सेठ को हजारों का धन-माल दिया और अपना उपकारी माना । एक बार राजा की सवारी दरवाजे से गुजर रही थी । सेठ ने दौड़कर धक्का मारा और राजा घोड़े से नीचे गिर गया । अकस्मात् दरवाजा भी ढह गया । घोड़ा और अनेक व्यक्ति मारे गये, किन्तु राजा जीवित बच गया । राजा ने कहा—सेठ ने मुझे प्राणदान दिया है, इसे लाखों का धन एवं नगरसेठ का पद दिया जाय । बस, लाखोपति एवं नगरसेठ बना दिया गया । यह है भाग्य का चमत्कार !

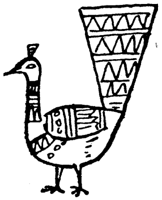

१३ भाग्यवान

१ भाग्यवन्तं प्रसूयेथा, मा शूरान् मातिपण्डितान् ।
शूराश्च कृतविद्याश्च, वने सीदन्ति मत्सुताः ॥

—महाभारत

माता कुंती कह रही है कि, कोई भी माता भाग्यवान पुत्रों को पैदा करे वीरों और पंडितों को नहीं। देखो ! शूर एवं विद्यावान होकर मेरे पुत्र भाग्य-रहित होने से वन में दुःख पा रहे हैं।

२ भीमं वनं भवति तस्य पुरं प्रधानं,
सर्वो जनः सुजनतामुपयाति तस्य ।
कृत्स्ना च भूर्भवति सन्निधिरत्नपूर्णा,
यस्यास्ति पूर्वसुकृतं विपुलं नरस्य ॥

—भर्तृहरि-नीतिशतक—१०३

जिसके पूर्वकृत पुण्यविपुल होता है, उसके भयंकर जंगल अच्छा नगर बन जाता है, सब लोग भले बन जाते हैं और सारी पृथ्वी रत्नमयी बन जाती है।

३ कूकर टूकर काज, भटकै पण पेट न भरे।
रातब नित गजराज, निश्चल पावै नाथिया !
धोबो भरने धान, मांगै ज्यानें नंहि मिले,
पुरसीजै पकवान, ना-ना करतां नाथिया !

—सोरठा संग्रह

४ **गणेश और महेश—**

महेश-गणेश दो भाई थे। भोला होने से गणेश को अलग कर दिया गया। स्त्री **आनंदी** के कहने से वह ईंधन लेने गया। एक वृक्ष को काटने

लगा। सौभाग्यवश प्रसन्न होकर वृक्षाधिष्ठित देवी ने वरदान दिया। अतः उसे चूल्हें में से दाल-रोटी मिलने लगी। महेश की स्त्री पूछने आई। आनंदी ने सच्ची-सच्ची बात कह दी। उसने महेश को आग्रह करके ईंधन लेने भेजा। देवी ने क्रुद्ध होकर उसके हाथ चिपका दिये। आखिर घी देने की शर्त पर छोड़े। अब महेश प्रतिदिन गणेश को घी देने लगा। रहस्य प्रकट होने पर एक अनुभवी ने कहा—

आनन्दी आनन्द करे, गलगच करे गणेश।
देवी रोटा पूरवै, घी पूरवै महेश।

**

१४ दुर्भाग्य-पापोदय

१ विधौ विमुखे किं करिष्यति पौरुषम् ?
यदि भाग्य ही उल्टा है तो पुरुषार्थ क्या करेगा ?

२ वेधा होत फूहर बिबुध तरु थूहर,
परमहंस चूहर होत परपाटी को।
भूपति मंगैया होत काम ठंठनिया होत,
गज मदचूवत सो चेरो होत चांटी को।
कहे कवि कृष्णदास पुन्य कियां पाप होत,
वैरी निज बाप होत साँप होत सांठी को।
निर्धन कुबेर होत स्यार-सम शेर होत,
दिनन के फेर तें सुमेर होत माटी को।

० राजन कूं रिझाय जानूं घोड़े कूं खिलाय जानूं,
शस्त्र को चलाय जानूं जंगन में ना डरूं।
राग सब गाय जानूं बाजे भी बजाय जानूं,
मूढ़ समझाय जानूं बुद्धि सब की हरूं।
ज्योतिष को भेद जानूं चारों विधिवेद जानूं,
रोगिन को खेद जानूं जलहू में मैं तरूं।
पिंगल की रीत जानूं शत्रुन को जीत जानूं (पर)
बारी नां दै कर्मनाथ ! ताकों मैं कहा करूं ?

—भाषाश्लोकसागर

३ पढ़ा फारसी बैचे तेल, देखो यह किस्मत का खेल।

—हिन्दी कहावत

४ ऊंट चढ्या नै कुत्तो खाय।

० मांग्योड़ी मौत ही को मिलैनी ?

—राजस्थानी कहावतें

५ प्रतिकूले विधौ किं वा सुधाऽपि हि विषायते।

विधि के विमुख होने पर अमृत भी जहर का काम करने लगता है।

६ क्रुद्धे विधौ भजति मित्रममित्रभावम्।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

भाग्य क्रुद्ध होने पर मित्र भी शत्रु बन जाते हैं।

७ सीया-बख्ती[1] में कब कोई, किसी का साथ देता है।
के तारीकी[2] में साया[3] भी जुदा इन्सा से रहता है॥

—उर्दू शेर

८ सुधरी में सौ वार, मदद करे मन मोड़िया।
बिगड़ी में एक वार, कोई न देवे किसनियाँ!

—सोरठा-संग्रह

९ बणी राँ सै सीरी, बिगडी रा कोई कोनी।

—राजस्थानी कहावत

१० सौ उगता ने पूजे।

० ऊभो सेठियो लाखनों ने बेठो काखनो।

० बालो राजा सेवीए ने बलती लीजे छांय।

—गुजराती कहावतें

११ अहो दैवाभिशप्तानां, प्राप्तोऽप्यर्थो पलायते।

—कथासरित्सागर

भाग्यहीन पुरुषों को मिला हुआ अर्थ भी चला जाता है।

१२ सरफा करके सुत्ती, आटा खा गई कुत्ती।

—पंजाबी कहावत

१३ पाँचों नौबत बाजती, होत छत्तीसों राग।
सो मंदिर खाली पड़ा, बोलन लागे काग॥

—कबीर

---

१. बुरी बख्त, २. अंधेरे में ३. छाया

१४ वशिष्ठदत्तलग्नोऽपि, रामः प्रव्रजितो वने।

महर्षि वशिष्ठ जैसे ज्ञानी द्वारा शुभमुहूर्त निकालने पर भी राम को वन में जाना पड़ा। यह दुर्भाग्य की बात है।

१५ च्युत्वा नृपति किरीटात्, पतितं भूमौ तिरोहितं रजसा।
विधिविलसितेन रत्नं, जनचरणविडम्बनां सहते॥

—चन्दचरित्र पृष्ठ ८०

रत्न राजा के मुकुट से निकल कर जमीन पर गिर गया। एवं धूल से तिरोहित अदृश्य हो गया। दुर्भाग्यवश अब वह लोगों के पैरों द्वारा की गई विडंबना सहता है।

१६ विनाशकाले विपरीतबुद्धिः। —चाणक्यनीति १६।५

विनाशकाले में बुद्धि विपरीत हो जाती है।

१७ स्यालियैरी मौत आवे जद गाँव कानी भाजे।

—राजस्थानी कहावत

१८ मूर्खमन्त्रः खलप्रीतिः, पथ्यद्वेषः प्रमादिता।
प्रभविष्णोर्विरोधश्च, विधिवैमुख्यलक्षणम्। —क्षेमेन्द्र

मूर्खों से मंत्रणा, दुष्टों से प्रीती, पथ्य वस्तु से द्वेष, आलस्य तथा समर्थ पुरुष से विरोध—ये भाग्य विमुख होने के चिन्ह है।

१९ दुर्भाग्य हमेशा उसी द्वार से आते हैं, जो हम उनके लिए अनावृत छोड़ देते हैं। —चेक लोकोक्ति

२० यदि सारे दुर्भाग्यों का ढेर करके उनमें से हमें समान भाग दिया जाए तो हममें से अधिकांश लोग अपने भाग्य से संतुष्ट होकर विदाई ले लेंगे। —सुकरात

१५ भाग्यहीन

१ पदे-पदे निधानानि, योजने रसकूपिकाः ।
भाग्यहीना न पश्यन्ति, बहुरत्ना वसुंधरा ।।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ १६६

यह पृथ्वी रत्नों से भरी हुई है, इसमें पग-पग पर निधान हैं एवं योजन-योजन पर रस की कुइयाँ हैं, फिर भी भाग्यहीन व्यक्ति इन्हें नहीं देख पाते ।

२ **जाट-परिवार और अंधा भिखारी**— दो देवों में विवाद हुआ । एक भाग्य का समर्थन कर रहा था दूसरा देवशक्ति का । परीक्षार्थ वे मनुष्यलोक में आए । इधर भाग्यहीन-जाट, जाटनी और उनका पुत्र तीनों खेत जा रहे थे । भाग्य समर्थक देव ने उन्हें धनी बनाने के लिए कहा । मित्र देव ने रास्ते में रत्नों के ढेर लगा दिये । खेत जानेवाला जाट परिवार, "कदाच हम तीनों अंधे हो जायें तो कैसे चलेंगे," यह सोचता हुआ आँखें मींच कर चलने लगा और रत्नों के ढेरों से आगे निकल गया ।

फिर देव सिद्ध-पुरुष बनकर तालाब पर बैठ गए । जाटनी पानी भरने गई एवं रूपवती होने का वरदान माँगा । सिद्धों ने तथास्तु कहा । जाटनी अप्सरा जैसी बन गई । जाट उसे देवी समझकर नमस्कार करने लगा । उसने हँसकर सारी बात कही । जाट क्रुद्ध हुआ एवं सिद्धों के पास जाकर बोला—बनादो इस पापिनी को गदही । सिद्धों ने तथास्तु कह दिया । बेचारी जाटनी गदही बनकर रेंकने लगी । जाट का बेटा रोता-पीटता आकर कहने लगा—महाराज ! भर पाए आपके वरदान ! हमें तो मूल रूप में ला दीजिये ! बस, आ गई जाटनी मूल रूप में । (तीन बार वरदान मिलने पर भी भाग्यहीन होने से धनवान नहीं बन सके ।)

इधर जन्म का अन्धा एक भिखारी शहर में भटक रहा था। भाग्य-समर्थक देव ने कहा—यह भाग्यवान है। परीक्षार्थ देव सिद्ध के रूप से बाजार में घूमते हुए कहने लगे—"हम सिद्धपुरुष हैं, मुँह-माँगा वरदान देते हैं, मांग लो-मांग लो।" अन्धे ने वरदान मांगा कि, "मैं अपने पोते को सोने की थाली में खीर-खांड का भोजन करता देखूं।" देव चकित हुए और उन्हें उसकी सारी मांगें पूरी करनी पड़ीं।

३ कर्महीण नर खेती करै, बलद मरै के काल पड़े

० सभागियां री जीभ चालै र, अभागिया रा पग चालै।

—राजस्थानी कहावतें,

४ खल्वाटो दिवसेश्वरस्य किरणैः संतापितो मस्तके,
वाञ्छन् देशमनातपं विधिवशाद् बिल्वस्य मूलं गतः।
तत्राप्यस्य महाफलेन पतता भग्नं सशब्दं शिरः,
प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रैव यान्त्यापदः॥

—भर्तृहरि-नीतिशतक—९१

खल्वाट (सिर में गंजवाला) पुरुष का सिर सूर्य की किरणों से जलने लगा। वह धूप रहित स्थान को खोजता हुआ दुर्भाग्यवश बिल्व-वृक्ष के नीचे आराम करने लगा। वहां बिल्व का एक बड़ा फल गिरा, खल्वाट का सिर फूट गया, जिसका जोरदार शब्द भी हुआ। अतः यह निश्चित है कि भाग्यहीन जहाँ भी जाता है, प्रायः आपत्तियाँ उसके पीछे आ ही जाती हैं।

५ रावण थां सूं रोष, किण कारण काठो कर्‌यो।
मेल्ही थी सौ कोश, आय मिली तूं आग लै॥

—राजस्थानी दोहा

● ●

१६ भवितव्यता-होनहार-नियति

१ उस तत्त्व का नाम नियति (भवितव्यता) है, जिसके प्रभाव से विश्व के चराचर सभी भाव अन्यथा न होकर नियत रूप से ही प्रकट होते हैं। यानि जो भाव जिस समय जिस निमित्त से प्रकट होना है, वह भाव उसी समय उसी निमित्त से अवश्य प्रकट होकर ही रहता है।

—सूत्रकृतांग १ टीका के आधार से

२ कर्मों की निकाचित अवस्था का नाम भवितव्यता नियति है। कर्म केवल जीव से सम्बन्धित हैं और भवितव्यता जड़ वस्तुओं के परिणाम से भी।

३ भवितव्यता बलवती।

—अभिज्ञानशाकुंतल

होनहार बलवान है।

४ क्या सोचा था क्या हुआ, क्या होगा न खबर।
होनहार की जगत में, ताकत बहुत जबर॥

—दोहासंदोह

५ भवितव्यस्य द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।

—अभिज्ञानशाकुंतल

भवितव्यता के लिए सब रास्ते खुले हैं, चाहे जिस रास्ते से होनहार होकर ही रहता है।

६ अवश्यं भाविनो भावा, भवन्ति महतामपि।
नग्नत्वं नीलकण्ठस्य, महाहिशयनं हरेः।

—हितोपदेश-प्रास्ताविका २८

होनहार भाव होकर ही रहते हैं, महापुरुष भी उनसे नहीं बच सकते। देखिये —महादेव नंगे रहते हैं और विष्णु महासर्प पर सोते है।

७ भवितव्यं भवत्येव, नालिकेरफलाम्बुवत्।
गन्तव्यं गमयत्येव, गजभुक्तकपित्थवत्।

— सुभाषितरत्नभांडागार ६५

नारियल के फलों में पानी की तरह होनहार होकर ही रहती है। हाथी के खाए हुए कपित्थफल की गिरी की तरह जानेवाली चीज जाती हैं।

८ लाख स्याणप कोड़ बुद्धि, कर देखो सब कोय।
अणहोणी होवै नहीं, होणी हो सो होय।

—राजस्थानी दोहा

९ जो विधिनां ने लिख दिये, छठी रात्रि में अंक।
राई घटे न तिल बधे, रह रे जीव ! निशंक ॥

—हिन्दी दोहा

१० मज्जत्वम्भसि यातु मेरुशिखरं शत्रूञ्जयत्वाहवे,
वाणिज्यं कृषिसेवनादिसकला विद्याः कलाः शिक्षतु।
आकाशं विपुलं प्रयातु खगवत् कृत्वा प्रयत्नं परं,
नाभाव्यं भवतीह कर्मवशतो भाव्यस्य नाशः कुतः ॥

—भर्तृहरि-नीतिशतक १०२

चाहे कोई समुद्र में गोता लगा ले, मेरु शिखर पर चला जाय, संग्राम में शत्रुओं को जीत ले, व्यापार, खेती, सेवा आदि समस्त विद्याएं एवं सकल कलाएं सीख ले तथा प्रयत्न करके पक्षी की तरह विशाल आकाश में उड़ जाय फिर भी अनहोनी नहीं होती और कर्मों के वश जो होनी है उसका नाश नहीं होता।

११ 'तुलसी' जसि भवितव्यता, तैसा मिलै सहाय।
आपु न आवहि ताहि पर, ताहि तहाँ लै जाय ॥

—रामचरितमानस

१२ तादृशी जायते बुद्धि-र्व्यवसायोऽपि तादृशः ।
सहायास्तादृशा ज्ञेया, यादृशी भवितव्यता ।।

—चाणक्यनीति ६।६

भवितव्यता के अनुसार ही बुद्धि, व्यवसाय एवं सहायक प्राप्त होते हैं ।

१३ कैसे-कैसे बली भूप भूपर विख्यात भये,
बैरीकुल काँपे नेक भोंहों के विकार सों ।
लंघे गिरि-सायर दिवायर से दीपे जिनों,
कायर किए हैं भट कोटिन हुँकार सों ।
ऐसे माहमानी मौत आये हू न हार मानी,
क्योंही ऊतरे न कभी मान के पहार सों ।
देव सों न हारे पुनि दानों सों न हारे और,
काहू सों न हारे एक हारे होनहार सों ।।

—भूधरदास

१४ होनी को सरल भाव से स्वीकार कर लो ।

—ईसा

१५ आम्र वृक्ष पर अनगिनती के बोर आने पर भी रसयुक्त फल बनना भवितव्यता के अधीन है । स्त्रीयोनि में नौ लाख संज्ञी जीव पैदा होने पर भी पुत्र रूप में जन्म लेना भवितव्यता के वश है । करोड़ों आदमी अध्ययन एवं व्यापार करते हैं फिर भी विद्वान और धनवान होना भवितव्यता के हाथ में है तथा सभी सेवक दौड़कर काम करते हैं लेकिन सुयश मिलना तो भवितव्यता पर निर्भर है । प्रयत्न करने पर भी द्वारका-दहन न रुक सका तथा समझाने पर भी रावण नहीं माना—यह सब भवितव्यता का ही चमत्कार था ।

—नियतिवादी

१६ मिथ्याभाव मना चा इच्छा देवी ।

—मराठी कहावत

इच्छानुसार न होकर भवितव्यतानुसार कुछ और ही हो, तब ऐसे कहा जाता है ।

●●

१७ भवितव्यता के दृष्टान्त

१ उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां,
विकसित यदि पद्म पर्वताग्रे शिलायाम्।
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वह्नि—
स्तदपि न चलतीयं भाविनी कर्म-रेखा।

—सुभाषितरत्नभांडागार, पृष्ठ ५३

चाहे सूर्य पश्चिम दिशा में उग जाय, कमल पर्वत की शिला पर खिल जाय, हवा से मेरु पर्वत चलित हो जाय और अग्नि शीतल हो जाय तो भी भाविनी कर्म-रेखा विचलित नहीं होती।

२ **भाविनी और रेखा**—राजकन्या भाविनी और गरीब बुढ़िया का लड़का रेखा अध्यापक के पास पढ़ रहे थे। ग्रीष्मकाल में एक दिन दोपहर की छुट्टी के समय विद्यार्थी-गण सो रहा था। अध्यापक के पुत्र ने पिता से पूछा कि भाविनी का पति कौन होगा? अति आग्रह देखकर अध्यापक ने कहा—यह रेखा होगा। राजकन्या ने यह सुन लिया। बस, घर आकर कोपघर में सो गयी। राजा ने कारण पूछा। भाविनी ने कहा—"या तो रेखा जीएगा या मैं जीऊँगी। हम दोनों नहीं जी सकते। अतः मैं ही मरूंगी।" पुत्री के प्रेमवश राजा ने रेखा को मारने का हुक्म दे दिया। कत्ल करते समय रेखे की दुःख भरी चिल्लाहट से चांडालों को दया आ गयी। उन्होंने रेखे को छोड़ दिया। रेखा भागकर कहीं दूर देश चला गया और भावी वश वहाँ राजा बन गया। इधर भाविनी का रिस्ता तय करने लिए राजमंत्री वहीं आ पहुँचे। रेखसिंह के साथ रिस्ता भी निश्चय हो गया। लेकिन महाराज ने बरात लेकर जाने से इन्कार कर दिया। अतः भाविनी का विवाह वहीं जाकर किया गया। ज्योंही पति-पत्नी

राजमहल में गये रेखसिंह रुष्ट होकर चुपचाप सो गये। भाविनी ने पूछा—महाराज, फरमाइये मेरे से क्या अपराध हो गया ? रेखसिंह ने लाल होकर कहा—क्या तू भूल गई ? मैं बुढ़िया का लड़का वही रेखा हूं। भाविनी स्तब्ध हो गई और कुछ संभल कर निवेदन करने लगी। राजन् ! मैं घोर अपराधिनी हूं और निःसंदेह मौत की सजा के काबिल हूं ! लेकिन अगर मैं ऐसा न करती तो आप भी राजा रेखसिंह नहीं बन पाते। खैर ! फरमाइये, अब मेरे लिए क्या आज्ञा है ? भाविनी की विलक्षण बुद्धि पर प्रसन्न होकर रेखसिंह ने कहा—पहले मेरी माताजी को लाओ ! भाविनी रथ पर सवार होकर गई और अपनी सास को तत्काल ले आई। रेखसिंह ने माता को नमस्कार किया और भाविनी को गुनाह की माफी दी। अस्तु !

३ खोपड़ी की कढ़ी—

जम्मो कलिंगदेसे पाणिग्गहण अंग देशमज्झम्मि।
मरणं समुद्दतीरे, अज्जो किं किं भविस्सई।

—प्राचीन संग्रह से

कलिंग-देश में जन्म हुआ, अङ्गदेश में विवाह हुआ और समुद्र के किनारे मरण हुआ, देखो ! अब आगे क्या-क्या होगा। मनुष्य की एक खोपड़ी में उपर्युक्त गाथा लिखी हुई थी। एक सेठ उस खोपड़ी को अपनी पेटी में रखकर परदेश गया। प्रतिदिन उसे देखता रहता था। बारह वर्ष बाद देश आया, बहम होने से सेठानी ने खोपड़ी की कढ़ी बनाकर सेठ को खिला दी। पता पाकर सेठ विस्मित हुआ और उपरोक्त गाथा का स्मरण करने लगा।

४ **जन्मपत्री की भविष्यवाणी**—एक सुथार के बीस वर्ष का पुत्र था। उसकी जन्म पत्री में लिखा था कि सावण वदी आठम को अग्नि द्वारा इसकी मौत होगी। शाम को घर के सारे लोग देवदर्शन करने गये। उसने कोठा बन्द करके दीपक जलाया और उसके प्रकाश में बैठकर पढ़ने लगा। पढ़ते-

पढ़ते नींद आ गई, इधर अचानक एक छिपकली ने दीपक को गिराया, वह घासलेट के डिब्बे पर पड़ा, आग लगी और वह लड़का जल कर मर गया।

५ **गरुड़ का मित्र तोता**—तोता कहीं जा रहा था। यमराज मिले और उसे देखकर कुछ हँसे। भयभीत होकर तोते ने सारा हाल अपने मित्र गरुड़ से कहा। गरुड़ ने उसको उठाकर लोकालोक पर्वत की गुफा में रखा। फिर यम से पूछने गया। यम ने कहा—आज १२ बजे उस तोते की मृत्यु लोकालोक पर्वत की गुफा में थी—इसीलिए हास्य आ गया था। गरुड़ देखने गया तो तोता मरा मिला, एक शेर आकर उसे खा गया था।

६ **होनी को नमस्कार**—एक आदमी को मार्ग में लक्ष्मी, विधाता और होनी (भवितव्यता)—ये तीन स्त्रियाँ मिलीं। उसने नमस्कार किया। पूछने पर बोला—होनी को नमस्कार मेरा। क्योंकि लक्ष्मी तो चंचल है और बेमाता जो कुछ लिखना था लिख चुकी, अब सारा खेल होनी के हाथ है।

७ महाभारत में वर्णित जन्मेजय राजा की बात भी भवितव्यता की मुख्यता जाहिर करने वाली है।

१६ आनन्द

१ आत्मा का परमात्मा से मिलना ही आनन्द है।

—पास्कल

२ कोई भी मनुष्य आनन्दानुभूति के बिना जी नहीं सकता।

—सर टामस ए क्विनास

३ आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्।
आनन्दाद् ध्येव खलु इमानि भूतानि जायन्ते।
आनन्देन जातानि जीवन्ति,
आनन्दं प्रयन्ति अभिसंविशन्तीति।

—तैत्तिरीय-उपनिषद् ३।६

उसने जाना कि आनन्द ब्रह्म है—आनन्द से ही ये सब भूत उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न होकर जीवित रहते हैं और फिर उसी में समा जाते हैं।

४ आनन्द सर्वोत्तम मदिरा है।

—जॉर्ज इलियट

५ आनन्द वह खुशी है, जिसे भोगने पर पछताना नहीं पड़ता।

—सुकरात

६ आनन्दघन-स्थिति प्राप्त करने का साधन चिद्घन अथवा विज्ञान है।

—अरविन्द

७ आनन्द परिग्रह को बढ़ाने से नहीं, दिल को बढ़ाने से बढ़ता है।

—रस्किन

८ जब मन से कंचन-कामिनी की आसक्ति छुड़ा ली तो फिर आत्मा में क्या बचा ? सिर्फ ब्रह्मानन्द ।

—रामकृष्ण

९ पार्वती ने पूछा—स्वामिन् ! अभीक्ष्ण-अनन्त-सर्वग्राही आनन्द का मूल क्या है ?

शिवजी ने उत्तर दिया—आनन्द का मूल है विश्वास ।

—रामकृष्ण

१० आनन्दरूप रत्न की प्राप्ति के लिए पुद्गलसुखरूप पैसे का त्याग करो ।

११ उस व्यक्ति के आनन्द में क्या वृद्धि की जाय, जो स्वस्थ है, ऋण-मुक्त है और हृदय का पवित्र है ।

—आदम स्मिथ

१२ आनन्द में और दुःख में एक गुण समान है कि वे विचारशक्ति का हरण कर लेते हैं ।

—प्लेटन

१३ सचमुच ही आनन्द में, रह नहिं सकता ज्ञान ।
देखो बच्चे खेल में, भूल बैठते भान ।।

—दोहा-संदोह

२० आनन्द की स्थिति

१ जीवन का आनन्द विवेक पर निर्भर है।

२ आनन्द मन की समता और दृढ़ता में है।

३ शोपेन हॉवर कहता है—अपने अन्दर आनन्द पाना मुश्किल है, पर उसे और कहीं पा सकना असम्भव है।

—रामतीर्थ

४ आनन्द संतोष में है और कर्तव्य पूरा करने में है। खाने को मेरे पास मोटा अन्न हो, पीने के लिए पानी हो और तकिये के लिए मुड़ी हुई कुहनी हो, फिर मुझे और क्या चाहिये!

—कन्फ्यूसियस

५ आनन्द आवश्यकता में है—पहली रोटी जितनी स्वाद लगती है, दूसरी-तीसरी में उतना स्वाद नहीं रहता। तृषातुर आने-आने की शर्बत भरी ग्लास क्रमशः आठ-चार-दो-एक-आधे आने में लेता है।

६ आनन्द रुचि में है, चीजों में नहीं। हम अपनी इच्छित वस्तु पाकर ही आनन्दित होते हैं न कि दूसरों की इच्छित।

—रो० वी०

७ हम आनन्द का अनुभव करने की अपेक्षा दूसरों को दिखाने का प्रयास अधिक करते हैं कि हम आनन्द में हैं।

—कन्फ्यूसियस

८ पशु का आनन्द इन्द्रियतृप्ति है और मनुष्य का आनन्द बुद्धिगत है।

—विवेकानन्द

९ इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं दस चित्तसमाहिठाणा पण्णत्ता।

—दशाश्रुतस्कन्ध दशा ५

स्थविर भगवन्तों ने चित्तसमाधि के दस स्थान कहे हैं। तपस्या तथा धर्म चिन्ता करते हुए कर्मों का पर्दा हल्का पड़ जाने से चित्त में होने वाले विशुद्ध आनन्द को **चित्तसमाधि** कहते हैं। चित्तसमाधि के दस स्थान (कारण) कहे हैं—

१–जिसके चित्त में पहले धर्म की भावना नहीं थी, उसमें धर्म भावना आ जाने पर।

२–पहले कभी नहीं देखे हुए शुभ स्वप्न के आने पर।

३–जातिस्मरण आदि ज्ञान उत्पन्न होने पर (अपने पूर्व-भवों को देख लेने से)।

४–अकस्मात् किसी देव का दर्शन होने पर (उसकी ऋद्धि, कान्ति और अनुभाव वगैरह देखने पर।)

५–नए उत्पन्न अवधिज्ञान से लोक के स्वरूप को जान लेने पर।

६–नए उत्पन्न अवधिदर्शन से लोक को देखने पर।

७–नए उत्पन्न मनःपर्यवज्ञान से अढ़ाईद्वीप में रहे हुए संज्ञी जीवों के मनोभावों को जानने पर।

८–नवीन उत्पन्न केवलज्ञान से सम्पूर्ण लोकालोक को जान लेने पर।

९–नवीन उत्पन्न केवलदर्शन से सम्पूर्ण लोकालोक को देख लेने पर।

१०–केवलज्ञान-केवलदर्शन सहित मृत्यु होने से सब दुःख तथा जरा-मरण के बन्धन छूट जाने पर।

(इन दस कारणों से चित्त में समाधि उत्पन्न होती है।)

●●

२१ सुख

१ **सुखं प्रीतिः ।**

—**नीतिवाक्यामृत** ६।२।१०

जिससे आत्मा, मन और इन्द्रियों को आनन्द हो, उसे **सुख** कहते हैं ।

२ आधयो व्याधयश्चैव, द्वयं दुःखस्य कारणम् ।
तन्निवृत्तिः सुखं विद्यात्, तत्क्षयो मोक्ष उच्यते ।।

—**योगवाशिष्ठ** ६।८।७।१२

आधियाँ—मानसिक पीड़ाएँ और **व्याधियाँ**—शारीरिक रोग—ये दोनों दुःख के कारण हैं। इन दोनों की निवृत्ति सुख है और संपूर्ण रूप से क्षय हो जाना मोक्ष है ।

३ विषदग्धस्य भक्तस्य, दन्तस्य पतितस्य च ।
अमात्यस्य च दुष्टस्य, मूलादुद्धरणं सुखम् ।।

विष-मिश्रित भोजन, हिला हुआ दाँत और दुष्ट मंत्री—इन तीनों को मूल से उखाड़ फेंकने में ही सुख होता है ।

४ **विभिन्न परिभाषाओं में सुख**—

१ **दार्शनिक**—जिसको एक बार पाकर हम चाहें कि वह सदा ही बना रहे ।

२ **वैज्ञानिक**—जिसमें बुद्धिगतकल्पना प्रयोग से साकार बन जाती है ।

३ **कवि**—जिसमें शब्दों की वीणा पर अनुभूति के स्वरों को झंकृत कर देने की शक्ति है ।

४ **कलाकार**—जिसमें अर्पण और ग्रहण का संतुलन हो ।

५ **बालक**—जिसमें माता की ममता और पिता के वात्सल्य की अनुभूति हो।

६ **युवक**—जिसमें व्यक्ति अपने सहयोगी के साथ तन-मन की सुध भूलकर अनुभूति के उतार-चढ़ाव पर डूबता-तैरता रहे।

७ **वृद्ध**—जिसमें अतृप्त काङ्क्षाएं तृप्ति की स्पर्धा में व्यक्ति को मिल जाए।

८ **स्त्री**—जिसमें नारी का नारीत्व पुरुष के पौरुष में विलीन होकर भी एक न हो।

९ **भिक्षु**—जिसमें प्राप्तव्य का न अभाव हो और न अतिभाव।

१० **धर्मनेता**—जिसमें चेतना का दीप प्रज्वलित होकर अनन्तकाल तक प्रकाश की किरणें फैलाता रहे।

५ **सुख क्या है ?**

० क्या पदार्थों का धर्म है ? नहीं, इनके अभाव में भी रहता है।

० क्या मन का धर्म है ? नहीं, सुषुप्ति दशा में मन अविद्या में लीन रहता है, फिर भी सुख है।

० क्या क्रिया का धर्म है ? नहीं, सिद्धों में क्रिया न होने पर भी परम सुख है।

० क्या इन्द्रियों का धर्म है ? नहीं, अनिन्द्रिय-अवस्था में भी सुख विद्यमान है। अतः सुख आत्मा का ही धर्म है।

६ सुख और आनन्द—दो ऐसे इत्र हैं कि इन्हें जितना भी दूसरों पर छिड़को, तुम्हें उतनी ही ज्यादा खुशबू आएगी।

—इमर्सन

७ **सुख की अशाश्वतता—**

० दुर्लभं हि सदा सुखम्।

—वाल्मीकि रामायण २।१८।१३

सुख का शाश्वत रहना कठिन है।

- सुखं न कस्यापि भजेत् स्थिरत्वम् ।

  सुख किसी के पास स्थिर होकर नहीं रहता ।

- सदा-सदा चानणी रात को हुवै नी ।
- चार दिनां की चांदणी, फेर अंधेरी रात ।

—राजस्थानी कहावतें

८ सुखं कुतो भिन्नसीलस्स ।

—विशुद्धिमग्गो— १।५८

जिसका शील (सदाचार) भग्न हो गया है, उसे संसार में सुख कहाँ ?

२२ वास्तविक सुख

१ निव्विकप्पसुहं सुहं ।

—बृहत्कल्पभाष्य ५७१७

वस्तुतः रागद्वेष के विकल्प से मुक्त निर्विकल्प सुख ही सुख है ।

२ दुक्खी सुखं पत्थयति, सुखी भिय्योपि इच्छति ।
उपेक्खा पन सन्तत्ता, सुखमिच्चेव भासिता ।।

— विसुद्धिमग्गो ६७।२३८

दुःखी सुख की इच्छा करता है, सुखी और अधिक सुख चाहता रहता है । किन्तु दुःख-सुख में उपेक्षा (तटस्थ) भाव रखना ही वस्तुतः सुख है ।

३ जं सुहेण सुहं लद्धं. अच्चंतं सुहमेव तं ।
जं सुहेण दुहं लद्धं, मा मे तेण समागमो ।।

—ऋषिभाषित ३८।१

जिस सुख से सुख प्राप्त होता है, वही अत्यन्त सुख है । जिस सुख से दुःख की उत्पत्ति हो, उससे मेरा समागम न हो । (स्वातिपुत्र बुद्ध-आर्हर्षि ऐसा बोले)

२३ सांसारिक सुख

१ सांसारिक सुख सुपारी के समान हैं। सुपारी के लिए कइयों के दांत टूटे हैं और कइयों के कपड़े फटे हैं। किन्तु आज तक क्या किसी का सुपारी से पेट भरा है ? नहीं ! तो इसी प्रकार इन सांसारिक सुखों से भी कोई तृप्त नहीं हुआ।

२ सांसारिक सुख आकाश अथवा साबुन के झाग के रंगवत् अस्थिर हैं। बनावटी (मिट्टी के) आम, अंगूर, अनार, इलायची के समान आत्मा की भूख नहीं मिटा सकते। ये स्वप्न एवं चांदनी रात के समान नाशमान हैं।

३ आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं,
तस्यार्द्धस्य परस्य चार्द्धमपरं बालत्व-वृद्धत्वयोः।
शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते।
जीवे वारितरङ्गचञ्चलतरे, सौख्यं कुतः प्राणिनाम् ॥

—भर्तृहरि—वैराग्यशतक १०७

मनुष्यों की आयु प्रायः सौ वर्ष की नियत है। उसमें ५० वर्ष तो रात को सोने में गए, उससे आधे २५ बचपन में और बुढ़ापे में नष्ट हो गए। शेष २५ वर्ष रहे, वे भी व्याधि-वियोग, पर-सेवा आदि अनेक दुःखों सहित व्यतीत होते हैं, अब देखो कि जल-तरंगवत् इस चंचल जीवन में प्राणियों को सुख कहाँ ?

४ इन्द्रियप्रभवं सौख्यं, सुखाभासं न तत्सुखम्।

— तत्त्वामृत

इन्द्रियों से उत्पन्न सुख वास्तविक सुख नहीं, सुखाभास है।

५ प्रत्येक सांसारिक सुख के पीछे दुःख होता है। जैसे—बरसात के पीछे कर्दम, गुलाब के पीछे कांटा, पानी होगा तो सेवाल भी आएगी, दाल खाओगे तो हाथ भी बिगड़ेंगे, पुत्र होगा तो उसके मल-मूत्र भी साफ करने पड़ेंगे, दूध चाहोगे तो लात भी मिलेगी तथा प्रजासत्ताक राज्य बनाओगे तो कानून भी पालने पड़ेंगे।

६ गाड़ी का सुख गाड़ीभर तो दुख भी गाड़ीभर।

—हिन्दी कहावत

२४ सुख में धर्म की विस्मृति

१ सुहिओ हु जणो न बुज्झई ।

—उत्तराध्ययन-निर्युक्ति १४०

सुखी मनुष्य प्रायः जल्दी नहीं जग पाता ।

२ **अंधा कहता है**—आंखें होती तो संतों के दर्शन करता, पर आँखें खुलीं तो स्त्रियादि के रूपों में लग गया ।

लंगड़ा कहता है—पैर होते तो सत्संग में जाता, किन्तु पैर मिलते ही धन के लिए दौड़ने लगा ।

निर्धन कहता है—कुछ धन हो तो धर्म-ध्यान में लग जाऊँ, किन्तु धन मिलने पर, जो करता था वह भी भूल गया।

मूर्ख विचार करता है—कुछ विद्या मिल जाए तो परोपकार करूं किन्तु विद्या मिलते ही गर्व में फूल गया और सीधा बोलना भी भूल गया ।

—व्याख्यान के मसालों से

३ दुखियां आगल दुख कहै, आधो दुख ले लेय ।
सुखियां आगल दुख कहै, हंस-हंस ताली देय ॥

—राजस्थानी दोहा

२५ दुःख के बाद सुख

१ पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।

—**योगवाशिष्ट**

अवनति के बाद प्रायः उन्नति हुआ करती है ।

२ देअर इज नो रोज विदाउट ए थोर्न ।

—**अंग्रेजी कहावत**

बिना कांटे के फूल नहीं होता (बिना दुःख के सुख नहीं होता)

३ भवन्ति न सुखान्यविघ्नानि ।

—**पंचतन्त्र**

सुख विघ्न रहित नहीं होते ।

४ **दुःख सहे बिना सुख नहीं मिलता**—रोगी कड़ुवी-कड़ुवी औषधियाँ खाकर ही निरोग होता है । पूरा परिश्रम करने से ही आदमी बी० ए०, एम० ए० बनता है । दिन-रात मेहनत करके ही दो पैसे कमाए जाते हैं । अग्नि का ताप सहने से ही गर्मागर्म रोटियाँ मिलती हैं । सोना चाँदी गलकर ही भूषण बनते हैं । हीरा शान पर चढ़कर ही ताज में चमकता है ।[1] मिट्टी कुटी जाकर ही बर्तन का रूप लेती है । कपड़ा चीर-चीर होकर ही बढ़िया पोशाक बनता है । कंघी मुंह चिराकर ही शिरों में स्थान करती है । खरल में पिसा जाकर ही सुरमा आँखों में विराजमान होता है । एवं नाक कान बिंधवाने से ही उनमें आभूषण पहने जाते हैं ।

—**'उपदेशसुमन माला' के आधार पर**

५ सीधी आंगल्यां घी को नीकलैनी ।

---

१ **अलब्धशाणोत्कषणा नृपाणां, न जातु मौलौ मणयो वसन्ति ।**

० सेल धमीड़ा जो सहै, वै जागीरी खाय ।
(सेल धमीड़ा वै सहै, जो जागीरी खाय ।।)

० मीठो खासी जिका खारो ही खासी ।

— राजस्थानी कहावतें

६ जो सोए स्वप्नों के तम में, वे जागेंगे यह सत्य बात ।
जो देख चुके जीवन निशीथ, वे देखेंगे जीवन-प्रभात ।।

—सुमित्रानन्दन पंत

७ यदेवोपनतं दुःखात् , सुखं तद् रसवत्तरम् ।
निर्वाणाय तरुच्छाया, तप्तस्य हि विशेषतः ।

— विक्रमोर्वशीयनाटिका ३।२१

जैसे—धूप से संतप्त मनुष्य के लिए वृक्ष की छाया विशेष सुखमय होती है, वैसे ही जो सुख, दुःख के बाद प्राप्त होता है, वह अधिक रस वाला होता है ।

८ सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम् ।
सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रतां धृतः शरीरेण मृतः स जीवति ।

—मृच्छकटिक १।१०

घोर अन्धकार में दीपदर्शन की भाँति दुःख का अनुभव करके ही सुख अच्छा लगता है जो सुख के बाद दरिद्रता को प्राप्त हो जाता है, वह वास्तव में मृत है, केवल शरीर से धारण किया हुआ जीता है ।

२६ सुख के भेद

१ तीन प्रकार के सुख—

यत्तदग्रे विषमिव, परिणामेऽमृतोपमम् ।
तत् सुखं सात्त्विकं प्रोक्त-मात्मबुद्धिप्रसादनम् ॥३७॥
विषयेन्द्रियसंयोगाद्, यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव, तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥३८॥
यदग्रे चानुबन्धे च, सुखं मोहनमात्मनः ।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं, तत्तामसमुदाहृतम् ॥३९॥

—गीता १८

जो साधना के प्रारम्भकाल में (धर्मध्यान-भजन आदि) **विषवत्** लगता है, किन्तु परिणाम में अमृततुल्य होता है, वह भगवद्विषयक बुद्धि से उत्पन्न होने वाला सुख **सात्त्विक** है ।३७।

जो सुख विषय और इन्द्रियों के संयोग से उत्पन्न होता है और भोगकाल में अमृत तुल्य लगता है, किंतु परिणाम में जहर तुल्य होता है, वह सुख **राजस** कहलाता है ।३८।

जो सुख भोग के समय और परिणाम के समय आत्मा को मोहित करने वाला है, वह सुख **तामस** है । उसकी उत्पत्ति निद्रा, आलस्य और प्रमाद से होती है ।३९।

२ छः सुख ; दो प्रकार से—

(क) अर्थागमो नित्यमरोगिता च, प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च ।
वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या, षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन् !

—विदुरनीति १।८७.

१ धन का आगमन, २ सदा स्वस्थ रहना, ३-४ प्यारी एवं मिष्टभाषिणी स्त्री, ५ आज्ञाकारी पुत्र, ६ धन देने वाली विद्या, हे राजन् ! इस लोक में ये छः सुख हैं ।

(ख) आरोग्यमानृण्यमविप्रवासः, सद्भिर्मनुष्यैः सह संप्रयोगः ।
स्वप्रत्ययावृत्तिरभीतवासः, षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन् !

—विदुरनीति १।६४

१ निरोग होना, २ ऋणी न होना, ३ प्रवासी न होना, ४ स्वजनों का साथ होना, ५ स्वाधीन आजीविका का होना, ६ भयरहित निवास स्थान होना । हे राजन ! इस लोक में ये छः सुख हैं ।

३ **सात सुख**—१ पहलो सुख नीरोगी काया, २ दूजो सुख घर में माया, ३ तीजो सुख पतिव्रता नारी, ४ चौथो सुख पुत्र आज्ञाकारी, ५ पांचवो सुख न्यात में पासो, ६ छठो सुख राज में हांसो, ७ सातमो सुख स्वर्ग में वासो ।

—राजस्थानी कहावत

४ **दस सुख**—

दसविहे सुहे पन्नत्ते, तं जहा—
आरोग्गं दीहमाउ, एड्ढेज्जं काम-भोग-संतोसो ।
अत्थी सुहभोग निक्खम्म-मेव तत्तो अणाबाहे ।

—स्थानांग १०।७३७

दस प्रकार के सुख कहे हैं—

यथा—१ निरोगिता, २ दीर्घ आयु, ३ धनाढ्यता, ४ काम—(शब्दरूप मय), ५—भोग (रस-गंध-स्पर्शमय), ६ संतोष, ७ अस्ति-आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति, ८ सुख-भोग, ९ दीक्षा, १० मोक्ष ।

२७ सुख का स्रोत

१ सुख सर्वत्र विद्यमान है, किन्तु उसका स्रोत हमारे हृदय में है।

—रस्किन

२ सुख अनुकूलता में है। खाना-पीना-पहिनना-ओढ़ना-बोलना-चलना-पढ़ना-लिखना-गाना-बजाना, व्यापार-नौकरी आदि सभी क्रियाओं में अनुकूलता हो, तभी सुख का अनुभव होता है।

३ खाने का सुख पदार्थों में नहीं, भूख में है।
सोने का सुख गदेलों में नहीं, नींद में है।

४ सुख उसे है जो शान्त है। शान्त वही है, जिसका मन चंचल नहीं। मन-चंचल उसी का नहीं, जिसकी पदार्थों में आसक्ति नहीं होती। आसक्ति उसी को नही होती, जो आत्मज्ञानी है।

—व्याख्यान के मसालों से

१ तस्य खलु संसारे सुखं, यस्य कृषिः धेनवः शाकवाटः सद्मन्यु-
दपानं च ।

—नीतिवाक्यामृत ८।३

जिसके पास खेती है, गायें हैं, शाक-सब्जी की बाड़ी है और घर में कुआँ है, वह संसार में सुखी है ।

२ कुलीनैः सह संपर्कः पण्डितैः सह मित्रताम् ।
ज्ञातिभिश्चः समं मेलं, कुर्वाणो नावसीदति ।

—सुभाषितरत्न भाण्डागार पृष्ठ १६८

कुलीनों से सम्पर्क, पण्डितों से मित्रता एवं स्वजनों से मेल-जोल रखने वाला कभी नहीं सीदाता ।

३ यश्चमूढतमो लोके, यश्च बुद्धेः परं गतः ।
तावुभौ सुखमेधेते, क्लिश्यत्यन्तरितो जनः ।

—श्रीमद्भागवत ३।७।११

संसार में जो पूरा मूर्ख है अथवा पूर्ण ज्ञानी है—ये दो ही सुख से रहते हैं किन्तु बीच की स्थिति वाला क्लेश को प्राप्त होता है ।

४ प्रीवेन्शन इज बैटर दैन क्योर ।

—अंग्रेजी कहावत

० अग्रशोची सदा सुखी ।

—संस्कृत कहावत

पहले सोचने वाला सदा सुखी रहता है ।

५ हानेः शोकस्ततो दुःखं, लाभाद् रागस्ततोऽसुखम् ।
तेन हानावशोकः सन् , सुखी स्यात् सर्वदाऽसुखी ।

—आत्मानुशासन १८६

हानि से शोक एवं उससे दुःख होता है और लाभ से राग एवं उससे भी दुःख होता है। अतः हानि के समय शोक नहीं करनेवाला दुःख होने पर भी सदा सुखी रहता है।

६ स्वशरीरेऽपि न रज्यति, शत्रावपि न प्रदोषमुपयाति।
रोग-जरा-मरणभयै—रव्यथितो यः स नित्यसुखी।

—प्रशमरति २४०

जो अपने शरीर में भी राग नहीं करता एवं शत्रु पर भी द्वेष नहीं करता तथा जो रोग, जरा एवं मरण के भय से पीड़ित नहीं है, वह सदा सुखी है।

७ यदा भावेन भवति, सर्वभावेषु निःस्पृहः।
तदा सुखमवाप्नोति, प्रेत्य चेह च शाश्वतम्॥

—मनुस्मृति ६।८०

व्यक्ति जब परमार्थ रूप से सब विषयों से निःस्पृह हो जाता है, तभी इस लोक-परलोक में शाश्वत सुख पाता है।

८ मैंने अपनी इच्छाओं का निरोध करके सुख प्राप्त करना सीखा है, उनकी पूर्ति द्वारा नहीं।

—जान स्टुआर्ट मिल

९ आप मुंह बन्द करें, कान व आंखें बन्द करें। जन्म भर आपको कोई उपद्रव नहीं होगा, किन्तु आप यदि मुँह खोलेंगे और चालाकी दिखाएंगे तो जन्मभर दुःख झेलेंगे।

—ताओ उपनिषद् ५२

१० अपने से अधिक दुःखी को देखो, सुख का अनुभव होने लगेगा। ५०० में संतोष न हो तो ५० वाले को देखो तथा रोग में महारोगी को याद करो।

० शेख सादी ईद के दिन नए जूते न मिलने से मरने चला। रास्ते में एक लंगड़ा भिखारी नजर चढ़ा। उसे देखकर संतुष्ट हुआ कि मेरे तो सिर्फ जूते ही नहीं हैं, इसके तो टांग भी नहीं है।

—व्याख्यान के मसालों से

११ अपने सुख गिनो, दुःख नहीं। सुखी बनने का उपयुक्त तरीका यही हैं।

१२ सुहृदि निरन्तरचित्ते, गुणवति भृत्येऽनुवर्तिनि कलत्रे।
स्वामिनि शक्तिसमेते, निवेद्य दुःखं सुखी भवति।

—पंचतन्त्र १।११०

सच्चे मित्र को, गुणवान भृत्य को, अपने मन के पीछे चलने वाली स्त्री को और शक्तिशाली स्वामी को दुःख कहकर प्राणी सुखी होता है।

१३ सुखी मानव तो वही है, जो आज को अपना बना ले और हो आश्वस्त कह दे, जी लिया बस, आज मैं तो 'कल' जो करना हो तू कर ले!

—रोमन कवि होमर

१४ पञ्चभिः सह गन्तव्यं, स्थातव्यं पञ्चभिः सह।
पञ्चभिः सह वक्तव्यं, न दुखं पञ्चभिः सह।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ १६१

पाँच व्यक्तियों के साथ चलना चाहिए, पाँचों के साथ ठहरना चाहिए, और पाँचों के साथ ही बात करनी चाहिए। पाँचों के साथ दुःख नहीं होता।

१५ सुखिनो चित्तं समाधीयति।

—विशुद्धिमग्गो ३।४

सुखी का चित्त एकाग्र होता है।

सुख-दुःख

१ सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्।
एतद् विद्यात् समासेन, लक्षणं सुख-दुःखयोः ।

—मनुस्मृति ४।१६०

परवशता मात्र दुःख है और स्ववशता मात्र सुख है। संक्षेप में सुख-दुःख का यही लक्षण है।

२ सुखं सकलसंन्यासो, दुःखं तस्य विपर्ययः ।

—आत्मानुशासन १८७

सर्वथा संग का परित्याग सुख है और जो इससे उल्टा है, वह दुःख है।

३ यथा भूमिगतं बीज-मङ्कुरादनुमीयते।
सुख-दुःखात्तथा प्राच्य-धर्माधर्म-विनिश्चयः ।

अङ्कुर से जैसे भूमिगत बीज का पता लग जाता है, उसी प्रकार सुख-दुःख से व्यक्ति के पूर्व जन्म में किए हुए धर्म-अधर्म का निश्चय हो जाता है।

४ सुख-दुःख तो संसार में, सब काहू के होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख भुगते रोय।

५ सुख-दुःखानि तुल्यानि, यथात्मनि तथा परे।

—दक्षस्मृति

अपनी आत्मा को जैसे—सुख प्रिय एवं दुःख अप्रिय है। उसी प्रकार दूसरों के लिए भी समझो।

६ सुख कहना जन से, दुःख कहना मन से।

—हिन्दी कहावत

३० मन के पीछे सुख-दुःख

१ मस्तिष्क अपनी जगह एक ही है, यह अपने में ही स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बना सकता है।

—मिल्टन

२ वास्तव में भावना ही सुख-दुःख है। एक खुशी का तार आता है, उससे स्वजनों को सुख होता है, दुश्मनों को दुःख होता है और चपरासी को कुछ भी नहीं होता।

३ सेठ की पुत्र-वधू ने जब तक हार में जुड़ी हुई लोहे की ढ़ाई सेरी को सोना समझा, तब तक उसे उसका बोझा न लगा और लोहे को जानते ही हाय-हाय कह कर रोने लगी।

४ हम न कभी उतने सुखी होते हैं और न कभी उतने दुःखी, जितना हम सोचते हैं।

—रोश फूको

५ मैंने अपने जीवन के छः दिन भी सुख-पूर्वक नहीं बिताए।

—नेपोलियन

६ मेरे लिए जीवन अत्यन्त मोहक वस्तु है।

—अंधी-बहरी-गूंगी हेलनकेलर

३१ सुख-दुःख का जोड़ा

१ कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा,
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण ।

—मेघदूत ५।४६

ऐसा कौन है जिसको एकान्त रूप से सुख या दुःख प्राप्त होता है। मनुष्य की दशा पहिए की नेमि (घेरा) की तरह नीचे ऊपर आती-जाती ही रहती है।

२ खण्डः पुनरपि पूर्णः, पुनरपि खण्डः पुनः शशी पूर्णः ।
संपद्-विपदौ प्रायः, कस्यापि न स्थिरे स्याताम् ।

—चंदचरित्र पृष्ठ ४३

खंडित चन्द्र फिर पूर्ण हो जाता है और फिर खंडित हो जाता है क्योंकि सम्पत्ति-विपत्ति किसी के स्थिर नहीं होती।

३ तराजू के पलड़े की तरह एक के उत्थान के साथ दूसरे का पतन अवश्य होता है। इसी प्रकार एक के नफा तो दूसरे के नुक्सान, एक की जीत तो दूसरे की हार, एक का सम्मान तो दूसरे का अपमान, एक का उदय होना तो दूसरे का अस्त होना तथा एक का फ़लना तो दूसरे का कुम्हलाना भी समझ लो।

—व्याख्यान के मसालों से

४ उठीनली छायां अठीनें आयां ही सरै।

— राजस्थानी कहावत

५ पूनम की चांदनी और अमावस का अंधेरा—दोनों ही नाशमान हैं। स्वर्ग के सुख व नरक के दुःख—दोनों ही क्षणिक हैं, इसीप्रकार सुख-दुःख को भी क्षणिक समझो।

—व्याख्यान के मसालों से

६ सीता हरवा को दिन एक रघुरा को आयो
लंक लड़वा को राज लीधो जग हाको है।
बन वसवा को दिन एक पांडवां को लीधो
राज्य हस्तनां को कीधो कौरव को साको है।
जपे जुगतेश वे कहां है ताको पतो नांह,
यों ही जन्म पायो सर्व सुख सुपना को।
एक दिन फाको एक दिन है नफा को
एक जुफम-जुफा को, एक सफम-सफा को है ?

१ दुःखमप्रीतिः । —नीतिवाक्यामृत ६।१७

वस्तु को देखने पर जो अप्रीति हो, वह दुख है ।

२ दुक्खो पावस्स उच्चओ । —धम्मपद ११७

दुःख पापों का ढेर है ।

३ मुझे यह एक नवीन बात जान पड़ी है कि सुख पाने की इच्छा का ही अर्थ दुःख है । —खलील जिब्रान

४ अत्ताकडे दुक्खे नो परकडे । —भगवती १७।३

दुःख अपनी आत्मा का ही किया हुआ है । दूसरों का नहीं ।

५ से णं भंते ! दुक्खे केण कडे ? जीवेण कडे पमाएणं ।

—स्थानांग ३।२

प्रश्न—भगवन् ! यह दुःख किसका किया हुआ है ?

उत्तर—प्रमाद के द्वारा जीव ने स्वयं दुःख को उत्पन्न किया है ।

६ किं भया पाणा ? दुक्खभया पाणा । —स्थानांग ३।२

प्रश्न—प्राणी किससे भय पाते हैं ? उत्तर—दुःख से ।

७ स्मृत्वा-स्मृत्वा याति दुःखं नवत्वम् । —स्वप्नवासवदत्ता

बार-बार स्मरण करने से दुःख नया हो जाता है ।

८ अन्नस्स दुक्खं अन्नो नो परियाइयइ ।
अन्नेण कडं अन्नो नो पडिसंवेदेइ । —सूत्रकृतांग श्रुत २, अ० १।१३

दूसरे के दुःख को दूसरा नहीं बटा सकता । दूसरे का कर्म-फल दूसरा नहीं भोग सकता ।

९ जिय को दुख हिय आवही, हिय दुख नैनन मांह ।
कूआ जल कोठा भरे, कोठा खेली मांह ।

—राजस्थानी दोहा

३३ दुःख की अधिकता

१ सुखाद् बहुतरं दुःखं, जीविते नास्ति संशयः ।

—महाभारत

जीवन में सुख से दुःख अधिक है—यह निःसंदेह बात है ।

२ दीवाली तो क्यां एक ने, होली तो घेर-घेर ।

—गुजराती कहावत

३ सीयालै में सी घणो, उन्हालै में लूआं ।
चोमासे में माछर काटै, ए दुःख जासी मूआं ।।

४ एक साथ एक से अधिक दुःख मत भोगो !
कुछ व्यक्ति तीन प्रकार के दुःखों से पीड़ित रहते हैं—अतीत-दुःखों की स्मृति से, वर्तमान-दुःखों के भोग से और भावी दुखों के भय से ।

५ हमारा दुःख जितना उग्र होगा, जीभ उतना ही कम व्यक्त करेगी ।

—तालमुद

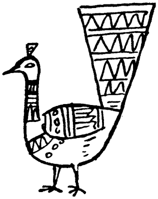

१ मनुष्य-शरीर में साढ़े तीन करोड़ रोम हैं। उन सबमें अग्निवर्ण सुइयां चुभाई जाने पर जो दुःख होता है, गर्भावस्था में उससे आठ गुना, जन्मते समय करोड़ गुना और मरते समय कोड़ा-कोड़ गुना दुखः होता है।
—**महानिशीथ अध्ययन ५**

२ तीन के लिए तीन महान् दुःख हैं—

(१) बालक के लिए मां की मृत्यु,
(२) तरुणी के लिये पति की मृत्यु,
(३) वृद्ध के लिए पत्नी की मृत्यु।

—**'तीन बात' पुस्तक से**

३ आज्ञाभङ्गो नरेन्द्राणां, ब्राह्मणानामनादरः।
पृथक्शय्या च नारीणा - मशस्त्रविहितो वधः॥

—**हितोपदेश २।८५**

आज्ञा-भंग होने पर राजाओं को, अनादर होने पर ब्राह्मणों को, अलग शय्या पर सोने से स्त्रियों को इतना दुखः होता है, मानो! शस्त्र के बिना ही किसी ने उनका वध कर दिया हो।

४ कुग्रामवासः कुलहीनसेवा, कुभोजनं क्रोधमुखी च भार्या।
पुत्रश्च मूर्खो विधवा च कन्या, विनाग्निना षट् प्रदहन्ति कायम्॥
—**चाणक्यनीति ४।८**

१ कुग्राम का वास २ कुलहीन की सेवा ३ निष्कृष्ट भोजन ४ क्रोधमुखी स्त्री ५ मूर्ख पुत्र ६ विधवा कन्या—ये छहों अग्नि के बिना ही शरीर को जलाते हैं।

५ वैर - वैश्वानर - व्याधि - वाद - व्यसनलक्षणाः।
महानर्थाय जायन्ते, वकाराः पञ्च वर्धिताः॥

१ वैर, २ वैश्वानर (अग्नि), ३ व्याधि (रोग) ४ वाद (विवाद) ५ व्यसन (दुर्व्यसन)—ये पांच वकार बढ़ने पर महान् अनर्थ करने वाले होते हैं।

३५ दुःख में दुःख

१ ए लिटिल लीक विल सिंक ए ग्रेट शिप।

—अंग्रेजी कहावत

दुःख में दुःख होता ही है।

२ क्षते प्रहारा निपतन्त्यभीक्षण-मन्नक्षये वर्धते जाठराग्निः।
आपत्सु वैराणि समुद्भवन्ति, छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति।

—पंचतन्त्र २।१९२

घाव पर बार-बार चोट लगती है, धन जाने पर भूख बढ़ जाती है, तथा आपत्ति के समय नये वैर उत्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि दुःखों में बहुलता से नए दुःख आते हैं।

३ एकस्य दुःखस्य न यावदन्तं, गच्छाम्यहं पारमिवार्णवस्य।
तावद् द्वितीयं समुपस्थितं मे, छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति॥

—पंचतन्त्र २।१८६

हा! हा! एक दुःख का तो समुद्र की तरह पार अभी आया ही नहीं; दूसरा फिर उपस्थित हो गया। अब क्या करूं? दुःखों में दुःख आते ही हैं।

४ मूसा भज्जा मौत तों अग्गे मौत खड़ी।

—पंजाबी कहावत

३६ दुःख के भेद

१ दुःखं चतुर्विधं-सहजं दोषजमागंतुकमन्तरंगं च।

—**नीतिवाक्यामृत** ६।१६

दुःख चार प्रकार का है—

(१) **सहज**—भूख, प्यास एवं कामविकार से होने वाला।

(२) **दोषज**—वात-पित्त-कफ आदि प्रकृति के विकार से होनेवाला।

(३) **आगंतुक**—वर्षा-सर्दी-गर्मी आदि से होने वाला।

(४) **अन्तरङ्ग**—तिरस्कार एवं अनादर आदि से होनेवाला।

२ **चार दुःख**—

१ अभाव होना, २ वियोग होना, ३ अपमान होना, ४ नुकसान होना।

३ **आठ दुःख**—

१ पहलो दुःख हाथ सांकडो, २ दूजो दुःख वैरी वांकडो। ३ तीजो दुःख पड़ौसी चोर, ४ चौथो दुःख घर में बड़बोर। ५ पांचवों दुःख कन्या कुंवारी, ६ छट्ठो दुःख पुत्र जुआरी। ७ सातवों दुःख परायो जोखो, ८ आठमों दुःख हाथ में होको।

—**राजस्थानी कहावत**

४ **तीन ताप**—

(१) आध्यात्मिक, (२) आधिभौतिक, और (३) आधिदैविक।

(१) **आध्यात्मिक** ताप दो प्रकार का होता है।
शारीरिक—ज्वरादि और **मानसिक**—काम-क्रोध आदि

(२) **आधिभौतिक**—पशु-पक्षी या भूत-पिशाचादि कृत।

(३) **आधिदैविक**—सर्दी-गर्मी आदि कृत।

५ पल्लवग्राहि - पाण्डित्यं, क्रयक्रीतं च मैथुनम् ।
भोजनं च पराधीनं, तिस्रः पुंसां विडम्बनाः ।।

हितोपदेश १।१४०

दो-चार बातें याद करके बनाई हुई पंडिताई, पैसों से खरीदा हुआ मैथुन और पराधीन भोजन ये तीनों पुरुषों के लिए विडम्बना स्वरूप हैं ।

६ **पांच क्लेश**—

अविद्याऽस्मिता - राग - द्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः ।

—पातंजलयोगदर्शन २।३

पांच प्रकार के क्लेश हैं—(१) अविद्या (२) अस्मिता (पुरुष और बुद्धि में अभेद की भ्रांति) (३) राग (४) द्वेष (५) अभिनिवेश (अहंकार) ।

७ **दस संक्लेश**—

दसविहे संकिलेसे पन्नत्ते, तं जहा—(१) उवहिसंकिलेसे (२) उवस्सयसंकिलेसे (३) कसायसंकिलेसे (४) भत्तपाणसंकिलेसे (५) मणसंकिलेसे (६) वइसंकिलेसे (७) कायसंकिलेसे (८) णाणसंकिलेसे (९) दंसणसंकिलेसे (१०) चरित्तसंकिलेसे ।

—स्थानांग १०।७३९

दस प्रकार का संक्लेश (असमाधि) कहा है ! यथा—

१ उपकरण-आश्रित, २ निवासस्थान-आश्रित, ३ क्रोधादिकषाय-आश्रित, ४ अन्न-पानी-आश्रित, ५-६-७ मन-वचन-काय (शरीर) के आश्रित, ८-९-१० ज्ञान-दर्शन-चारित्र के आश्रित (यह गुणस्थानों से गिरते समय होता है ।)

३७ दुःख का महत्त्व

१ दुःख बराबर सुख नहीं, जो थोड़ा दिन होय।
इष्ट मित्र अरु प्रिय स्वजन, जानि परत सब कोय।

२ दुःख वर्षा की धारावत् पंक उत्पन्न करता है किंतु गुलाब का फूल भी खिलता है।

—आस्टिन मैले

३ सुख पतन की ओर ले जाता है और दुःख उन्नति की ओर। सुख में वृत्तियां बहिर्मुखी और दुःख में अन्तर्मुखी होती हैं। सुख में विचार विकारों के पीछे दौड़ते है और दुःख में निर्विकारिता की तरफ। सुख के दिन मस्ती में व्यतीत होते हैं और दुःख के दिन सुस्ती में, सुख में मनुष्य सिर्फ अपनी ही सुनता है किंतु दुःख में दूसरों की भी। सुख में मद का पर्दा लगता है और दुःख में वह दूर हो जाता है।

—व्याख्यान के मसालों से

४ दुःख ने राम-कृष्ण-ईसू-गांधी को अमर बना दिया एवं सुख ने रावण-कंस-दुर्योधन को व्यभिचारी और अन्यायी।

आपत्ति

१ विपदः सन्तु नः शश्वत्, तत्र-तत्र जगद्गुरोः ।
भवतो दर्शनं यत्स्या-दपुनर्भवदर्शनम् ।।

—महाभारत

हे प्रभो ! हमारे जीवन में सदा विपत्तियां आती ही रहें क्योंकि जन्म-मरण के चक्कर को मिटानेवाले आपके दर्शन विपत्तियों में ही होते हैं ।

२ ईश्वर आपत्तियों का भला करे क्योंकि इन्हीं के जरिये हमने शत्रुओं और मित्रों को परखा है ।

३ आपत्तियों से बढकर और कोई बड़ी शिक्षा नहीं

—डिजराइली

४ ऐश्वर्य एक महान् शिक्षक है और आपत्तियां महत्तर ।

—हैजलिट

५ टोड (सांप) विषमय होते हुए भी एक रत्न प्रच्छन्न रखता है, इसी तरह आपत्तियां दुःखमय होते हुए मी मधुमय हैं ।

—शेक्सपियर

६ आपत्ति मनुष्य बनाती है और सम्पत्ति राक्षस ।

—विक्टर ह्यूगो

७ सतत सफलता हमें संसार का केवल एक पक्ष दिखलाती है, आपत्तियां उस चित्र का दूसरा पक्ष भी ।

—कोल्टन

८ सन्मार्गस्खलनाद् भवन्ति विपदः प्रायः प्रभूणामपि ।

सत्य मार्ग छूट जाने पर समर्थ पुरुषों के पास भी प्रायः विपत्तियां आ जाया करती हैं ।

९ तुलसी साथी विपद में, विद्या-विनय-विवेक।
साहस-सुकृत-सत्यव्रत, राम भरोसो एक ॥

१० आपत्ति का सामना करने के लिए मुस्कान से बढ़कर और कोई चीज नहीं है।

—तिरुवल्लुवर

११ पतितोऽपि कराघातै रुत्पतत्येव कन्दुकः।
प्रायेण हि सुवृत्ताना-मस्थायिन्यो विपत्तयः

—चन्दचरित्र पृष्ठ ७५

हाथों के आघात से पटकी हुई गेंद, जैसे-अवश्य उछलती है, उसी प्रकार सदाचारी पुरुषों की विपत्तियां भी अस्थायी होती हैं अर्थात् जाती-आती ही रहती हैं।

३६ दुःख नाश के उपाय

१ सेणं भंते ! दुक्खे कहं भेइज्जति ? अप्पमाएण

—स्थानांग ३।२

भगवन् ! दुःख का भेदन कैसे होता है ? प्रमाद का त्याग करने से।

२ विद्यातपोभ्यां क्लेशहानिः ।

—योगसूत्र

विद्या-ज्ञान और तप से दुःख का नाश होता है।

३ अणुबद्धमपस्संता, पच्चुप्पन्नगवेसका ।
ते पच्छा दुक्खमच्छन्ति, गलुच्छिन्ना झसा जहा ।१६।
पत्थरेण हतो कीवो, खिप्पं डसइ पत्थरं ।
मिगारिव्व सरं पप्प, सरूपत्तिं व मग्गति ।२०।
तहा बालो दुही वत्थुं, बाहिरं निंदति भिसं ।
दुक्खुप्पत्ति-विणासं तु, मिगारिव्व ण पप्पति ।२१।

—ऋषिभाषित १५

दुःख परिणाम (फल) को न देखकर जो अज्ञानी केवल वर्तमान सुख को खोजते हैं, वे बाद में उसी प्रकार दुःख पाते हैं। जैसे—गला विंधी हुई मछली।१६।

पत्थर से आहत कुत्ता पत्थर को ही काटने दौड़ता है किन्तु सिंह बाण लगने पर बाण को छोड़कर बाण के उत्पत्ति स्थान पर अर्थात् बाण चलाने वाले पर झपटता है। ।२०।

उसी प्रकार दुःख आने पर अज्ञानी बाह्य वस्तु की निंदा करता है किन्तु ज्ञानी सिंहवत् दुःखोत्पत्ति के हेतु को नष्ट करने का प्रयास करता है। ।२१।

दुःखी

१ कस्य दोषः कुले नास्ति, व्याधिना को न पीडितः।
व्यसनं केन न प्राप्तं, कस्य सौख्यं निरन्तरम् ॥
—चाणक्यनीति ३।१

किसके कुल में दोष नहीं ! रोग से कौन पीड़ित नहीं ! दुःख किसने नहीं पाया एवं निरन्तर सुख किस को है ?

२ ईर्ष्यी घृणी त्वसंतुष्टः, क्रोधनो नित्यशङ्कितः।
परभाग्योपजीवी च, षडेते नित्यदुःखिताः ॥ —हितोपदेश १।२५

ईर्ष्यालु, घृणा करने वाला, असन्तोषी, क्रोधी, शंकाशील और दूसरों के भाग्य पर जीने वाले—ये छः सदा दुःखी ही रहते हैं।

३ अनालोच्य व्ययं कर्ता, अनाथः कलहप्रियः।
आतुरः सर्वकार्येषु, नरो दुःखैर्नियुज्यते ॥

विचार किए बिना खर्च करने वाला, अनाथ, झगड़ालु और प्रत्येक कार्य में उतावल करने वाला—यों चार प्रकार का मनुष्य दुःखों से संयुक्त होता है।

४ जिसने दुःख नहीं देखा, वह सबसे बड़ा दुखियारा है।

५ वह घर दुखी है, जहां मुर्गे से मुर्गी ज्यादा बुलंद आवाज दे।

६ बीती होय ते जाणै, जेना पेट पर सांप पड्यो होय तेज उछाले।

० बिलाड़ी ने रमत ने उंदर नो जीव जाय। —गुजराती कहावतें

७ मनुष्य दुःखी क्यों ? सद्गुणों को अपनाता नहीं, दुर्गुणों को छोड़ता नहीं, अपने ज्ञान को कसौटी पर कसता नहीं और सच्चा रास्ता बता देने पर भी उस पर चलता नहीं। —कांगफ्यूत्सी

८ तिल भर दुखणे मन भर कुंथणे। —मराठी कहावत

(थोड़े दुःख को अधिक दिखाने वाले के लिए।)

४१ परदुःख से दुःखी

१ पर दुःखेनापि दुःखिता विरला।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

पर दुःख से दुःखी होने वाले पुरुष बिरले हैं।

२ त्रयः परार्थे क्लिश्यन्ति, साक्षिणः प्रतिभूः कुलम्।
चत्वारस्तूपचीयन्ते, विप्र आढ्यो वणिग् नृपः॥

—मनुस्मृति ८।१६६

साक्षी, प्रतिभू (जामिन) और कुल (स्वजन)—ये तीन दूसरों के लिए दुःख उठाते हैं। ब्राह्मण, धनी, वणिक और राजा—ये चार दूसरों के धन से वृद्धि पाते हैं।

३ दुःखिता दुःखितानां हि, पीडां जानन्ति मानसीम्।

—त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र

दुःखियों के मन की पीड़ा को दुःखी मनुष्य ही जानते हैं।

४ मिसफोच्यून्स सैल्डम कम सिंगली। - अंग्रेजी कहावत

जिसकी न फटी कभी बिवाई, सो कहा जाने पीर पराई।

५ राजा वेश्या यमश्चाग्नि - स्तस्करो बाल - याचकौ।
परदुःखं न जानन्ति, ह्यष्टमो ग्रामकण्टकः॥

—चाणक्यनीति १७।१९

१ राजा २ वैश्या ३ यम ४ अग्नि, ५ चोर ६ बालक ७ याचक ८ ग्राम-कण्टक—ये आठ दूसरों का दुःख नहीं जानते।

● ●

४२ कठिनाई

१ सत्य की ओर ले जानेवाला प्रथम प्रशस्त मार्ग कठिनाइयां हैं।

—**वायरन**

२ कठिनाइयां हमें आत्म-ज्ञान कराती हैं। वे हमें दिखा देती हैं कि हम किस मिट्टी के बने हैं। —**नेहरुजी**

३ मेहनत से शरीर बलवान होता है और कठिनाई से मन।

—**सेनेका**

४ कठिनाईयों में ही सिद्धान्तों की परीक्षा होती है। विपत्ति पड़े बिना मनुष्य नहीं जान सकता कि वह ईमानदार है या नहीं।

—**फीर्लिडग**

५ न तो रगड़ के बिना रत्न पर पालिश आती है और न ही कठिनाई के बिना आत्मा में पूर्णता।

—**चीनी कहावत**

६ सबसे कठिन तीन वस्तुएं हैं—एक तो रहस्य को गुप्त रखना, कष्ट को भूल जाना और समय का सदुपयोग करना!

—**चिलो**

●●

४३ दुविधा

१ दुविधा में दोनों गए, माया मिली न राम।

—हिन्दी कहावत

० इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः।

—संस्कृत कहावत

यहाँ-वहाँ दोनों जगह से भ्रष्ट हो गया।

० हिमवति दिव्यौषधयः, शीर्षे सर्पः समाविष्टः।

—मुद्राराक्षस नाटक

दिव्य औषधियां हिमवान में हैं और शिर पर सांप बैठा है, अब क्या किया जाए?

२ आई एम बिटविन डेविल एण्ड डीप सी।

—अंग्रेजी कहावत

इधर राक्षस है और इधर गहरा समुद्र, अब क्या किया जाय?

३ कहें तो मां मारी जाय, नहीं तो बाप कुत्ता खाय।

० मां खाने न दे और बाप भीख न मांगने दे।

० दुकान पर तो बैठने न दे और कहे अच्छा तोलना।

० सूई भर छान, मूसल भर अंधेरा।

—हिन्दी कहावतें

४ आगल बाघ नें पाछल नदी।

० सापे छछुंदरी पकड़ी, मूके तो आंधलो थाय ने गलै तो मरी जाय।

० सूड़ी बच्चे सोपारी, गले गांठ ने मोढ़े डूचो, वे धारु खड्ग।

- काशी नुं करवत जातां य बहेरे अने आवतां य बहेरे।
- गाम मां घर नहीं ने सीममां खेतर नहीं।
- कुंभार करतां गधेड़ा डाह्या, सेठ करतां बाणोतर बध्या ने रोटली करतां अथाणुं बध्युं।

—गुजराती कहावतें

५ सिंह पकड़ियो स्यालिये, जो छोड़े तो खाय।

- सात वार नौ तिवार।
- नव लेठा र तेरै लगवाड़।
- काग मोती दै नहीं, चीड़ी रोती रहै नहीं।
- मोडा घणां र मंढी सांकडी।
- वैंकुठ छोटो र भगतां री भीड़।
- नौ की लकड़ी र नब्बै रो खर्च
- अठै तो अयां र बठै बयां,
  ऊंट बंधग्यो रावलै, अब खुलै कयां ?
- एक बंबी में दो सांप, एक गुफा में दो सिंह और एक म्यान में दो तलवार को खटावैनीं।

—राजस्थानी कहावतें

- गाडी देख र लाडीरा पग भारी हो जावै।
  सुथार नै देख र बैंवतेरी लाठी लम्बी हो जावै ।।

—राजस्थानी कहावतें

४४ कमी

१ बाजार में यदि किसी चीज की कीमत सवा रुपया है और आपके पास यदि एक ही रुपया हो तो वह चीज आपको नहीं मिल सकती कारण चार आने की कमी है।

—व्याख्यान के मसालों से

२ मोरियो पांख्या देख र राजी हुवे पण पग देख र झूरै।

० सोनै री थाली में लोहै री मेख।

—राजस्थानी कहावतें

३ विश्व में ऐसा कोई मनुष्य नहीं, जिसमें कोई न कोई कमी न हो। किसी में धन की कमी है तो किसी में मन की कमी। किसी में ज्ञान की कमी है तो किसी में चरित्र की कमी।

—धनमुनि

४ मनुष्य दूसरे की कमी देखता है, अपनी नहीं देखता। अगर अपनी कमी देखने लगे तो फिर दूसरों की कमीं दिखती ही नहीं।

—धनमुनि

४५ तितिक्षा-सहनशीलता

१ सहनं सर्वदुःखानां, तितिक्षा सा शुभा मता ।

—अपरोक्षानुभूति

निष्काम भाव से सर्व दुःखों को सहन कर लेना तितिक्षा कहलाती है ।

२ विपत्ति बड़े ही सहत है, इतर विपत्ति से दूर ।
तारे न्यारे रहत हैं, गहे राहु शशि-सूर ।।

—वृन्दकवि

३ जीवन में सुख-दुःख निरन्तर, आते-जाते रहते हैं,
सुख तो सभी भोग लेते हैं, दुःख धीर ही सहते हैं ।
मनुज दुग्ध से, दनुज रुधिर से, अमर सुधा से जीते हैं,
किन्तु हलाहल भवसागर का, शिव-शंकर ही पीते हैं ।।

—साकेत

४ **सहन करने की आदत**—एक के बाद एक नई से नई विपत्ति एवं उपाधि आती रहती है और सह ली जाती है । "सभी उपाधियां एक साथ आ जायें तो ठीक" ऐसे कई लोग कह दिया करते हैं । लेकिन एक साथ अधिक खाने से बदहजमी हो जाती हैं लगातार अधिक पढ़ने से सिर दर्द होने लगता है एवं इकट्ठे करके भरने से बेग में वस्त्र थोड़े ही समा सकते हैं । थोड़ा-थोड़ा करके चलने वाला व्यक्ति भी दसों मील का रास्ता तय कर लेता है ।

"अब अधिक गर्मी-सर्दी पड़ेगी तो हैजा-नमूनिया चल पड़ेंगे"—लोग ऐसा सोचने लगते हैं । लेकिन कई बार कुछ भी नहीं होता । मजदूर के सिर पर ट्रंक रखते समय वह नीचा हो जाता है किन्तु उस पर बींटा रखते ही चलने लगता है । कारण सहन करने की आदत बन जाती है ।

—**व्याख्यान के मसालों से**

४६ संयोग के साथ वियोग

१ संयोगाः स्वप्नसन्निभाः। —तत्त्वामृत

संयोग स्वप्न के समान शून्य रूप हैं।

२ गगननगरकल्पं संगमं वल्लभानाम्।

प्रिय पदार्थों का संगम आकाश में बादलों द्वारा बनाए हुए नगर के समान क्षणिक है।

३ संगमा विगमदोषदूषिताः। —धर्मबिन्दु

संयोग वियोग के दोष से दूषित हैं।

४ संयोगो हि वियोगस्य, संसूचयति संभवम्। —हितोपदेश ४।७३

संयोग वियोग का होना सूचित करता है।

५ आपातरमणीयानां, संयोगानां प्रियैः सह।
अपथ्यानामिवान्नानां, परिणामोऽतिदारुणः। —हितोपदेश ४।७४

क्षण भर अच्छे लगने वाले स्त्री-पुत्रादि प्रियजनों के संयोग का परिणाम अपथ्य भोजनों के परिणामवत् अत्यन्त दारुण होता है।

६ यावन्तः कुरुते जन्तुः, संबन्धान् मनसः प्रियान्।
तावन्तोऽपि निखन्यन्ते, हृदये शोकशङ्कवः॥ —हितोपदेश ४।७१

प्राणी जितने प्रिय सम्बन्ध जोड़ता है, वे सब शोक के शंकु-कीले बनकर हृदय में गड़ते जाते हैं।

७ **पांचों का संयोग अवश्य**—

पञ्च त्वनुगमिष्यन्ति, यत्र-तत्र गमिष्यसि।
मित्राण्यमित्रा मध्यस्था, उपजीव्योपजीविनः। —विदुरनीति १।८१

तुम जहाँ भी जाओगे, वहीं मित्र, शत्रु, उदासीन, तुम्हें आश्रय देने वाले और तुम्हारा आश्रय लेनेवाले—ये पांच तो तुम्हारे पीछे लगे ही रहेंगे।

सहयोग

१ सहयोग-भावना प्राणी मात्र के लिए आवश्यक है और प्रायः होती ही है। हाथी, मृग एवं बन्दरों के यूथ इसी के प्रतीक हैं।

० सहयोग की शुरूआत घर से ही होनी चाहिए। आज ऐसे व्यक्ति अधिक हैं, जो घर की परवाह न करके बाहर दौड़ रहे हैं।

० सौराष्ट्र के **सांवल** सेठ ने पुत्र वधू की अग्रहिणी में गरीब बहन भाइयों के घर लड्डुओं में छिपाकर असर्फियाँ दी थीं।

० मनुष्य खाने में कृषकों का, सड़क पर चलने में मजदूरों का एवं सुरक्षित रहने में फौजी-जवानों का अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग ले रहा है। लेकिन देते समय स्वार्थ सिद्धि या यशलोलुपता रखता है—यह उसकी बड़ी-भारी भूल है।

—व्याख्यान के मसालों से

२ फ्रैंकलिन ने समाचार-पत्र निकाला! धनिक-मित्र ने गरीबी के कारण उन्हें २० डालर की सहायता दी। वापस देते समय मित्र ने कहा—तुम भी इनसे दूसरों की सहायता करना किन्तु देने आये तो लेना मत! कहा जाता है कि आज भी वे २० डालर सहायता के कार्य में संलग्न हैं। लेने वाला देने आता है किन्तु दाता लेता नहीं।

—अणुव्रत १५ सितम्बर, १९६५

सहारा-सहानुभूति

१ अनर्घ्यमपि माणिक्यं, हेमाश्रयमपेक्षते ।
अनाश्रया न शोभन्ते, पण्डिता वनिता लता ।।

—चाणक्यनीति १६।१०

बहुमूल्य मानिक भी सोने का आश्रय (सहारा) चाहता है । पंडित, स्त्रियाँ और लतायें, आश्रय के बिना शोभित नहीं होती ।

२ उत्तिष्ठेत्यपि सद्वाक्यं, पततो वै यथा बलम् ।
तथैव ब्रुडतोऽपि स्यात्, तृणालम्बः परं बलम् ।।

—चंदचरित्र, पृष्ठ ८२

गिरते हुए को 'खड़ा हो जा' यह वाक्य भी जैसे सहारा है, उसी प्रकार डूबते को तिनके का आलंबन भी बलप्रद है ।

३ टांग की तरह लंगड़े को लाठी । —हिन्दी कहावत

४ पांचांरी लकड़ी एक रो भारो ।
पांचांरी लात एक रो गारो । —राजस्थानी कहावत

५ सहानुभूति—

(क) एक गाड़ी में जुते हुए दो घोड़ों की तरह सहानुभूति में दो हृदय जुड़े रहते हैं । —सी० एन० पार्क हिटर्स

(ख) जब आदमी के बुरे दिन हों, उपदेश देने की अपेक्षा उसे कुछ सहायता कर देना अधिक अच्छा है । —बुलवर

(ग) डूबनेवाले के साथ डूब जाने का अर्थ सहानुभूति नहीं, बल्कि तैर कर उसे बचाने का प्रयत्न करो । —विनोबा

चौथा कोष्ठक

१ गृहस्थ

१ नित्य-नैमित्तिकानुष्ठानस्थो गृहस्थः ।

—नीतिवाक्यामृत ५।१६

जो व्यक्ति शास्त्रविहित नित्य एवं नैमित्तिक अनुष्ठान (सत्कर्तव्य) का पालन करता है, उसे गृहस्थ कहा है ?

नित्य-अनुष्ठान छः माने गये हैं—

१ **इज्याः**—तीर्थंकर और महर्षियों की पूजा (भक्ति) ।

२ **वार्ताः**—न्याय वृत्ति से (असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प) जीविकोपयोगी कार्यों को करना ।

३ **दत्तिः**—दयादत्ति, पात्रदत्ति, समदत्ति और अन्वयदत्ति ।

४ **स्वाध्यायः**—निर्दोष शास्त्रों का अध्ययन-मनन आदि ।

५ **संयमः**—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और तृष्णा का त्याग—इन व्रतों का यथासंभव पालन करना ।

६ **तपः**—अनशन आदि बारह प्रकार का तप करते रहना ।

नैमित्तिक अनुष्ठान—

वीर जयन्ती आदि निमित्त को लेकर धार्मिक प्रभावना आदि सत्कर्म करना नैमित्तिक अनुष्ठान कहलाते हैं ।

२ **गृहस्थ के यहां होने वाली पांच हिंसाएं—**

पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः ।
कण्डिनी चोदकुम्भश्च, वध्यते यास्तु वाहयन् ।।

—मनुस्मृति ३।६८

गृहस्थ के घर में पाँच हिंसा के स्थान (कसाई खाने) होते हैं—चूल्हा, चक्की, ऊंखली, बुहारी और पानी का घड़ा। इन पांचों के प्रयोग से जीव हिंसा होती है।

३ **पांचयज्ञ**—

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः, पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो, नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्॥

—**मनुस्मृति** ३।७०

पूर्वोक्त पाँच प्रकार की हिंसा के पाप की शुद्धि के लिये पाँच प्रकार के यज्ञ कहे हैं—

१ **ब्रह्मयज्ञ**—वेद का पठन-पाठन करना।
२ **पितृयज्ञ**—अन्न-जल से पितरों को तृप्त करना।
३ **देवयज्ञ**—अग्नि में होम करना।
४ **भूतयज्ञ**—बलि देना।
५ **नृयज्ञ**—अतिथि की सेवा करना।

४ गृहस्थ हो तो **जनक** जैसा अनासक्त एवं सन्यासी हो तो **शुकदेव** जैसा निःस्पृह होना चाहिये।

५ **गृहस्थ बनने की योग्यता**—

आचार्य **बहुश्रुति** से शिष्यों ने गृहस्थ बनने की अनुमति माँगी। आचार्य ने कहा—कुछ ठहरो! फिर आश्रम द्वार पर कांटे बिछा कर आदेश दिया—जाओ बाहर से लकड़ी लाओ। सुनते ही तीनों शिष्य दौड़े एवं काँटे चुभ गये। पहला खड़ा रह गया, दूसरा कांटे निकाल कर लकड़ियों के पास पहुंचा एवं तीसरा झाड़ लेकर उसे बुहारने लगा! आचार्य ने तीसरे को गृहस्थ बनने की अनुमति दी।

६ **क्या बनूं ?**

एक विद्यार्थी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर संत कबीर से पूछने लगा कि मैं गृहस्थ बनूँ या सन्यासी ? कबीर सूत सुलझा रहे थे। उत्तर न देकर उन्होंने अपनी स्त्री से कहा—दीपक लाओ, सूत सुलझाना है। स्त्री

तत्काल दीपक ले आई। विद्यार्थी कुछ नहीं समझा। फिर उसे लेकर वे एक धर्मशाला में गये एवं आवाज दी—बाबाजी महाराज! दर्शन दीजिये। तीसरी मंजिल से उतर कर ८० वर्ष का बूढ़ा बाबा नीचे आकर पूछने लगा—क्या काम है? कबीर ने कहा—काम कुछ भी नहीं है, केवल दर्शन करने थे। बाबा लौटकर ऊपर चला गया। तत्काल फिर चिल्लाकर कहा—महाराज! नीचे आइए, प्रश्न पूछना है।

बूढ़ा आया और बोला—कहो भाई! क्या पूछना है? कबीर ने कहा—कुछ पूछना तो था लेकिन अभी तो भूल गए। बाबा ऊपर जाकर ज्यों ही बैठा, कि कबीर ने फिर नीचे बुलाया। बेचारा बूढ़ा बड़ी मुश्किली से तीसरी बार नीचे उतरा तो कबीर बोले—चले जाइए, अब तो काम याद आ गया फिर कभी पूछेंगे। बाबा चुपचाप ऊपर चला गया लेकिन तीन बार चक्कर कटवाने पर भी उसकी शान्ति में बिल्कुल अन्तर नहीं आया।

कबीर विद्यार्थी-सहित घर आए। विद्यार्थी इनकी करतूतों से हैरान होकर कहने लगा—महाराज! मेरे प्रश्न का उत्तर देने की कृपा करें। कबीर ने कहा—इतनी देर तेरे ही प्रश्न का उत्तर दे रहा था! क्या तू नहीं समझा? देख! यदि ऐसी विनीत स्त्री (जो दिन में दीपक मंगवाने पर भी आनाकानी न करे) मिले तो गृहस्थ बनना अच्छा है और उस बूढ़े बाबे जैसी क्षमा रख सके तो सन्यासी बनना अच्छा है।

७ निन्दनीय गृहस्थ—

(क) स किं गृहस्थो यस्य नास्ति सत्कलत्रसंपत्तिः।

—**नीतिवाक्यामृत** १८।७

वह क्या गृहस्थ, जिसके घर में अच्छी स्त्री नहीं।

(ख) स किं गृहाश्रमी यत्रागत्यातिथयो न भवन्ति कृतार्थाः।

—**नीतिवाक्यामृत** ३२।१३

वह गृहस्थ किस काम का, जिसके यहाँ आकर अतिथि लोग कृतार्थ नहीं होते।

१ सहृदयं सांमनस्य - मविद्वेषं कृणोमि वः ।।
अन्यो अन्यमभिहर्यत, वत्सं जातमिवाघ्न्या ।१।
अनुव्रतः पितुः पुत्रोः, मात्रा भवतु संमनाः ।
जायापत्ये मधुमती, वाचं वदतु शान्तिवाम् ।२।
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्, मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यञ्च सव्रता भूत्वा, वाचं वदत भद्रया ।३।

—अथर्ववेद ३।३०

हे गृहस्थो ! तुम्हारे पारिवारिक जीवन में परस्पर ऐक्य, सौहार्द और सद्भावना रहे, द्वेष की गंध भी न हो। तुम एक-दूसरे से उसी तरह प्रेम करो, जैसे—गौ अपने नवजात बछड़े से किया करती है। (१)

पुत्र अपने माता-पिता का आज्ञाकारी और उनके साथ एक मन होकर रहे। पत्नी अपने पति के साथ मधुर एवं स्नेहयुक्त वाणी का व्यवहार करे। (२)

भाई-भाई के साथ एवं बहन-बहन के साथ द्वेष न करें। तुम्हें चाहिए कि एक मन होकर समान आदर्शों का अनुसरण करते हुए परस्पर स्नेह एवं प्रेमवाली वाणी बोलो ! (३)

२ संगच्छध्वं संवदध्वं, सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथापूर्वे, संजानाना उपासते ।२।
समानो मन्त्रः समिति समानी,
समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।३।

—ऋग्वेद १०।१९१

जैसे सूर्य-चन्द्र-वायु-अग्नि आदि देव अविरोध भाव से अपने-अपने कार्य

करते हैं, वैसे तुम भी परस्पर मिलकर चलो, मिलकर बोलो, एकमत होकर—परस्पर सद्भाव बरतो !

तुम्हारी मन्त्रणा में, समितियों में, विचारों में और चिन्तन में समानता हो, सद्भावना हो, विषमता—और दुर्भावना न हो !

३ गृहस्थस्तु यदा पश्येद्, बलिपलितमात्मनः ।
अपत्यस्यैव चापत्यं, तदारण्यं समाश्रयेत् ॥

—**मनुस्मृति** ६।२

अपनी त्वचा को शिथिल, बालों को सफेद एवं पुत्र के पुत्र हुआ देखकर गृहस्थ को अरण्यवास स्वीकार कर लेना चाहिये !

४ **माता यस्य गृहे नास्ति, भार्या चाप्रियवादिनी ।**
अरण्यं तेन गन्तव्यं, यथारण्यं तथा गृहम् ॥

—**पंचतंत्र** ४।५०

जिसके घर में माता नही है और मीठी बोलने वाली स्त्री नहीं है। उसको वन में चला जाना चाहिये क्योंकि उसके लिये जैसा वन है, वैसा ही घर है ।

३ प्रशंसनीय गृहस्थाश्रम

१ सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी,
इच्छापूर्तिधनं स्वयोषिति रतिः स्वाज्ञापराः सेवकाः ।
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्ठान्न-पानं गृहे,
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ।

—**सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ ९३**

जहां आनन्दकारी गृह है, बुद्धिमान पुत्र है, मीठी बोलने वाली स्त्री है, यथेष्ट धन है, स्वस्त्री (स्वपति) में सन्तोष है, आज्ञाकारी सेवक है, अथिति सत्कार किया जाता है, भगवान् की पूजा है, घर में मीठे-अन्न-जल हैं और निरन्तर साधुओं की सेवा की जाती है—ऐसा गृहस्थाश्रम धन्य-प्रशंसनीय है।

२ **यस्य पुत्रो वशीभूतो, भार्या छन्दोनुगामिनी ।**
विभवे यश्च सन्तुष्टस्तस्य स्वर्ग इहैव हि ।।

जिस गृहस्थ के पुत्र अपने वश में है, स्त्री मन के अनुसार चलने वाली है और जो प्राप्त धन में सन्तुष्ट है, उस गृहस्थ के लिये यहीं स्वर्ग है।

३ **यथा वायुं समासृत्य, वर्तन्ते सर्वजन्तवः ।**
तथा गृहस्थमाश्रित्य, वर्तन्ते सर्व आश्रमाः ।। —**मनुस्मृति ३।७**

जैसे वायु के आश्रय सब प्राणी जीवित रहते हैं, उसी प्रकार गृहस्थाश्रम के आश्रय से सभी आश्रमों का निर्वाह होता है।

४ **अकाल मृत्यु नहीं**—मगध का राजकुमार शिवि कार्यवश तक्षशिला विश्व विद्यालय में गया। वहा कुलपति का युवक पुत्र मर गया। राजकुमार ने कहा—हमारे यहाँ तो ऐसी मौतें नहीं होतीं। परीक्षार्थ गुप्तचर भेजे। इन्होंने शिवि के पिता से कहा कि आपका पुत्र अचानक मर गया। सुनते ही महाराज ने फरमाया, तुम झूठे हो—मेरा पुत्र ऐसे कभी नहीं मर सकता क्योंकि मैंने गृहस्थ धर्म के नियमों का पूर्णतया पालन किया है।

३ निन्दनीय गृहस्थाश्रम

१ क्रोशन्तः शिशवः सवारि सदनं पङ्कावृतं चाङ्गणं,
शय्या दंशवती च रूक्षमशनं धूमेन पूर्णं गृहम्।
भार्या निष्ठुरभाषिणी प्रभुरपि क्रोधेन पूर्णः सदा,
स्नानं शीतलवारिणा हि सततं धिग्-धिग् गृहस्थाश्रमम्।

—**सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ ९३**

जहां बच्चे चिल्ला रहे हैं, घर में वृष्टि का पानी चू रहा है, आंगण में कीचड़ हो रहा है, शय्या खटमलों से भरी हुई है, भोजन रूखा है, घर धुएँ से परिपूर्ण है, स्त्री कटुभाषिणी है, स्वामी सदा क्रोध में लाल रहता है और स्नान करने के लिए सदा ठंडा पानी ही मिलता है—ऐसे गृहस्थाश्रम को बार-बार धिक्कार है।

२ तावद्विद्यानवद्या गुणगणमहिमा, रूप-संपत्तिशौर्यं,
स्वस्थाने सर्वशोभा, परगुणकथने वाक्पटुस्तावदेव।
यावत् पाकाकुलाभिः स्वगृह-युवतिभिः प्रेषितापत्यवक्त्राद्,
हे बाबा! नास्ति तैलं न च लवणमपीत्यादिवाचां प्रचारः।

—**सुभाषितरत्नभाण्डागार पृष्ठ ९३**

गृहस्थाश्रम में पवित्र विद्या गुणों का महत्त्व, रूप-सम्पत्ति का बल, सभी प्रकार की स्थानीय शोभा और दूसरों के गुण-गान में वाक्पटुता, ये सब वहीं तक हैं, जहाँ तक रसोई बनाते समय बाह्य-सामग्री के अभाव से व्याकुल होकर अपनी स्त्रियों द्वारा भेजे गये बच्चों के मुँह से "बाबा! तैल-नमक-घी-मिर्च आदि नहीं हैं, जल्दी लाओ, अन्यथा खाना नहीं बनेगा"—इस प्रकार के वचन सुनने में नहीं आते।

३ तीर्णं जीर्णं कुटीरं वृषलनकुलकैराकुलं धान्यहीनं ।
काणी काली कुरुपा कटुरटनपरा गेहिनी स्नेहहीना ।
खण्डी हण्डी च दण्डी श्रुतिविकलकरी द्वारकी गूयमाना ।
तिष्ठत्येषा विभूतिः प्रभवति भविनां हा ! महामोह हेतोः ।

झोंपड़ी तृणमयी है, पुरानी है, वह भी चूहों और नेवलों से व्याप्त है । खाने के लिए उसमें धान्य नहीं है । स्त्री कानी है, कुरूपा है, कटु-भाषिणी है और स्नेहहीन है । धांन्य रांधने की हांडी खांडी (खंडित) है । लाठी टूटी हुई है, द्वार की खिड़की जीर्ण-शीर्ण है, जो बंद करते समय चरड़-चूं-चरड़-चूं की आवाज करती हुई कानों को हैरान करती है । खेद है ! ऐसी तुच्छ सम्पत्ति भी गृहस्थ लोगों के महामोह का कारण बन जाती है ।

५ अतिथि सत्कार

१ **अतिथि-सत्कार के लिए चार बातें आवश्यक हैं—**

१ खड़े होकर स्वागत करना।

२ बैठने को आसन देना।

३ सुख प्रश्न करके भोजन आदि की मनुहार करना।

४ जाते समय आदरपूर्वक विदा करना।

२ तृणानि भूमिरुदकं, वाक् चतुर्थी च सूनृता।
एतान्यपि सतां गेहे, नोच्छिद्यन्ते कदाचन॥

—**मनुस्मृति** ३।१०१

अतिथि के लिए तृणासन, ठहरने की जगह, पैर धोने के लिए पानी तथा मधुर और सत्य वाणी—इन चारों वस्तुओं का अभाव तो सद्-गृहस्थों के यहां कभी नहीं होता।

३ **आगमन के समय—**

एह्यागच्छ समाश्रयासनमिदं कस्माच्चिराद् दृश्यसे?
का वार्ता ह्यति दुर्बलोऽसि कुशलं प्रीतोऽस्मि ते दर्शनात्।
एवं नीचजनेऽपि युज्यति गृहं प्राप्ते सतां सर्वदा।
धर्मोऽयं गृहमेधिनां निगदितः स्मार्तैर्लघुस्वर्गदः॥

—**पञ्चतंत्र** १।२७६

चलो, आओ! मेरे इस आसन पर बैठो! बहुत दिनों से कैसे दर्शन दिये? क्या हाल-चाल है? बाल बच्चों सहित राजी तो हो न? घर आये हुए साधारण व्यक्ति का भी इस प्रकार मीठी वाणी से स्वागत करना चाहिए, मनु आदि स्मृतिकारों ने यह गृहस्थ धर्म कहा है एव इसे स्वर्ग का देनेवाला बतलाया है।

४ भोजन के समय—

अदत्त्वा तु य एतेभ्यः पूर्वं भुङ्क्तेऽविचक्षणः ।
स भुञ्जानो न जानाति श्व-गृध्रैर्जग्धिमात्मनः ॥

—**मनुस्मृति** ३।११५

जो अज्ञानी अतिथियों को न खिलाकर पहले स्वयं खाता है। वह यह नहीं जानता कि मरने के बाद उसके शरीर को कुत्ते और गीध नौंच-नौंच कर खायेंगे।

५ विदाई के समय—

(क) गन्तव्यं यदि नाम निश्चितमहो ! गन्तासि केयं त्वरा,
द्वित्राण्येव पदानि तिष्ठतु भवान् पश्यामि यावन्मुखम् ।
संसारे घटिकाप्रवाहविगलद्धारासमे जीविते ।
को जानाति पुनस्त्वया सह मम स्याद् वा न वा संगमः ।

यदि आपको निश्चित रूप से ही जाना है तो चले जाना ! इतनी क्या उतावल है थोड़ी देर ठहर जाइए। आपके मुखारविन्द के दर्शन तो कर लूँ। अरहट की घटमाला से प्रवाहित होती हुई जलधारावत् चंचल जीवनवाले इस संसार में कौन जाने आपका पुनः समागम होगा या नहीं ?

(ख) मागा इत्यपमङ्गलं व्रज इति स्नेहेन हीनं वच—
स्तिष्ठेति प्रभुता यथारुचि कुरुष्वेत्यप्युदासीनता ।
किं ते सांप्रतमाचराम उचितं तस्योपचारं वचः,
प्रस्थानोन्मनसीत्यभिष्टमनुजे वक्तुं न शक्ता वयम् ।

—**चन्दचरित्र पृष्ठ** ८०

प्रस्थान करते हुए प्रेमी को हम कुछ भी नहीं कह सकते क्योंकि 'मत जा' अमंगलसूचक शब्द है "जा" स्नेहहीन वचन है। "ठहर जा" कहना उस पर हुक्म चलाना है और "यथा रुचि करो" यह उसके प्रति उदासीनता है। अब हम क्या कह कर उसका उचित सत्कार करें।

६ अतिथि के लक्षण

१ तपः - शीलसमायुक्तो, ब्रह्मचारी दृढव्रती ।
निर्लोभस्त्यक्तसंसारो, ह्यतिथिरीदृशो भवेत् ॥१॥
स्नानोपभोगरहितः, पूजालंकारवर्जितः ।
मधु - मांस निवृत्तश्च, गुणवानतिथिर्भवेत् ॥२॥
हिरण्ये वा सुवर्णे वा, धने धान्ये तथैव च ।
अतिथिं च विजानीहि, यस्य लोभो न विद्यते ॥३॥
तिथि-पर्वोत्सवाः सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना ।
अतिथिं तं विजानीया - च्छेषमभ्यागतं विदुः ॥४॥

—प्राचीन संग्रह से

जो तप एवं शील युक्त है, ब्रह्मचारी है, दृढ़व्रत वाला है, निर्लोभ हैं, संसार का त्यागी है—ऐसा व्यक्ति **अतिथि** होता है ।१।

जो स्नान-उपभोग से रहित है, पूजा-अलंकार से मुक्त है और मधु-मांस का त्यागी है, वह गुणवान-अतिथि होता है ।२।

चाँदी-सोना, धन एवं धान्य के प्रति जिसके मन में लोभ न हो, उसे अतिथि समझो !३।

जिस महात्मा ने तिथि, पर्व, उत्सवों का त्याग कर दिया, उसे अतिथि समझो ! शेष तो अभ्यागत (मेहमान) माना गया है ।४।

७

मेहमान-पाहुना

१ मेह और पावणा किण रै घर ?

० मेह और पावणा किता दिनांरा ?

० एक दिन पावणो, दूजै दिन अलखावणो।

—राजस्थानी कहावतें

२ मेहमान अजीजस्त मगर तासिह रोज। —पारसी कहावत

तीन दिन का मेहमान चौथे दिन हैवान !

३ घणां घरां रो पावणो भूखो मरै। —राजस्थानी कहावत

४ **कच्चापाहुना**—बुढ़िया के घर पाहुना आया एवं खाट पर बैठ गया बुढ़िया घर में जाकर इस प्रकार कहने लगी—

पावणो दीसै साढू, कहो तो कर दूं मोतीचूर का लाडू।
पावणो दीसै धीरो, कहो तो कर दूं खांड रो सीरो।।
पावणो दीसै हफसी, कहो तो कर दूं गुड़ री लपसी।
पावणो बैठो खाट, कहो तो कर दूं मक्की री घाट।

अब पाहुना रुक न सका और बोला—

अठा सुधी क्षमा करी, राखी थांरी काण।
इण सूं हेठा ऊतर्‌या, तो परमेसर री आण।।

पाहुना उक्त दोहा कह ही रहा था कि बुढ़िया ने चल-चल कहकर उसे घर से निकाल दिया।

५ **पक्का पाहुना**—

गृहपति—भाई, जमीने आव्या छे माटे पाणी नो लोटो लावजो !

मेहमान—मांहे दांतण नांखता आवजो !

—**गुजराती रूपक**

६ एक बनिया व्यापार के लिए गांवों में जाया करता था। एक गाँव का व्यापारी उसकी बहुत सेवा-भक्ति किया करता। लेकिन वह जब-कभी शहर में आता, अपना काम करके मित्र के यहां बिना खाए-पीए ही वापस गांव चला जाता। एक दिन मित्र मिल गया और आग्रह करके उसे भोजनार्थ अपने घर ला बिठाया। इधर स्त्री उसको खिलाने से इन्कार हो गई। पति को घी लाने के बहाने दुकान भेज कर खुद पिछले द्वार से पीहर चली गई। मित्र कुछ देर तो राह देखता रहा, लेकिन घर में सुन-सान देखकर भाई-भाभी की चालाकी समझ गया एवं कोठे में छिपकर बैठ गया। थोड़ी देर बाद भाभी पीहर से आई और दुकान से भाई को भी बुला लिया। फिर दाल-बाटी और चूरमा बनाया। ज्योंही सब मिलकर खाने बैठे, भाई कोठे में से आ धमका। भाई और भाभी को एक-एक थप्पड़ मारकर भगा दिया। फिर सारा भोजन खाकर खाना होते समय कहने लगा—

भौजाई पीहर गई, भाई दुकाने बैठो।
बंदेराव इसी करी, कोठा मांहीं पैठो॥

१ अपने घर जैसा प्रिय न डाकबंगला है, न होटल है एवं न राजमहल। छुट्टी होते ही छात्र, मजदूर, डाक्टर, वकील आदि सब अपने घर आने की सोचते हैं। पांचों पकवान मिलने पर भी दामाद अपने घर को नहीं भूलता। घर चलने का नाम सुनते ही रोता बच्चा शांत हो जाता है क्योंकि अपने घर में स्वतन्त्रता एवं स्व-अधिकार होता है।

२ घर धरती नो छेड़ो, घर गया नो कोठो (आखिरी यात्रा—)

० घर देखी पग जोर मां उपड़े, ऊँट मरे त्यारे मारवाड साहमु जुए।

—गुजराती कहावतें

३ सूना घर चोरों का राज ! —हिन्दी कहावत

४ मोटा घर ते भूतनां दर —गुजराती कहावत

५ घर में कमावणो र लोक में सरावणो।

० घर हाणी र लोक हांसी।

० घर कहै मनैं खोल जोय।
ब्याव कहै मनै मांड जोय॥

—राजस्थानी कहावतें

६ यत्र नास्ति दधिमन्थनघोषो, यत्र नो लघुलघूनि शिशूनि।[1]
यत्र नास्ति गुरुगौरवपूजा, तानि किं बत ! गृहाणि वनानि ?

—सुभाषितरत्न भाण्डागार पृष्ठ ९३

जहां दही मथने का शब्द नहीं, जहां छोटे-छोटे बच्चे नहीं और जहां गुरुजनों के गौरव की पूजा नहीं, वे घर वास्तव में घर नहीं, वन के समान हैं।

१ यहां शिशु शब्द नपुंसक लिंग में प्रयुक्त है।

७ घर की फूट—

० घर फाट्यां नैं कारी नहीं।

० घर फूट्यां घर जाय।

—राजस्थानी कहावतें

८ घर का बिगाड़

० घर वगड़े जुए, अने शरीर वगड़े सुए।

—गुजराती कहावत

० भींत न खावै आला, घर नै खावै साला।

—राजस्थानी कहावत

६ स्थान

१ यत्र सुखेन वर्तते, तदेव स्थानम् ।

—कौटलीय-अर्थशास्त्र

जहां सुख से रहा जाय, वही स्थान है ।

२ स्थाने एव नराः पूज्यन्ते ।

—कौटलीय-अर्थशास्त्र

स्थान पर ही मनुष्य पूजे जाते हैं ।

३ सांभर पड़्यो लूण ।
० ठिकाणै रा ठाकर ।

—राजस्थानी कहावतें

४ जो पत्थर न लग जाय दीवार में,
वही ठोकरें खाय बाजार में ।

—उर्दू शेर

५ हंसा ! सरवर ना तजो, जो जल खारो होय ।
डाबर - डाबर डोलतां, भलो न कहसी कोय ।।

—राजस्थानी दोहा

६ स्थान एव नियोज्यन्ते, भृत्या आभरणानि च ।
नहि चूडामणिः पादे, नुपूरं मूर्ध्नि धार्यते ।।

—हितोपदेश २।७१

भृत्य और आभूषण उचित स्थान में ही नियोजित करने चाहिएँ । क्योंकि चूड़ामणि पैरों और नेउर मस्तक में नहीं पहने जाते हैं ।

४ स्थान का महत्त्व—

जानामि नागेन्द्र ! तव प्रभावं, कण्ठस्थितो गर्जसि शंकरस्य ।
स्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं, स्थानस्थितः कापुरुषोऽपि सिंहः ।।

—सुभाषितरत्न-भाण्डागार पृष्ठ ९२

एक बार गरुड़ारूढ़ श्रीकृष्ण शंकर से मिलने गये । गरुड़ को देखकर महादेव के कण्ठस्थित नाग फुंफकारने लगा । तब गरुड़ बोला—नागेन्द्र ! तेरा प्रभाव मैं अच्छी तरह जानता हूं । तू शंकर के कण्ठस्थित होने के कारण ही गर्ज रहा है क्योंकि स्थानप्रधान होता है, बलप्रधान नहीं होता । स्थान में रहा हुआ कायर पुरुष भी सिंह बन जाता है । इस प्रसंग का एक सोरठा भी मिलता है—

छोटा नर छाजंत, बड़ै ठिकाणै बैठकर ।
गरुड़ देख गाजंत, भुयंग ईशगल भेरिया !

—सोरठा-संग्रह

१ राजा कुलवधूर्विप्रा, मन्त्रिणश्च पयोधराः ।
स्थानभ्रष्टा न शोभन्ते, दन्ताः केशा नखा नराः ।

—हितोपदेश १।१७३

राजा, कुलबहू, ब्राह्मण, मन्त्री, मेघ, केश, दाँत, नाखून ये आठों स्थान भ्रष्ट होने पर शोभा नहीं पाते ।

२ मुख में मानिक सम दशन, बाहर निकलत हाड़ ।

—हिन्दी कहावत

३ नक्रः स्वस्थानमासाद्य, गजेन्द्रमपि कर्षति ।
स एव प्रच्युतः स्थाना—च्छुनापि परिभूयते ।

—पञ्चतन्त्र ३।१४४

अपने स्थान में रहा हुआ जो मगर गजेन्द्र को खींच लेता है, वही स्थान भ्रष्ट होकर श्वान द्वारा भी पराजित हो जाता है ।

४ चलत्येकेन पादेन, तिष्ठत्येकेन बुद्धिमान् ।
नाऽसमीक्ष्य परं स्थानं, पूर्वमायतनं त्यजेत् ।

—हितोपदेश १।१०२

बुद्धिमान् मनुष्य एक पैर से चलता है और दूसरे से क्षण भर ठहरता है क्योंकि नीतिशास्त्र के अनुसार आगे के स्थान का विचार किये बिना पूर्व स्थान नहीं छोड़ना चाहिए ।

५ यो ध्रुवाणि परित्यज्य, अध्रुवं परिषेवते ।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति, अध्रुवं नष्टमेव हि ॥

—चाणक्यनीति १।१३

जो ध्रुव निश्चित वस्तुओं को छोड़कर अध्रुव वस्तु की सेवा करता है, उसकी ध्रुव वस्तुएं नष्ट हो जाती हैं और अध्रुव तो नष्ट हैं ही ।

६ स्वस्थान—

(क) आपरी गली में कुत्तो ही शेर
- नीम रो कीड़ो नीम में ही राजी
- ब्याव रा गीत ब्याव में ही गाइजै

—राजस्थानी कहावतें

(ख) अपनी-अपनी ठौर पर, सबका लागै दाव।
जल में गाड़ी नाव पर, थल में उस पर नाव।

(ग) शियाल ताणें सीम भणी ने कूतरूं ताणें गाम भणी।

—गुजराती कहावत

११ स्थान त्याग

१ स्थानमुत्सृज्य गच्छन्ति, सिंहाः सत्पुरुषा गजाः ।
तत्रैव निधनं यान्ति, काकाः कापुरुषा मृगाः ।

—हितोपदेश १।१०४

सिंह सत्पुरुष और हाथी ये समयानुसार स्थान छोड़कर अन्यत्र चले जाते हैं किन्तु काग, कायरपुरुष और मृग ये वहीं मर जाते हैं पर अन्यत्र नहीं जा सकते ।

२ यत्र देशेऽथवा स्थाने, भोगान् भुक्त्वा स्ववीर्यतः ।
तस्मिन् विभवहीनो यो, वसेत् स पुरुषाधमः ।

—सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ १७१

जिस देश अथवा स्थान में अपने पराक्रम से भोगों का उपभोग किया, फिर निर्धन होकर भी जो वहीं निवास करता है, वह अधमपुरुष है ।

३ यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मात्,
स्वदेशरागेण हि याति नाशम् ।
तातस्य कूपोऽयमितिः ब्रुवाणाः
क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति ।

—पञ्चतंत्र १।३४१

(देश छोड़ने से हिचकिचाते वृद्धों से श्री कृष्ण कह रहे हैं ।) जो सब जगह जाने में समर्थ है उसे स्वदेश के व्यामोह में फंसकर नष्ट नहीं होना चाहिए । हमारे बाप का कुँआ है, यों कहते हुए कापुरुष ही उसका खारा जल पीते हैं । वीरपुरुष नहीं पीते । (फिर यादव देश त्याग कर सौराष्ट्र गए एवं द्वारका बसाई गई)

४ यस्मिन् देशे न सम्मानो, न वृत्तिर्न च बान्धवः ।
न च विद्यागमोऽप्यस्ति, वासं तत्र न कारयेत् ।८।
धनिकः श्रोत्रियो राजा, नदी वैद्यस्तु पञ्चमः ।
पञ्च यत्र न विद्यन्ते, न तत्र दिवसं वसेत् ।९।

—**चाणक्यनीति अध्याय १**

जिस देश में सम्मान, आजीविका, स्वजन और विद्या-प्राप्ति न हो, वहाँ निवास नहीं करना चाहिये।

जहाँ १. धनिक (ऋण देने वाला) २. श्रोत्रिय (वेदज्ञब्राह्मण) ३. राजा ४. नदी ५. वैद्य—ये पाँच न हों, वहाँ एक दिन भी नहीं रहना चाहिये।

१२ भारत के कुछ दर्शनीय स्थान

१ **अजमेर**—यह एक प्राचीन शहर है। यहाँ **अन्नासागर** झील है, यह चारों ओर की दृश्यावली के लिए प्रसिद्ध है। यहीं प्रसिद्ध मुस्लिम संत **मुइनउद्दीन चिश्ती** का मकबरा भी है। यहाँ एक बड़ा ढोल और चित्तोड़ से अकबर द्वारा लाए गए दीपदान रखे हुए हैं। यहां अकबर और शाहजहाँ द्वारा बनवाई दो मस्जिदें भीं हैं। यहाँ से सात मील दूर **पुष्कर** है। यह भारत का एक पवित्र तीर्थ है। यहाँ अक्टूबर-नवम्बर में मेला लगता है। झील के किनारे ब्रह्मा का मन्दिर है। यहाँ भगवान् ने अवतार लिया था।

२ **अमरनाथ**—अगस्त में प्रतिवर्ष हिन्दू बड़ी संख्या में इसकी यात्रा करते हैं। यह १३,००० फुट ऊँचाई पर है। श्रीनगर में पहलगाम (७,२०० फुट) तक मोटर की सड़क है। यह गुफा पच्चास फुट ऊँची और पच्चास फुट गहरी है। यह दो बड़े पर्वतों-कैलाश और भैड़ा के मध्य है। यहाँ बर्फ जमकर लिंग-रूप हो गई है, अतः यह शिव का धाम माना जाता है। शिव-पार्वती, कार्तिकेय और गणेश की यहाँ बर्फ की स्वतः बनी प्रतिमाएँ हैं। यह अत्यन्त पवित्र स्थान है और निसर्ग की इस विभूति को देखकर मन गद्‌गद् हो जाता है।

३ **अमृतसर**—भारत-पाकिस्तान की सीमा-चौकी **बाघा** से यह केवल १६ मील दूर है। यह सिक्खों के प्रसिद्ध स्वर्णमन्दिर व पवित्र तालाब एवं हिन्दुओं के **दुर्ग्याना** मन्दिर के कारण मशहूर है। स्वर्ण-मन्दिर के साथ का तालाब सिक्खों की दृष्टि में अमृतजल से पूर्ण है। यह तालाब संगमरमर से निर्मित एक आयत से घिरा है। तालाब के मध्य मन्दिर है, जो एक वर्गाकार इमारत है। अन्दर की दीवारें व फर्श संगमरमर की बनी हैं, छत गुम्बद की शक्ल की है। इसके नीचे पवित्र **ग्रन्थसाहब** रखा हुआ है, जिसके ऊपर का चंदोवा रेशम का है। स्वर्णमन्दिर से लगभग दो फर्लांग दूर **जलियांवाला** बाग है।

४ **आगरा**—यह ताजमहल के कारण जगत्-भर में विख्यात और पर्यटकों का एक आकर्षण-केन्द्र है। मुगल साम्राज्य के वैभव और गौरव का यह साक्षी है। यहाँ मुगल-साम्राज्य की स्मृति दिलानेवाली सब वस्तुएँ हैं—जैसे—दीवान-ए-खास, मोती मस्जिद, चमेली मीनार, दीवान-ए-आम, सिकन्दरा में अकबर और एतमाद-उद्-दौला का मकबरा।

५ **उदयपुर**—महाराणा प्रतापसिंह के पिता उदयसिंह ने चित्तौड़ छोड़ने के बाद यह शहर बसाया था। यह भारत के अत्यन्त रमणीक स्थानों में से एक है। शहर चारों ओर से प्राचीर से घिरा हुआ है। इसमें पाँच प्रवेश-द्वार हैं। हरीभरी पहाड़ियों और घाटी के बीच झील के किनारे यह शहर बसा है। पानी के किनारे से श्वेत संगमरमर के महल ऊपर उठते हुए प्रतीत होते हैं। सूर्य-प्रकाश और चांदनी रात में इनकी शोभा देखते ही बनती है।

६ **कन्याकुमारी**—कुमारी अन्तरीप पर कन्याकुमारी का मन्दिर है। यहाँ भारतभूमि के अन्त में, बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और हिन्दमहासागर मिलते हैं। यह अत्यन्त दर्शनीय स्थानों में से एक है।

७ **चिदम्बरम्**—मद्रास से १५१ मील दूर दक्षिण रेल्वे पर है। यहाँ विश्व-विख्यात-नटराज शिव का मन्दिर है। यहाँ शिव की प्रतिमा ताण्डव-नृत्य करते हुए बनायी गई है। मन्दिर के अन्दर की दीवार में चार गोपुरम् हैं। इनमें से दो में नाट्यशाला में वर्णित १०८ मुद्राओं का चित्रांकन किया गया है।

८ **जयपुर**—सवाई राजा जयसिंह ने सन् १७२८ में इस शहर को बसाया। यह हिन्दु वास्तुकला का अनुपम उदाहरण है। गुलाबी रंग के पत्थरों से यह शहर बसाया गया है। इसके मार्ग और वृक्षराजि के साथ बने रास्ते एक-दूसरे को सदा समकोण पर काटते हैं। इससे शहर सीधे खण्डो में विभक्त हो गया है। यहाँ सन् १७१८ में बनी एक वेधशाला भी है। हवामहल, रामनिवास बाग, अलबर्ट हाल और म्यूजियम दर्शनीय स्थान हैं। जयपुर से ७ मील दूर अम्बर महल है। यहाँ पुराने राजमहल है। यह पुरानी राजधानी है। यहां का राजपूत-शिल्प दर्शनीय है।

९ **दिल्ली**—सन् १९११ से भारत की राजधानी है। यह आठ साम्राज्यों की राजधानी रही है। यहाँ शाहजहाँ द्वारा बनवाया हुआ लाल-किला है, जिसके अन्दर दीवान-ए-आम, दीवान-ए-खास, रंगमहल, हमाम, मोती-मस्जिद आदि देखने योग्य हैं। जामा-मस्जिद, तुगलकाबाद, हुमायूँ का मकबरा, पाण्डवों का किला, कुतुब मीनार, जन्तर-मन्तर आदि यहाँ कई अन्य दर्शनीय स्थान भी हैं।

१० **नालन्दा**—यहाँ गुप्त सम्राटों ने नालन्दा-विश्वविद्यालय स्थापित किया था। यह उस समय के ज्ञात संसार में सर्वाधिक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय था। चीनी विद्वान् ह्वानसांग ने सातवीं सदी में यहाँ सात साल रहकर अध्ययन किया था। यहाँ दस हजार विद्वान् अध्ययन करते थे। इनके निवास और भोजन की व्यवस्था विश्वविद्यालय की ओर से थी। यह विश्वविद्यालय ७०० वर्ष तक चलता रहा। बारहवीं सदी में आक्रांताओं ने इसको जलाकर नष्ट कर दिया।

११ **पटना**—बिहार की राजधानी और भारत का एक अत्यन्त प्राचीन नगर है। यह नगर निरन्तर एक हजार साल तक भारत की राजधानी रहा है। यह गंगा के तट के साथ-साथ १२ मील में बसा हुआ हैं। यहाँ के दर्शनीय स्थानों के अन्दर मधुमक्खी के छत्ते के आकार का बना गोल घर है। यह बीस फुट ऊँचा है। इसका धरातल ४२० फुट है। बारेन हेस्टिंग्ज ने अकाल से लोगों को बचाने के वास्ते यहाँ अनाज जमा करके रखा था। अरबी और फारसी की अनमोल पांडुलिपियों के लिए "खुदाबख्श-लाइब्रेरी" दुनिया भर में प्रसिद्ध है। चन्द्रगुप्त मौर्य और अशोक की राजधानी पाटलिपुत्र पटना के नीचे दबी पड़ी है।

१२ **गया**—हिन्दुओं का प्राचीनतम और प्रधान तीर्थ है। पटना से सत्तावन मील दक्षिण, कलकत्ता से २९१ मील पश्चिम और वाराणासी से १३५ मील पूर्व में स्थित यह स्थान पितरों के पिण्डदान का प्रमुख केन्द्र है। यहाँ विष्णु पद का विशाल मन्दिर है। प्रतिवर्ष आश्विन कृष्णपक्ष में यहां पितृपक्ष मेले में सर्वाधिक यात्री पहुंचते हैं।

१३ **बुद्धगया**—गया से सात मील दूर यह स्थान हैं, जहाँ बोधिवृक्ष के नीचे

भगवान् बुद्ध ने आत्मज्ञान प्राप्त किया था। इस वृक्ष के समीप अशोक ने एक स्तूप बनवाया था, जिसके स्थान पर एकसौ अस्सी फुट ऊँचा मीनार-सदृश एक मन्दिर खड़ा है।

१४ **भुवनेश्वर**—उड़ीसा की नई राजधानी है। यहाँ लिंगराज का मन्दिर, मुक्तेश्वर-मन्दिर तथा परशुरामेश्वर-मन्दिर हैं। यहाँ भगवती-पार्वती, अनन्त वासुदेव आदि के मन्दिर भी हैं। दसवीं शती में बना राजरानी-मन्दिर है। समीप का पहाड़ उदयगिरि और खंडागिरि के नाम से प्रसिद्ध है। भुवनेश्नर से कुछ मील दूर गुफाएँ हैं, जहाँ कभी जैन भिक्षु निवास करते थे। गुफाओं में उत्कीर्ण कला कृतियाँ ईसा से दो-सौ साल पहले की है।

१५ **मदुराई**—पण्ढ्या राजाओं की यह राजधानी १७ वीं शती से नायक राजाओं के शासन से विख्यात हुई। मीनाक्षी का मन्दिर दक्षिण के मन्दिरों में अत्यन्त प्रसिद्ध और दर्शनीय है। वह द्रविड़-शिल्प का उत्कृष्ट नमूना माना जाता है। यह शिव और मीनाक्षी को अर्पित है। मन्दिर समानान्तर चतुष्कोण आकार में ८५० X ७५० फुट में बना हुआ है यह चारों ओर नौ गोपुरमों से घिरा है। इसका एक गोपुरम् १५० फुट ऊँचा है। सहस्र स्तंभों के हाल में सुन्दर चित्रकारी है। अन्य इमारतें **तिरुमल** नायक के राजमहल से सम्बद्ध है।

१६ **रामेश्वरम्**—भारत के ठेठ दक्षिणी सिरे पर भारत प्रायद्वीप की अन्तिम सीमा में बसा हुआ है। विश्वास किया जाता है कि यहाँ भगवान् राम ने शिव की पूजा की थी। मदुराई से रामेश्वरम् दो मील दूर है। रामेश्वरम् मन्दिर १५ वीं शती की द्रविड़ शैली का नमूना है। इसका गलियारा ४,००० फुट से भी अधिक है।

१७ **वाराणसी**—तीनों लोकों से न्यारी यह नगरी मानी जाती है। यह शिवजी का धाम है। अतः यह विश्वनाथ पुरी के नाम से भी प्रसिद्ध है। यहाँ मन्दिर भी बड़ी संख्या में हैं।

१८ **सारनाथ**—वाराणसी शहर से पाँच मील दूर सारनाथ है। सारनाथ के मृगदाव में ही भगवान् बुद्ध ने सर्वप्रथम 'धर्मचक्र' प्रवर्तन किया था और

अपने प्रथम पाँच शिष्यों को धर्मोपदेश किया था। यहां बने बिहार १,५०० वर्ष पुराने हैं। इसको देखने के लिए दुनिया भर से बौद्ध तीर्थयात्री आते हैं। यहाँ अशोक का प्रसिद्ध स्तूप है, इसके शिरोभाग पर बना सिंह गणराज्य भारत का राजचिह्न है।

१९ **श्रीनगर**—इसकी ऊँचाई ५००० फुट से ६,००० फुट के बीच है। कश्मीर की यह राजधानी ११ वर्ग मील में है। श्रीनगर जाने का मोटर-मार्ग पठानकोट से है। जेहलम नदी के किनारे-किनारे यह शहर बसा हुआ है। नदी पर सात पुल आर-पार जाने के वास्ते बने हुए हैं। यहां अनेक सुन्दर बाग हैं, जैसे—शालीमार बाग, निशात बाग, नसीम बाग और चश्मे-शाही। दर्शनीय स्थानों में पहलगाम, डल झील, एवं अमरनाथ हैं। पहलगाम श्रीनगर से ६० मील दूर है और अमरनाथ ८७ मील।

२० **हरिद्वार** गंगा जब पहाड़ों से निकलकर मैदान में आती है, तो सबसे पहले यहीं आती हैं। हर की पौड़ी पवित्र पूजा-स्थल है। घाट के ऊपर की दीवार पर भगवान् विष्णु के पदचिह्न अंकित हैं। थोड़ी ही दूर भीमगोड़ा है, जहां लोग दर्शन करने जाते हैं। पास ही पहाड़ों पर एक ओर मंसादेवी और चण्डीदेवी का मंदिर है।

—भारत ज्ञानकोष, सन् १९७१-७२ के आधार से

१३ कला के लिए प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान

१ **अजन्ता की गुफाएँ**—अजन्ता की गुफाओं की भित्तियों पर बुद्ध भगवान् की कथा चित्रित हैं। जलगाँव स्टेशन से यहां जाने का रास्ता है। स्टेशन से यह ३७ मील दूर है। अजन्ता की गुफाओं में १२ बौद्ध, १७ हिन्दू और ५ जैन-मन्दिरों का समावेश है। इनमें से कुछ तो २,००० वर्ष पुराने हैं। सीधी चट्टान पर ये उत्कीर्ण किये गए हैं। जिस चट्टान को काटकर ये बनाये गए हैं, वह २५६ फुट ऊंची है। इसको खोदकर गुफाएँ बनाई गई हैं, जो पूर्व से पश्चिम की तरफ एक तिहाई मील लम्बी हैं। घोड़े के खुर के आकार की घाटी में ये गुफाएं बनायी गई हैं। ये भित्तिचित्र विश्व में कला के उत्कृष्ट चित्र माने जाते हैं। यहां उत्कीर्ण-चित्र बुद्ध की जीवनी को चित्रित करने के लिए ही नहीं, प्रत्युत सजावट के उद्देश्य से भी बनाए गए हैं।

२ **कोणार्क मन्दिर**—समुद्र-तट के समीप पुरी के उत्तर में ७०० वर्ष पुराना कोणार्क मन्दिर है। दन्तकथा है कि एक बार भुवनभास्कर स्वर्ण रथ पर समुद्र से निकलते हुए दिखाई दिए थे। उनकी छाया जहां पड़ी वहाँ उनके भक्तों ने उनके रथ की शक्ल का मन्दिर बनाना प्रारम्भ किया। चौबीस पहियों और सात घोड़ों समेत रथ के आकार का मन्दिर बनाया गया। इसका कुछ भाग नष्ट हो गया। किन्तु पत्थर की कला व शिल्प की दृष्टि से भारत में इसकी तुलना का दूसरा मन्दिर नहीं है। पुरी से भुवनेश्वर जाने वाली सड़क से पीपली पर एक सड़क निकल कर यहां तक गई है। यह दूरी २६ मील है।

३ **बेलूर मन्दिर**—यह चेन्ना-केशव मन्दिर के नाम से विख्यात है। मैसूर राज्य का यह मन्दिर होयसाल नरेशों के कला प्रेम और सौन्दर्य अनुरक्ति का एक सुन्दर प्रमाण है। होयसाल नरेश विष्णुवर्धन ने इसको १,११७

वर्ष पहले बनवाया था। इस मन्दिर के विषय में फर्गुसन का कहना है कि बारीकी और तफसील में यह बेजोड़ है।

४ **चित्तौडगढ़**—यह दुर्ग मेवाड़ के गोहेलवाड़ और सिसोदिया नरेश की बहादुरी और शौर्य का प्रतीक है। चित्तौड़ आठवीं से सोलहवीं शती तक मेवाड़ की राजधानी रहा है। यह दुर्ग मन्दिरों, राजप्रासादों और मीनारों की एक भव्य दृश्यावली हैं। इनमें विजय-स्तम्भ सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यह राणा कुम्भा ने मालव के सुल्तान मुहम्मद खिलजी को पराजित करने की स्मृति में सन् १४४० में बनवाया था।

६ **एलोरा की गुफाएं**—औरंगाबाद से ये १४ मील दूर हैं। ये संख्या में ३४ हैं। ये गुफाएं तीन प्रकार की हैं: हिन्दू, बौद्ध और जैन। ये तीनों प्राचीन धर्मों की विशेषता लिए हुए हैं और उनकी कला-विषयक कल्पना के ये उत्तम नमूने हैं। चट्टान को काटकर बनाए मन्दिरों में सबसे बड़ा और विस्मय जनक कैलाश का मन्दिर है। स्वर्ग भी ठोस चट्टानों को काटकर बनाया गया है। इसके स्तम्भ विशाल और भारी हैं। चट्टान में २७० फुट लम्बा १७० फुट चौड़ा एक बड़ा गड्ढा खोदा गया है। इस चौकोर गड्ढे में मन्दिर है। इसका वितान ८०-९० फुट ऊंचा है। इसके आगे का बरामदा और यह पुल गोपुरम् द्वारा मन्दिर से मिला हुआ है। इसके सिवाय दो दीपदान और चारों और छोटी-छोटी कोठरियां हैं। चारों ओर की सात कोठरियों में से प्रत्येक में हिन्दू-देवता स्थापित हैं।

७ **गोमतेश्वर**—मैसूरराज्य में श्रमण बेलगोला के समीप जैन सन्त गोमतेश्वर की विशाल ५७ फुट ऊंची प्रतिमा है। यह पर्वत शिखर पर एक पत्थर को काटकर बनायी गयी है। यह सम्भवतः दो हजार वर्ष पुरानी है।

८ **दिल्ली का लाल किला**—लाल किले की दीवारों के भीतर शाहजहां का शाही महल है। यह मुगल-वैभव, शान-शौकत और ठाठ-बाट का साक्षी है। सम्राट् शाहजहां ने इसको सन् १६३९-१६४८ के मध्य बनवाया। किला दीवान-ए-खास और मोती-मस्जिद के लिए प्रसिद्ध है।

९ **कुतुब मीनार**—यह भारतीय इन्जीनियरिंग और शिल्प का एक अनुपम

उदाहरण है। यह पत्थर की मीनार भारत-भर में ऊंची है। कुतुबुद्दीन ऐबक ने इसे बनवानी शुरू की थी परन्तु पहली मंजिल बनवाने के बाद ही उसकी मृत्यु हो गई। अगली तीन मंजिलें गुलाम वंश के अल्तमश ने बनवाईं। पांचवीं मंजिल करीब डेढ़ सौ साल बाद फिरोजशाह तुगलक ने सन् १३६८ में तैयार करवायी।

यह इस्लामी शैली की पहली शानदार इमारत है। यह लाल रंग के पत्थर और संगमरमर से बनाई गई है। प्रत्येक मंजिल के बाद एक छज्जा है, जो मंजिलों को जोड़ता है।

१० **महाबली पुरम्** - यह सात पगोडाओं के नाम से भी विख्यात है। यह मद्रास से ५३ मील दूर बंगाल की खाड़ी के तट पर है। महाबलीपुरम् में बनी मूर्तियाँ ठोस चट्टान को काटकर, तराशकर, बनाई गई हैं, जैसे पांच रथ महिषासुर-मण्डप, कृष्ण-मण्डप, अर्जुन-तपस्या आदि। इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध है 'गंगावतरण'। यह ९० फुट लम्बी और ४३ फुट ऊँची ग्रेनाइट की चट्टान को काटकर बनाई गई है। दूसरी महत्वपूर्ण मूर्ति में भगवान विष्णु अनन्त-शेषनाग पर लेटे हुए हैं।

११ **आगरा का किला**—मूलतः अकबर ने इसको बनवाया था। शाहजहाँ ने इसको बढ़ाया। इसकी दीवारें सत्तर फुट ऊँची हैं। इसके बुर्ज अष्टभुज हैं। इसके प्राचीर में जगह-जगह गोली चलाने के वास्ते छिद्र बने हुए हैं। इसका विशाल आंगन, द्वार, दरबार हाल, शाही महल आदि दर्शनीय हैं।

१२ **ताजमहल**—जगत-भर में प्रसिद्ध यह मकबरा शाहजहां ने अपनी बेगम मुमताजमहल की यादगार में आगरा में बनवाया था। सुन्दर उद्यानों के बीच इसकी शानदार मीनारें खड़ी हैं। सादगी और सौन्दर्य का यहाँ अद्भुत मेल है। यह भारतीय तुर्की और यूरोपियन कलाकारों के संयुक्त प्रयत्नों का सुफल है। गुम्बद की ऊँचाई २३० फुट है। शाहजहां अपने आखिरी दिनों में आगरे के किले में से हरदम इसी को निहारा करता था। इसका निर्माणकार्य सन् १६३२ में शुरू हुआ। कहा जाता है कि १२ वर्ष तक १० हजार मनुष्यों ने दिन-रात काम किया एवं साढ़े चार करोड़ रुपये खर्च हुए।

—भारत ज्ञानकोष १९७१-७२ से

१३ **राणकपुर मन्दिर**—यह विक्रम सम्वत् १६४६ में प्रारम्भ हुआ। १६९६ में इसकी प्रतिष्ठा हुई। कहा जाता है कि राणाकुम्भा के समय यहाँ जैनियों के तीन हजार घर थे। मन्दिर में १४४८ खम्भे हैं। मन्दिर पर ९९ लाख रुपये लगे थे।

—संकलित

१४ **देलवाड़ा मन्दिर**—आबू पर्वत पर विस्मयजनक पाँच जैन मन्दिर हैं, जो ११वीं, १२वीं और १३वीं शती में संगमरमर से बनाए गये हैं। स्तम्भों और दीवारों पर उत्कीर्ण चित्रों की प्रचुरता है। उनमें एक मन्दिर विमलशाह का बनाया हुआ है। कहा जाता है कि पाटणनरेश-भीमदेव के सेनापति-विमलशाह ने सोने का सिक्का बिछाकर देलवाड़ा में शिव मंदिर के ११ हजार पुजारियों से जमीन खरीदी, हाथियों पर पहाड़ से संगमरमर (पत्थर) खोदकर मंगवाया गया, जो चाँदी के भाव पड़ा। दो हजार कारीगरों ने चौदह वर्ष तक काम किया। ११४० फुट लम्बा और ९० फुट चौड़ा श्री ऋषभदेव का अद्भुत मन्दिर तैयार हुआ। जनश्रुति के अनुसार इसमें १८ करोड़ ५३ लाख रुपये खर्च हुए थे। यह सन् १०३२ में बना था।

इस मन्दिर के निकट एक नेमिनाथ भगवान का मन्दिर है, जो सन् ११९७ व १२४७ के मध्य वस्तुपाल-तेजपाल ने बनवाया है—इस पर १२ करोड़ ५३ लाख रुपयों का व्यय हुआ। उक्त मन्दिर में देरानी-जेठानी के दो आले हैं, जिन पर नव-नव लाख रुपये लगे हैं। इन मन्दिरों की कोरणी (पत्थरों की खुदाई) विश्व में अद्भुत हैं। कहा भी जाता है—

"आबूजी की कोरणी, शत्रुंजय की जोड़णी
तारंगा की ऊँचाई"

देलवाड़ा से करीब ६ माइल दूर अचलगढ़ है, वहां १४ मूर्तियाँ हैं। सुनने में आया है कि निर्माण के समय इनमें १४४४ मन सोना लगा था।

—प्राचीन संग्रह से

१४ जन्मभूमि-स्वदेश

१ उपसर्प मातरं भूमिम् ।

मातृभूमि की सेवा कर ।

२ जननी जन्मभूमिश्च, स्वर्गादपि गरीयसी ।

जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है ।

३ पितृपूर्वार्जिता भूमि-र्दरिद्रापि सुखावहा ।
अपि स्वर्णमयी लङ्का, न मे लक्ष्मण रोचते ।

पूर्वजों द्वारा उपार्जित साधारण भूमि भी सुखदाई होती है । अतः हे लक्ष्मण ! यह सोने की लंका भी मुझे नहीं सुहाती—ऐसे श्रीराम ने कहा ।

४ समस्तपक्षपातेषु स्वदेशपक्षपातो महान् ।
सभी पक्षपातों में स्वदेश का पक्षपात बड़ा है ।

—नीतिवाक्यामृत १०।६

५ गिर मोरां वन कुंजरां, आमां-डाल सुवां ।
जलमभोम सज्जनबचन, बीसरसी जु मुवां ।

—राजस्थानी दोहा

६ विप्रास्मिन् नगरे महान् कथय किं तालद्रुमाणां गणः,
को दाता ? रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीत्वा निशि ।
को दक्षः ? परवित्त-दारहरणे सर्वोऽपि दक्षो जनः,
कस्माज्जीवसि हे सखे ? विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम् ।

—चाणक्यनीति १२

प्रश्न—हे ब्राह्मण ! इस नगर में बड़ा क्या है ?

उत्तर—ताल वृक्षों का समूह ।

प्रश्न—दातार कौन है ?

उत्तर—धोबी दातार है, जो वस्त्रों को सुबह ले जाता है और धोकर रात को वापिस दे जाता है।

प्रश्न—दक्ष कौन है ?

उत्तर—परधन एवं पर-स्त्री को हरण करने के लिए समूचा शहर ही दक्ष—होशियार है।

प्रश्न—हे मित्र ! फिर तू यहां पर कैसे जीता है ?

उत्तर—विष कृमि-न्याय से जी रहा हूँ अर्थात् सांस और वस नहीं छूटता।

७ जननी जन्मभूमिश्च, जाह्नवी च जनार्दनः।
जनकः पंचमश्चैव, जकाराः पंच दुर्लभाः॥

—सुभाषितरत्नभाण्डागार पृ० १६३

(१) जननी-माता, (२) जन्मभूमि, (३) जाह्नवी-गंगा, (४) जनार्दन-भगवान, (५) जनक पिता – ये पांच जकार दुर्लभ हैं।

१५ देश-भक्त

१ मरना भला है उसका, जो अपने लिये जिये ।
जिंदा है वह जो मर गया, स्वदेश के लिये ॥

—हिन्दी पद्य

२ शहीदों की चिताओं पर, जुडेंगे हर बरस मेले ।
वतन पर मिटने वालों का, यही बाकी निशां होगा ॥

—उर्दू शेर

३ शहीदों के रक्त बिन्दु ही उपासनालयों की आधारशिला होते हैं ।

—लार्ड मेकाले

४ **पौरवराज**—सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया । सिन्धु नदी के उस पार सेना को छोड़कर राजदूत के वेष में पौरवराज से मिलकर अपने सम्राट का सन्देश दिया कि आप कृपया, पंजाब में होकर मुझे राजधानी दिल्ली तक जाने दें । मैं आपको अपना मित्र मानूंगा । राजा ने कहा—भाई ! मैं तो देश भक्त हूं । दुश्मन को रास्ता देना देश-द्रोही का काम है । यदि सिकन्दर मेरे से मिलना चाहे तो रणक्षेत्र में मिल ले । फिर राजदूत को भोजन के लिये निमन्त्रण दिया । सबको भोजन परोसा गया किन्तु राजदूत की थाली में सोने की रोटियां और हीरे-पन्ने-माणक-मोतियों का शाक रखा गया । विस्मित सिकन्दर ने कहा—क्या मजाक कर रहे हैं आप ? महाराज बोले – मजाक की क्या बात है ? तुम्हें रोटी की भूख नहीं है, सोने की ही भूख है । मैं जान गया, तुम छद्म वेषधारी सिकन्दर हो ! सम्राट् लज्जित होकर चला गया और उसके बाद उसने भारत पर आक्रमण नहीं किया ।

—कल्याण वर्ष ४५ अंक ४

५ सागर में एक श्रावक के यहाँ से नौकर देशी चावल लाया । साहब ने लौट कर विलायती मँगवाये । इसी प्रकार बम्बई में एक अंग्रेज ने देशी जूते लौटा कर विलायती खरीदे । पूछने पर कहा कि इसके पैसे हमारे देश में जाते हैं ।

६ दिल को बदलने वाले अफ्रीकी डॉ० बर्नार्ड को केनेडा आजीवन प्रतिवर्ष एक लाख डालर, इंगलैण्ड तीन लाख डालर, फ्रांस पांच लाख डालर और अमेरिका दस लाख डालर देने को तैयार है, बशर्ते वे अफ्रीका को छोड़कर उनके देशों में बस जाएं। लेकिन स्वदेश-प्रेमी डॉ० बर्नार्ड अपनी मातृभूमि को छोड़ने के लिए तैयार नहीं।

—हिन्दुस्तान, ६ फरवरी १९६८ के आधार से

७ अगर तल्ला, ३१ मार्च (यु० न्यू०) ढाका महिला कालेज की एक प्रथम वर्षीया छात्रा ने अपनी छाती से विस्फोटक सुरंग को बाँधा तथा उछलकर संहाररत पाकिस्तानी टेंक से जा टकराई। छात्रा अपने उद्देश्य में सफल हुई और पैटन टैंक विस्फोटित हो गया। जिस छात्रा ने यह महान बलिदान किया, उसका नाम कुमारी **रोशन आरा** बेगम था।

—हिन्दुस्तान, २ अप्रेल १९७१

८ **रणवीर**—मिलाप का एडीटर रणवीर एक बार न्यूयार्क गया। वहाँ जो कुछ विशेष वस्तु देखता था, प्रतिदिन एक पत्र लिख देता था। वह एम्पायर स्टेट बिल्डिग की १०२वीं मंजिल से लिखता है कि-गाइड (इन्चार्ज) ने मुझ से पूछा—क्या अमरीका जैसी अद्भुत चीजें आपके भारत में है? मैंने कहा—अमरीका में भी भारत जैसी अद्भुत चीजें नहीं मिल सकतीं। विस्मित गाइड ने कहा—ऐसी कौन-सी चीजें हैं? मैंने उत्तर दिया—हमारे भारत में अनेक अकिंचन ऋषि-मुनि हैं, जो एक कोड़ी भी अपने पास नहीं रखते तथा अनेक ऐसी बाल-विधवाएँ हैं, जो जीवन भर ब्रह्मचर्य का पालन करती हैं[1]—क्या आपकी अमरीका में ऐसी चीजें हैं? गाइड चुप हो गया एवं लज्जा से उसका सिर झुक गया।

—विशनदयाल गोयल से श्रुत

नोट—१ एक अमेरिकन महिला पति की कब्र पर हवा कर रही थी। स्वामी विवेकानन्द ने उसके पैर छूकर हवा करने का कारण पूछा। उसने कहा—पति के शव को सुखाने के लिए हवा कर रही हूं। शव के सूखते ही दूसरा पति बना लूंगी।

१६ देश विशेष के दोष-गुण

१ थली प्रदेश के दोष—

(क) वृच्छ न नीर न उत्तम चीर न, चक्खन नार न लोक में चारु।
पाव में लागे कांटा-भुर्ट गोखरू, आंखन में उड़के पड़े वारू।
राबड़ी-छाछ को खाणो घणो, तिन सौं निकले खुजली अरु न्हारू।
सुन्दरदास उदास भए, चलिये इस देश कूं बेग विसारूं।

(ख) घणा फोग रो वास, घणा खेजड़ा खारा जल।
ऊंचा थल असमान तिहां लू आवै अति सबल।
कड़-कड़ दे चालतां, भुरट-कांटा पग भाजै।
महलां सिर महिराण, छैल कोई बिरला छाजै।
सारो दिन कूवो सींचता, पाणी नहिं लाधै पली।
एकदिन ब्रह्मगहिलो हुवो, तिण दिन निपजाई थली।

—भाषा श्लोकसागर

२ थली प्रदेश के गुण -

(क) तिल काकड़ी टींडसी, मोठ काचर मतीरा।
घी गुड़ सखर सवाद, के मिसरी के सीरा।
सुघड़ पणै बहु सेक, चूप सूं सिट्टा चाबै॥
सुगम सिरै धर-सार, सकल परिजन सुख पावै।
धोरड़े वैस धुनि धार-धुर फिर-फिरनें खावै फली।
तिण कहे **हंस** करतारनै थिर सूं थिर वसज्यो थली॥

(ख) गोरस रा बहु गटक, दूध दहि सखरा दीसै।
ताजा घृत तपाय, प्रगट खीचड़ी पुरीसै।
मठ काचर फल मिलै, सखर सालणा समारै।

सुरपति पिण स्वाद नैं, प्रोढ होय पाण पसारै।
ऊपर कूर नै दहि अजब, रसन स्वाद मानैं रली।
तिण कहे **हंस** करतार नै थिर सू थिर वसज्यो थली।

३ मेवाड़ के गुण—

एकलिंग अवतार, जठै राणो है छत्रपति।
सरिता गहर गंभीर, धन्य देवाँरी धरती।
आंबा चंप गुलाब, खाय खस बोई सदाई।
धीणो घणो जु धान, कमी नहि दीसै कांई।
दूध-पूत-दौलत दिसा, पूठ रखो जिहां पहाड़रो।
हरि-हर-ब्रह्म परसन हुवै, (जद) मिलै देश मेवाड़रो।

—**भाषाश्लोकसागर**

१ गिरि शिखर पर अंब फल, निबल काक विलसंत।
सिंह सबल पर पख नहीं, तातैं मुख टीवंत ।।

२ हिमायतरी गधी हाथी रै लात मारै।

० कल सूं कल दबै

० ढबां खेती ढबां न्याव, ढबां हुवै बूढै रो व्याव।

—राजस्थानी कहावतें

३ यः स्वपक्षं परित्यज्य, परपक्षं निषेवते।
स स्वपक्षे क्षयं याते, पश्चात्तैरेव हन्यते।

—वाल्मीकि रामायण ५।६६।११

स्वपक्ष को छोड़कर परपक्ष में मिलने वाला स्वपक्ष नष्ट होने पर परपक्ष द्वारा मारा जाता है।

४ **पक्षपात—**

(क) एके टा नोश, दीगरे रा नेश।

— पारसी कहावत

एक को शक्कर दूसरे को विष।

(ख) ठावे-ठावे टोपली, बाक्यां ने लंगोट।

० खाण-पीण नैं खेमलो; नाचण नैं नगराज।

—राजस्थानी कहावतें

स्वजन-ज्ञाति

१ आतुरे व्यसने प्राप्ते, दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे।
राजद्वारे श्मशाने च, यस्तिष्ठति स बान्धवः॥

—चाणक्यनीति १।१२

जो रोग दशा में, दुःख पड़ने पर, दुर्भिक्ष के समय, दुश्मनों का संकट उत्पन्न होने पर, न्यायालय में और श्मसान यात्रा में साथ देता है, वास्तव में वही सच्चा स्वजन है।

२ ते पुत्रा ये पितुर्भक्ताः स पिता यस्तु पोषकः।
तन्मित्रं यत्र विश्वासः, सा भार्या यत्र निर्वृतिः।

—चाणक्यनीति २।४

पुत्र वे ही हैं, जो पिता के भक्त हों। पिता वही है, जो पुत्रों का पोषण करें। मित्र वही है, जिसमें विश्वास हो और भार्या वही है जिससे सुख हो।

३ परोऽपि हितवान् बन्धु-र्बन्धुरप्यहितः परः।
अहितो देहजो व्याधि-र्हितायारण्यमौषधम्॥

—हितोपदेश ३।६३

हितैषी हो तो पर (शत्रु) भी स्वजन है एवं अहितकर्ता हो तो स्वजन भी पर अर्थात् शत्रु है। जैसे—देह से उत्पन्न होने पर भी व्याधि अहित कर्ता है और औषधि वन में उत्पन्न होने पर भी हितकर्ता है।

४ काम पड्या सूं आवै काम, सो ही सगो जग में अभिराम।
काम पड्यां थी देवे टालो, तेण सगा रो मुंहड़ो कालो।

—जैनरामायण

१८

५ आडो आवै जिको ही सीरी।

—राजस्थानी कहावत

६ रात-दिवस ऊपर फिरै, लादै पत्थर लोह।
नीर न डोबै नाव को, अजब पुराणो मोह॥

७ नहुंआं नालों मास वख नहीं हो सकदा।
अपने खास सम्बन्धियों से व्यक्ति कभी अलग नहीं हो सकता।

० भज्जीयां बाहां गलनु आउंदीयां हन।

—पंजाबी कहावतें

विपत्ति के समय स्वजनों का ही सहारा लिया जाता है।

८ दाल-भात भेला र कोकला किनारे।

—राजस्थानी कहावत

सगे-सगे लड़कर फिर मिल जाते हैं, तीसरा सदा के लिए दुश्मन बन जाता है।

९ नहि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः।
हितैषी स्वजन कभी मीठा असत्य नहीं बोला करते।

१० **स्वजनों के साथ व्यवहार—**

(क) संभोजनं संकथनं, संप्रीतिश्च परस्परम्।
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधो कदाचन।

—विदुरनीति ७।२४

स्वजनों के साथ भोजन, कथन एवं प्रेम करना चाहिये किन्तु विरोध कभी नहीं।

(ख) रिश्तेदारी हो वहाँ, कभी न करिये काम।
सुधरे शाबाशी नहीं, बिगड़े हो बदनाम।

—दोहा-संदोह

११ निकृष्ट स्वजन—

(क) हृष्यन्ति व्यसनेष्वेते, ज्ञातीनां ज्ञातयः सदा ।

—**वाल्मीकिरामायण** ६।१६।३

ज्ञातियों के कष्ट में निकृष्ट ज्ञाति प्रायः प्रसन्न होते हैं ।

(ख) धिक् पुत्रमविनीतं च, धिक् कलत्रमपुत्रकम् ।
धिग् गृहं गृहिणीशून्यं, धिगस्तु परवश्यताम् ।

—**सुभाषितरत्न भांडागार**

अविनीत पुत्र, पुत्ररहित स्त्री, स्त्री-रहित घर और परवशता—ये चारों धिक्कार के पात्र हैं ।

(ग) यत्रात्मीयो जनो नास्ति, भेदस्तत्र न विद्यते ।
कुठारे दण्ड-निर्मुक्ते, भिद्यन्ते तरवः कथम् ॥

—**सुभाषितरत्न भांडागार पृ० १५६**

जहाँ अपना स्वजन-बन्धु न हो, वहाँ कभी भेद नहीं होता । जैसे—लकड़ी का डंडा न लगने पर कुल्हाड़े से वृक्ष नहीं काटे जा सकते ।

१२ स्वजनों का स्वभाव—

धन नों बाप, दुख नी मां, छत नी बैन, विपते मित्र ।

—**गुजराती कहावत**

१३ भयानक एवं सहायक स्वजन—

भयरूप पिता भृगु-पुरोहित जैसा एवं सहायक पिता कृष्ण जैसा ।
भयरूप संतान कंस-जीवयशा जैसी एवं सहायक संतान राम-लक्ष्मण जैसी ।

भयरूप भार्या सूर्यकांता जैसी और सहायक भार्या मदनरेखा जैसी ।

भयरूप माता चुल्लणी जैसी एवं सहायक माता अतिमुक्तकुमार की माता जैसी ।

१४ सच्चे स्वजन—

सत्यं माता पिता ज्ञानं, धर्मो भ्राता दया सखा।
शान्तिः पत्नी क्षमा पुत्रः, षडेते मम बान्धवाः ॥

—चाणक्यनीति १२।१०

सत्य माता है, ज्ञान पिता है, धर्म भाई है, दया मित्र है, शान्ति पत्नी है, क्षमा पुत्र है—ये छः मेरे सच्चे स्वजन हैं।

१५ स्वजनों का संबन्ध—

बाहुँदियां दी भौं, ते मिलदीयां दे साक।

—पंजाबी कहावत

जोतते रहने से जमीन अच्छी बनती है और बारबार मिलते रहने से साख संबंध सुदृढ़ होते हैं।

माता

१ गरीयसी वै भुवि मातृशक्तिः ।

पृथ्वी पर निश्चय ही माता की शक्ति सर्वाधिक है ।

२ नास्ति मातुः परो गुरुः । —अत्रिसंहिता

माता से बढ़कर कोई गुरु नहीं है ।

३ माँ शिशु का भाग्य लिखने वाली एक अनोखी कलम के समान है ।

४ त्रातः पुत्रः कथमपि यया स्तूयतां सैव माता ।

अनेक कठिनाइयां सहकर भी जिसने अपने पुत्र की रक्षा की, वह माता स्तुति के योग्य है ।

५ नास्ति मातृसमा छाया, नास्ति मातृसमा गतिः ।
नास्ति मातृसमं त्राणं, नास्ति मातृसमा प्रिया ॥३१॥
कुक्षिसंधारणाद् धात्री जननाज्जननी स्मृता ।
अङ्गानां वर्धनादम्बा, वीरसूत्त्वेन वीरसूः ॥३२॥

—महाभारत-शान्तिपर्व २६६

माता के समान दूसरी छाया कोई नहीं है अर्थात् माता की छत्रछाया में जो सुख है, वह कहीं नहीं है । माता के तुल्य दूसरा सहारा नहीं है, माता सदृश अन्य कोई रक्षक नहीं है तथा बच्चे के लिए मां के समान दूसरी कोई प्रिय वस्तु नहीं है ॥३१॥

वह गर्भाशय में धारण करने के कारण **धात्री**, जन्म देने के कारण **जननी**,। शिशु का अङ्गवर्धन (पालन-पोषण) करने से **अम्बा** तथा वीरसंतान क प्रसव करने के कारण **वीरसू** कही गई है ।३२॥

६ माता से बड़ी कोई चीज नहीं है । यह आकाश से ज्यादा असीमित एवं धरती से ज्यादा विस्तृत है । माता अगर चाहे तो अपने पुत्र को निश्चय ही महावीर, बुद्ध, राम और कृष्ण बना सकती है ।

६ राजा ऋतुध्वज की पत्नी मदालसा अत्यन्त विदुषी और सुसंस्कृत नारी थी। एक दिन उसके बड़े पुत्र को किसी ने पीट दिया। कुमार रोता हुआ घर आया और बोला—माँ ! मैं राजकुमार हूँ, फिर भी मुझे अमुक साधारण नागरिक ने पीट दिया अतः आप उसे उचित दण्ड देने की व्यवस्था करें।

मदालसा ने पुत्र के आँसू पोंछ कर कहा—पुत्र, तुम आत्मा हो, आत्मा की प्रकृति नाम से कलुषित नहीं हो सकती। राजकुमार तो तुम्हारी उपाधिमात्र है। अतः तुम्हें उसका अभिमान नहीं होना चाहिए। तुम्हारा शरीर तो पंचभौतिक है। वह तुम्हारा तो है नहीं; फिर इस पर चोट लगने से रोते क्यों हो ?

राजकुमार को ज्ञान हो गया और वह सन्यासी बन गया। इस प्रकार उसकी शिक्षा से तीन पुत्र संसार से विरक्त हो गये। एक दिन महाराज ऋतुध्वज ने कहा—महारानी ! हमारे तीन पुत्र तो सन्यासी बन गये। अब तुम चौथे राजकुमार अलर्क को ऐसी शिक्षा दो, जिससे वह तीनों भाईयों का अनुकरण करके सन्यासी न बने। अगर वह भी सन्यासी बन गया तो यह राज्य कौन संभालेगा ? मदालसा ने पति की आज्ञा शिरोधार्य की और चौथे पुत्र को राजनीति की शिक्षा दी। परिणाम यह हुआ कि अलर्क राजनीति में निपुण हो गया।

—'**अर्चना और आलोक**' से संकलित

७ दी फ़्यूचर डेस्टीनी आफ दी चाइल्ड इज आलवेज दी वर्क आफ दी मदर। —**नेपोलियन बोनापार्ट**

बालक का भाग्य सदैव उसकी माता के द्वारा निर्मित होता है।

८ उपाध्यायान् दशाचार्य, आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रं तु पितॄन् माता, गौरवेणातिरिच्यते ॥

—**मनुस्मृति २।१४५**

गौरव की दृष्टि से उपाध्यायों से दश गुना श्रेष्ठ आचार्य है, आचार्य से सौ गुना श्रेष्ठ पिता है और पिता से हजार गुनी श्रेष्ठ माता है।

९ क्या माँ बच्चे की सेवा की रिपोर्ट छापने जाती है ? यदि छपाने लग जाये तो "थैंक यू" कहकर उसके ऋण से बरी हो सकते हैं ।

१० कड़वा बोली मायड़ी ने मीठा बोला लोक ।

—राजस्थानी पद्य

११ माइतां री गाल्यां, घी री नाल्यां ।

- जीमणो माँ रै हाथ सूं, हुओ चाहे जहर ही,
धीणो भैंस रो, हुवो चाहे सेर ही,
बैठणो छायां में, हुवो चाहे कैर ही,
चालणो सड़क रो, हुवो चाहै फेर ही,
बसणो भायां में, हुवो चाहे वैर ही ।

—राजस्थानी कहावतें

१२ माँ ते माँ बीजा संसार ना बा ।
ओरमान मां, ते माथा नो घा । —गुजराती कहावतें

१३ **माता और पत्नी में अन्तर—**

- वायड़ी जुवे लावतो नें मां जुवे आवतो ।
- जणनारी ते जीव आपवानी ने परणनारी ते पोक मूकवानी ।
- मां रुए बारमास, बायड़ी रुए मास-छः मास अनें बहिन रुए बार-तेहवार ।

—गुजराती कहावतें

१४ **पांच माताएं—**

राजपत्नी गुरोः पत्नी, मित्र-पत्नी तथैव च ।
पत्नीमाता स्वमाता च, पञ्चैता मातरः स्मृताः ।

—चाणक्यनीति ५।२३

राजा की रानी, गुरु की स्त्री, मित्र की स्त्री, पत्नी की माता और अपनी माता—ये पांच माताएं मानी गई हैं ।

१५ **चार गुरु-पत्नीवत् पूज्य—**

मातृष्वसा मातुलानी, श्वश्रूरथ पितृष्वसा ।
संपूज्या गुरुपत्नीवत्, समास्ता गुरुभार्यया ।

—मनुस्मृति २।१३१

मौसी, मामी, सास एवं बुआ—ये चारों गुरु-पत्नी के समान हैं अतः उसी तरह इनकी पूजा करनी चाहिए !

१६ कृपण माता एवं पुत्र—

पुत्र—मां दूध ?

माता—बेटा ! बारै-बारै कूद !

पुत्र—मां, दही ?

माता—तनै आ बात कुण कही ?

पुत्र—मां ! घी ?

माता—म्हारो निकल जावेला जी ।

पुत्र—मां ! छा ?

माता—बेटा ! धाप-धाप खा ! —**राजस्थानी रूपक**

१७ पृथ्वी माता—

(क) माता पृथ्वी महीयम् ।

—**ऋग्वेद** १।१६४।३३

यह विशाल पृथ्वी हमारी माता है ।

(ख) माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः ।

—**अथर्ववेद** १२।१।१२

पृथ्वी मेरी माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूं ।

१८ अधिक एवं अल्प आयु की माताएँ—

वर्तमान विश्व में सबसे कम आयु की मां छह वर्ष की बालिका बनी है जबकि सांतियागो की एक ९० वर्षीय महिला सबसे अधिक आयु में मां बनी । इस महिला ने दो बार शादी की है तथा २३ बच्चों को जन्म दिया है ।

—**नवभारत ७ सितम्बर १९७१**

पिता

१ जनिता चोपनीता च, यस्तु विद्यां प्रयच्छति ।
अन्नदाता भयत्राता, पञ्चैते पितरः स्मृताः ।।

चाणक्यनीति ५।२२

(१) पैदा करने वाला (२) यज्ञोपवीत आदि संस्कार करनेवाला (३) अन्न देनेवाला (४) विद्या पढ़ानेवाला (५) भय से रक्षा करने वाला—ये पांच पिता माने गए हैं ।

२ ज्येष्ठो भ्राता पिता वापि, यश्च विद्यां प्रयच्छति ।
त्रयस्ते पितरो ज्ञेया, धर्मे च पथिवर्तिनः ।।

—**वाल्मीकिरामायण ४।१८।१३**

धर्म-मार्ग में चलने वाले के लिए ज्येष्ठ-भ्राता, पिता और विद्या देने वाला गुरु--ये तीनों ही पिता हैं ।

३ सर्वत्र जयमन्विच्छेत्, पुत्रादिच्छेत् पराजयम् ।

मनुष्य को सभी जगह जय की इच्छा करनी चाहिए, किंतु अपने पुत्र से पराजय की इच्छा करनी चाहिए । पुत्र अपने से उत्कृष्ट हो यह कामना करनी चाहिए ।

४ पुत्रात् पराजयो द्वितीयपुत्रजन्म । —**श्रुति**

पुत्र से पराजित होना द्वितीय पुत्र-जन्म के समान आनन्द का कारण माना गया है ।

५ न पुत्रायत्तमैश्वर्यं, कुर्यादार्यः कथंचन ।
पुत्रार्पितप्रभुत्वोऽभूद्, धृतराष्ट्रस्तृणोपमः । —**क्षेमेन्द्र**

आर्यपुरुषों को अपना ऐश्वर्य पुत्रों के हाथ में कभी नहीं सौंपना चाहिए । दुर्योधन को अपनी सत्ता सौंपकर धृतराष्ट्र तृण के समान निकम्मा हो गया ।

६ मन जाने आप, माई जाने बाप । —**बंगला कहावत**

स्वयं कैसा है—यह अपना मन ही जान सकता है और बाप कौन है—यह माता जान सकती है ।

माता-पिता

१ माता गुरुतरा भूमेः, खात् पितोच्चतरस्तथा। —महाभारत

यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा कि पृथ्वी से भारी क्या है और आकाश से ऊँचा क्या है ?

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—पृथ्वी से भारी माता है और आकाश से ऊँचा पिता है।

२ न सुप्रतिकरं तत्तु, मात्रा-पित्रा च यत्कृतम्।

—वाल्मीकिरामायण ६।१११।९

माता-पिता ने जो कुछ किया है, उसका बदला नहीं चुकाया जा सकता।

३ पितरि प्रीतिमापन्ने, प्रसन्ना सर्वदेवताः। —इतिहाससमुच्चय

माता-पिता के प्रसन्न हो जाने पर सभी देवता प्रसन्न हो जाया करते हैं।

४ व बिल् बालि दैनि इह् सानन्। —कुरान १७।२३

माता-पिता से नेकी करो !

५ माता-पिता को मत झिड़को बल्कि उनसे अदब की बात करो !

—कुरान १७।२३

६ जो अपने माता-पिता को कोसता है, उसका दिया बुझ जाता है।

—पुरानी बाइबिल नविश्ते नीतिवचन २०।२०

७ जिस आंख से कोई अपने माता-पिता पर अनादर की दृष्टि करे सम्मान के साथ अपनी माता की आज्ञा न माने, उस आंख को तराई के कौवे खोद-खोद निकालेंगे और उकाब के बच्चे खा डालेंगे। —पुरानी बाइबिल नविश्ते नीतिवचन ३०।१७

८ **माता-पिता में अन्तर—**

- मां नां रेंटिया मां समाय पण बापनां राज्य मां न समाय।
- मां ते मायो, बाप ते खाटला नों पायो।
- मां ने पानो चढ़े पण बाप ने नहिं। —गुजराती कहावतें

२२ पुत्र के प्रति माता-पिता का कर्त्तव्य

१ पुत्राश्च विविधैः शीलै-र्नियोज्याः सततं बुधैः ।
नीतिज्ञाः शीलसम्पन्ना, भवन्ति कुलपूजिताः ॥१०॥
माता शत्रुः पिता वैरी, येन बालो न पाठितः ।
न शोभते सभामध्ये, हंसमध्ये बको यथा ॥११॥
लालनाद् बह्वो दोषा—स्ताडनाद् बह्वो गुणाः ।
तस्मात् पुत्रं च शिष्यं च, ताडयेद् न तु लालयेत् ॥१२॥

—चाणक्यनीति २

बुद्धिमानों को चाहिये कि वे अपने पुत्रों को शुभ गुणों में लगायें क्योंकि शील-गुण सम्पन्न पुत्र कुल में पूजित होते हैं ॥१०॥

वह माता शत्रु है और पिता वैरी है, जिसने अपने पुत्र को नहीं पढ़ाया। अपठित पुत्र हंसों में बगुले की तरह शोभा नहीं पाता, बच्चों का लाड़-प्यार करने में अनेक दोष हैं एवं ताड़न करने में अनेक गुण हैं अतः माता-पिता एवं गुरुओं को चाहिए कि वे अपने पुत्रों और शिष्यों का लाड़-प्यार न करके उनको ताड़ना-तर्जना देते रहें ।

२ लालयेत् पञ्च वर्षाणि, दश वर्षाणि ताडयेत् ।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे, पुत्रे मित्रवदाचरेत् ।

—चाणक्यनीति ३।१८

पाँच वर्ष तक पुत्र का लाड करना चाहिए, फिर दस वर्ष उसे ताड़ना-तर्जना देनी चाहिए किन्तु सोलह वर्ष का हो जाने के बाद उसके साथ मित्र का व्यवहार करना चाहिए ।

३ हलायां सूं दाल जाय, लडायां सूं पूत जाय ।

—राजस्थानी कहावत

२३ संतान

१ अन्तःकरणतत्वस्य, दंपत्योः स्नेहसंश्रयात्।
आनन्दग्रन्थिरेकोऽय-मपत्यमिति बध्यते ॥

—उत्तररामचरित्र ३।१७

पति-पत्नी के अन्तःकरण की एक आनन्दग्रन्थि अपत्य-संतान के रूप में बांधी जाती है, क्योंकि उसमें दोनों का स्नेह केन्द्रित रहता है।

२ पुण्यवन्तो हि संतानं, पश्यन्त्युच्चैः कृतान्वयम्।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

वंश को उन्नत करने वाली सन्तान पुण्यवान व्यक्तियों को ही मिलती हैं।

३. **अच्छी-बुरी संतान की उत्पत्ति**—जयपुर के महाराजा जयसिंह की उत्कट अभिलाषा थी कि उनके अनुपम संतान उत्पन्न हो! इस विषय में उन्होंने राज-पुरोहित से सलाह ली। पुरोहित ने परामर्श दिया कि आप अत्यन्त सुयोग्य संतान चाहते हैं तो आपको शुभ मुहूर्त के सिवा महारानी जी से मिलना ही नहीं चाहिए। राजा ने इस बात को स्वीकार किया। कुछ समय पश्चात् राजा के घर पुत्र का जन्म हुआ। राजकुमार का नाम विजयसिंह रखा गया। विजयसिंह अत्यन्त कुशाग्रबुद्धि व होनहार था। दस वर्ष की आयु में ही उसने अपनी उम्र के लिहाज से अत्यधिक ज्ञानार्जन कर लिया। राजा-रानी को इस बात से भारी प्रसन्नता होती थी। किन्तु दुःख सिर्फ इतना ही था कि राजकुमार विजयसिंह के पश्चात् शुभ मुहूर्त के अभाव में उनके कोई अन्य सन्तान नहीं हुई।

संयोगवश एक दिन राजपुरोहित की पत्नी महल में आ गई। बात ही बात में महारानी ने उससे पूछ लिया कि आपके कितने बच्चे हैं? उसने कहा—दस! सुनकर महारानी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा यहां तो मुहर्त के अभाव में दस वर्ष से संतान नहीं हैं और पुरोहित के

निरंतर बच्चे होते जा रहे हैं। महाराज से भी इस बात का जिक्र किया गया। उन्होंने रहस्य जानने के लिये पुरोहित को राजसभा में बुलाकर पूछा। पुरोहित ने इतना ही कहा—राजन्! एकबार राजकुमार को बुलवाइये! राजा ने ज्योंही उसे बुलाया दौड़ता हुआ आकर वह पूछने लगा—क्या आज्ञा है पिता जी? राजा ने पुरोहित के संकेतानुसार कहा—कुछ नहीं, जाकर अपना काम करो। राजकुमार सहर्ष चला गया। किन्तु उस दिन राजकुमार की परीक्षा होनी थी, अतः महाराज ने उसे एक-सौ सोलह बार बुलवाया। राजकुमार बिना किसी शिकायत के मुस्कराता हुआ आता गया और लौटता गया। अपने पुत्र के सौम्य व्यवहार को देखकर महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए।

इसके बाद पुरोहित ने कहा—महाराज! अब मेरे पुत्रों को बुलवाइये। राजा ने नौकर को भेजा और कहलवाया कि तुम्हारे पिताजी बुला रहे हैं। पुरोहित के लड़के गली में खेल रहे थे। पिता के आह्वान पर उनमें से कोई नहीं आया, उल्टे नौकर को गालियाँ देकर भगा दिया। पुरोहित ने दुबारा नौकर को भेजकर हर हालत में ले आने का आदेश दिया। पर जिस समय नौकर उन बच्चों को घसीट कर लाया, सभा में कुतूहल व्याप्त हो गया। क्योंकि सारे असंस्कारी बच्चे मलिन व फटे वस्त्रों में घिनौना शरीर लिये चीखते-चिल्लाते आये थे। उन्हें देखकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने पुरोहित से पूछा—यह क्या बात है पुरोहितजी? पुरोहित ने कहा—महाराज! यह सब बिना मुहूर्त से उत्पन्न हुई संतान है।

—'**अर्चना और आलोक**' से संकलित

२४ अधिक संतान कष्ट का कारण

१ बहुप्रजा निर्ऋतिमाविवेश।

—ऋग्वेद १।१६४।३२

अधिक संतान वाला घोर कष्टों का अनुभव करता है।

२ बहुप्रजाः कृच्छ्रमापद्यते इति परिव्राजकाः।

—निरुक्त २८

ऋषियों का कहना है कि बहुत संतानवालों का जीवन दुःखमय होता है।

३ जाझा खोरड़ा, जाझा ढोरड़ा ने जाझा छोरड़ा ए त्रण दुःखनां कारण।

० एकड़े एक, बगड़े बे अने तगड़े त्रण।

—गुजराती कहावतें

४ बहुपरिवारी बहुदुःखी।

—राजस्थानी कहावत

५ कहा जाता है कि महाविदेह क्षेत्र में परस्पर झगड़ा होने पर लोग एक-दूसरे को शाप देते हैं कि जा! जा! दुःषम काल में भरत क्षेत्र के अन्दर जन्म लेना और बहु परिवारी हो जाना।

—धनमुनि

६ सब वस्तुओं का उत्पादन करो, पर संतान वृद्धि मत करो!

— जवाहरलाल नेहरू

२५ अधिक सन्तान वाले माँ-बाप

१ **दस वर्ष में दस बालकों की माता**—लिंकनशायर (इग्लैण्ड) परगने में एक गांव के पास खेत में रहने वाली स्त्री का नाम श्रीमती **लोटीराइट** है। १६ वर्ष की आयु में इसकी शादी हुई थी और २७ वर्ष की आयु तक इसने दस बालकों (प्रतिवर्ष एक) को जन्म दिया। नौ पुत्र एवं एक पुत्री है। सबसे छोटा बच्चा दस महीनों का है। छः बालक पढ़ने जाते हैं एवं शेष चार घर में खेलते रहते हैं। जब दसों बालक इकट्ठे होते हैं, उस समय का दृश्य देखने लायक होता है।

—डेलीमिरर पत्र में मेरी ब्राउन के लेख से

२ **बत्तीस वर्ष में बत्तीस बच्चों की माँ**—(ब्रासिलिया २३ नवम्बर) झुग्गी में रहने वाली एक ४५ वर्षीय महिला ने मंगलवार के दिन ३२वें बच्चे को जन्म दिया। इसकी शादी १४ वर्ष की आयु में हुई एवं शरीर का वजन ३ मन ७॥ सेर है। **—हिन्दुस्तान २४ नवम्बर १९६७**

३ रूस की एक औरत श्रीमती **फीडरवीसाल्ट** ने ६९ बच्चों को जन्म दिया। वह केवल २७ बार प्रसूति पलंग पर लेटी उसने १६ बार जुड़वें बच्चे, ७ बार एक साथ तीन-तीन बच्चे ४ बार एक साथ चार-चार बच्चे उत्पन्न किए। सन् १८७२ में उसका देहान्त हुआ। **—नवनीत जनवरी १९६८**

४ पन्द्रहवीं शताब्दी में एक जर्मन महिला ने ५३ बच्चों को जन्म दिया था—३८ बालकों एवं १५ बालिकाओं को। उसकी स्मृति में सन् १९३५ में बर्टमवर्ग में एक पत्थर का स्मारक बनाया गया था।

० स्पेन के बालाडोलिड नगर में सन् १९२६ में ६८ वर्ष की वृद्धा के २९वां पुत्र पैदा हुआ था। कहते हैं कि ५० वर्ष पार करने पर ३,३०० स्त्रियों के पीछे एक बालक पैदा होता है। प्रतिवर्ष संसार में ३,३६,००० जुड़वां, ३७,००० तिगड्ड़े और ६५ चौगड्ड़े पैदा होते हैं।

—मानो-न मानो पृ० १०२

५ १२ जून १९७१ को आस्ट्रेलिया में एक २९ वर्षीय महिला ने अस्पताल में एक साथ नौ बच्चों को जन्म दिया। नौ में से सात बच्चे जिंदा हैं (दो मृत पैदा हुए थे) जिनमें तीन लड़के और चार लड़कियां हैं। बच्चे बिल्कुल अपरिपक्व हालत में हैं। उन्हें 'इनक्युवेटर' में रखा गया है। माता की हालत सन्तोषजनक है। नौ बच्चे एक साथ पैदा होने की यह पहली घटना बताई जाती है। इसके पूर्व १९६७ में मैक्सिको में एक महिला के ८ बच्चे पैदा हुए थे, लेकिन वे सब १४ घण्टे के अन्दर मर गये। (उपरोक्त बच्चे भी ३-४ दिनों में मर गये।)

—नवभारत टाइम्स १४ जून १९७१

६ अदीस अबावा में एक औरत के पूरे तीन साल दस मास तक गर्भ रहा। इस ४१ वर्षीय महिला ने अन्त में एक स्वस्थ देह वाली बच्ची को बिना किसी तकलीफ के जन्म दिया। जच्चा तथा बच्चा दोनों ही स्वस्थ हैं। डाक्टरों ने बताया कि इतने लम्बे अरसे तक गर्भवती बने रहने पर वह औरत बीच-बीच में घबरा उठती थी।

—सरिता अंक ३४९ अक्तूबर (द्वितीय) १९६९ पृष्ठ १३३

७ १९०० **बच्चों का बाप**—मराको का सुल्तान **अबा अल्हसन** ने १९०० बच्चे पैदा किए। नब्बे वर्ष की आयु में जब वह मरा तब सबसे छोटा बच्चा पांच साल का था।

—चेतना १९६४ जुलाई ५ वर्ष ८ अंक २०

८ डर्बन (अफ्रीका) के नब्बे वर्षीय **छोटो सेथून्त्सा** के अपनी २० पत्नियों से २०० बच्चे हैं। वह अभी भी और बच्चों का बाप बनने को उत्सुक है। उसका ज्येष्ठ पुत्र है ७० वर्ष का। उसके १५० के करीब बच्चे हैं, वयस्क और ३० पढ़ रहे हैं हाईस्कूल में।

—हिन्दुस्तानी २३ जनवरी १९७०

९ **अपनी दस पीढियों का प्रपितामह आह क्की**—जब १७९० ई० में चीन के सम्राट् ने अपने साम्राज्य में सबसे अधिक सुखी पुरुष की खोज करवाई तो उसके सम्मुख **आह क्की** को उपस्थित किया गया। दसवीं पीढ़ी में उसके १३० जीवित सन्तानें थीं। **—मानो-न मानो पृष्ठ ७३**

२६ पुत्र

१ पुंनाम्नो नरकाद् यस्मात्, त्रायते पितरं सुतः ।
तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः, स्वयमेव स्वयंभुवा ।।

—मनुस्मति ९।१३८

'पुं नाम' के नरक से अपने माता-पिता की रक्षा करता है अतएव स्वयंभू ने उसको पुत्र कहा है ।

२ य उत्पन्नः पुनीते पितुर्वंशं स पुत्रः ।

—नीतिवाक्यामृत ५।११

जो उत्पन्न होकर पिता के वंश को पवित्र करता है, वह पुत्र है ।

३ पुनाति पितुराचारानुवर्तितया आत्मानमिति पुत्रः ।

—उत्तराध्ययन टीका अ० १

पिता के सदाचार का अनुसरण करके आत्मा को पवित्र करता है अतः वह पुत्र कहलाता है ।

४ पुत्रः पिण्डप्रयोजनः, पुत्रप्रयोजना दाराः ।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

पिण्ड-दान के लिए पुत्र एवं पुत्र प्राप्ति के लिए पत्नी आवश्यक है ।

५ न पुत्रात् परमो लाभः ।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

पुत्र से बढ़कर कोई लाभ नहीं है ।

६ पुत्रोदयाद् माद्यति को न हर्षात् ?

—कुमारसंभव

पुत्र पैदा होने पर हर्ष से कौन नहीं फूलता ?

७ दी वाले ते दीकरा, छो वाले ते छोकरा

० दी प्रमाणे दीकरा ने वेला प्रमाणे बहू

० पुत्र नां लक्षण पारणाँ मां थी ने वहूनां वारणा मां थी

० एक दीकरो दीकरा मां नहिं ने सो रुपिया पूंजी मां नहिं

० कात्या तेनां सूत, जन्म्यां तेना पूत

० थर-थरती जांघे जाण्यां ते दीकरा

० पेटनां ते दीकरा, पारके पुत्रे सपूता न थवाय

—गुजराती कहावतें

८ फलका जेट का र बेटा पेट का

० पराया पूत कमा र थोड़ा ही देवै ?

९ पूर्वे वयसि पुत्राः पितरमुपजीवन्ति
अन्तिमे वयसि पुत्रान् पितोपजीवति

—गोपथब्राह्मण १।४।१०

प्रथमवय (बाल्यकाल) में पुत्र पिता के सहारे जीते हैं, एवं अन्तिम वय (बुढ़ापे) में पिता पुत्रों के सहारे जीता है।

१० पुत्रादपि भयं यत्र-तत्र सौख्यं हि कीदृशम् ।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

जहां पुत्र से भय होने लगता है, वहां सुख कैसा !

११ पुत्रः शत्रुरपण्डितः ।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

मूर्ख पुत्र शत्रु के समान है।

२७ माता-पिता के अनुरूप पुत्र

१ आहाराचारचेष्टाभि-र्यादृशीभिः समन्वितो ।
स्त्रीपुंसौ समुपेयेतां, तयोः पुत्रोऽपि तादृशः ।।

जिस प्रकार के आहार, आचार-विचार आदि के साथ स्त्री-पुरुष का समागम होता है, प्रायः उनकी सन्तान भी उसी प्रकार की होती है ।

२ तुख्मे-तासीर, सोहबते-असर ।

—पारसी कहावत

प्रत्येक में बीज की तासीर और सोबत का असर अवश्य रहता है ।

३ दिल्ली की बेगम के शाहजादा हुआ, वह कुछ श्याम वर्ण था । इधर राजमहल के नीचे रहने वाली एक पिंजारिन के भी पुत्र हुआ, वह गौर-वर्ण था । प्रसूतिकार्य से निवृत्त होकर एक दिन बेगम गवाक्ष में आ बैठी, शाहजादा उसकी गोद में था । पता पाकर पिंजारिन भी अपने पुत्र को लेकर बेगम के सामने आ गई । उसके पुत्र को देखकर बेगम के दिल में विचार हुआ कि मेरा काला पुत्र दिल्ली के तख्त पर अच्छा नहीं लगेगा । बस, इस विचार के साथ ही उसने तत्काल शाहजादे को देकर उसका गोरा बेटा ले लिया । पिंजारिन का बेटा चाहे अब शाहजादा बन गया लेकिन वंश की तासीर कैसे जा सकती थी । कुछ बड़ा होने पर वह एक धुनकी लाकर रूई पींजने लगा एवं राजमहल में धिक धूं-धिक-धूं करने लगा ।

इधर शाहजादा पिंजारिन के घर रहकर भी अपने साथी बालकों को वजीर, कोटवाल, सिपाही आदि बनाता था और खुद बादशाह बनकर उन पर हुक्म चलाता था । एक दिन बादशाह घूमकर आ रहा था । उसे रोकते हुए एक बालक सिपाही ने कहा—ओबे घोड़ेवाले ! यहाँ हमारे बादशाह का दरबार जुड़ रहा है, रास्ता बन्द है, जरा उधर से

चला जा। दिल्लीपति ने ताज्जुब होकर सारा हाल पूछा। पिंजारिन का पुत्र सुनकर सन्देह हुआ और महल में आया तो धिक-धूं-धिक धूं की आवाज सुनाई दी। बस, नंगी तलवार लेकर बेगम से सवाल किया— बोल ! यह किसका है ? बेगम ने पहले तो आनाकानी की, लेकिन फिर घबराकर सच्ची बात कह दी। बादशाह ने कहा—देख ! वह गलियों में भी बादशाही भोग रहा है और यह राजमहल में धिक धूं-धिक धूं कर रहा है। फिर शाहजादे को अपना युवराज बनाया और पिंजारिन के पुत्र को कुछ देकर विदा किया।

—**श्री कालुगणी से श्रुत**

४ नागोर के सेठ ने बुढ़ापे में ब्याह किया। मरने के बाद पुत्र हुआ। विवाद बढ़ा। जोधपुर नरेश ने बच्चे के पसीने द्वारा न्याय किया। सेठ कांदा-पाक खाता हुआ मरा था। बच्चे के पसीने में भी उसी की गन्ध आ रही थी।

५ बीमार किसान ने सूअर का कान चीर कर खून निकाला एवं उसके प्रयोग से वह नीरोग हुआ। उसकी गर्भवती स्त्री ने यह दृश्य देखा ! फलस्वरूप बच्चा खण्डित कर्ण हुआ।

६ मां पर पूत पिता पर घोड़ा बहुत नहीं तो थोड़ा-थोड़ा

—**हिन्दी कहावत**

७ लकड़ी जिसी पेटी, मां जिसी बेटी।

- छाली जिसो टेटो र बाप जिसो बेटो।
- ईस जिसा पाया र मा जिसा जाया।

—**राजस्थानी कहावतें**

८ ठाम तेवी ठीकरी, मां तेवी दीकरी।

—**गुजराती कहावत**

९ लाइक फादर लाइक सन, लाइक ट्री लाइक फ्रूट।

—**अंग्रेजी कहावत**

बाप जैसा बेटा, वृक्ष जैसा फल।

लाइक प्रीस्ट लाइक पीप्युल ।

—अंग्रेजी कहावत

जेसा गुरु वैंसा चेला

- पाणी तेवा रेला ने गुरु तेवा चेला ।

६ देवता नां छोकरा कोयला, छोकरी राखोड़ी ।

—गुजराती कहावत

- उठ चाली ते बोता बताली ।
- सप्प दा बच्चा सपोलिया ।
- जमदीयां सूलां दे मुंह तिक्खे ।

—पंजाबी कहावतें

बुरे माता-पिता की औलाद जन्म से ही बुरी होती है ।

पुण्यों से पुत्र प्राप्ति

१ उत्पतन् निपतन् रिङ्खन् हसन् लालावलीर्वमन् ।
कस्याश्चिदेव धन्यायाः, क्रोडमायाति नन्दनः ।

उछलता, गिरता, चलता, हंसता एवं मुँह से लालाएँ गिराता हुआ पुत्र किसी भाग्यवती माता के ही गोद में आता है।

२ दिग्वाससं गतव्रीडं, जटिलं धूलिधूसरम् ।
पुण्याधिका हि पश्यन्ति, नन्दनं कुलनन्दनम् ।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ ६३

नग्न, लज्जारहित, जटाधारी एवं धूलि से भरा हुआ है शरीर जिसका—ऐसा कुल को आनन्दित करनेवाला पुत्र पुण्यवान व्यक्ति ही देख सकता है।

३ उरोरुहादुद्गमितैः पयोभि-रापूर्य केल्या निजमास्यगर्भम् ।
फूत्कृत्य मातुर्वदने हसन्तं, तनूभवं पश्यति कोपि धन्यः ।

सुभाषितरत्न-भांडागार पृष्ठ ६३

माँ के स्तनों से निकले हुए दूध से अपने मुँह को भरकर एवं माता के वदन पर उसकी पिचकारी छोड़कर हँसता हुआ पुत्र कोई भाग्यशाली ही देख सकता है।

२६ पुत्र के बिना

१ पुत्रहीनं गृहं शून्यम्।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

बिना पुत्र का घर शून्य है।

२ जेहने घर नहिं छे सन्तान, तेनुं घर छे मसाण समान।

—रामजशरसायण

३ घी बिना लूखो कंसार, दीकरा बिना सूनो संसार।
जेने घर पारणुं, तेनुं शोभे वारणुं।

—गुजराती कहावतें

४ अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैव च नैव च।
येन केनाप्युपायेन, कार्यं जन्म सुतस्य वै।

गरुडपुराण-उत्तरखंड २९।४

अपुत्र की गति नहीं होती। स्वर्ग तो उसे मिलता ही नहीं। अतः जिस-किसी भी उपाय से पुत्र उत्पन्न करना चाहिए।

५ **पुत्र के बिना भी गति—**

(क) मृते भर्तरि साध्वी स्त्री, ब्रह्मचर्ये व्यवस्थिता।
स्वर्गं गच्छत्यपुत्रापि, यथा ते ब्रह्मचारिणः॥

— मनुस्मृति ५।१६०

जो पतिव्रता स्त्री पति के मरने पर ब्रह्मचर्य में स्थिर रहती है, वह पुत्र-हीन होने पर भी ब्रह्मचारी पुरुषों की भाँति स्वर्गलोक को जाती है।

(ख) अनेकानि सहस्राणि कुमार-ब्रह्मचारिणाम्।
दिवं गतानि विप्राणा-मकृत्वा कुलसन्ततिम्।

—मनुस्मृति ५।१५९

हे राजेन्द्र ! हजारों कुमार ब्रह्मचारी रह कर एवं सन्तान पैदा किये बिना ही मर कर स्वर्ग को प्राप्त हो गये।

३० पुत्रों के लिए अनर्थ

१ सहारनपुर में पुत्र के लिए किसी के कहने से एक स्त्री ने आग लगा दी, आधा शहर जल गया।

२ मुजफ्फरनगर के एक कस्बे में एक स्याने ने खून से स्नान करने से पुत्र होना बतलाया। छः वर्ष का एक बच्चा पाँच सौ रुपयों में खरीदा गया। स्वयं पिता ने उस बच्चे को मारा। सब पकड़े गए। बाप को काला पानी हुआ।

३ सिरसे में तीन सेठानियाँ बेटों की भूखीं नग्न होकर मसानों में मन्त्रों का जाप करने लगीं। उसी दिन एक सेठ का पुत्र मर गया। उन दिनों शहर में डाकिनियों का उपद्रव था। मृत बच्चे के बाप ने एक ग्वाला मसानों में रखा। उसने डाकिनियाँ समझ कर लाठी से सेठानियों को बुरी तरह से पीटा जिससे उन्हें भयंकर चोट आई।

—श्रुति के आधार पर

४ बिहार-प्रान्त में योगी के कहने से सेठानी ने बच्चे के खून से स्नान किया, पुत्र-पौत्र हुए। आखिर सन् १९३४ के भूकंप में सब मारे गये।

—कल्याण के आधार से

५ **सन्तान प्राप्ति के लिए दो बच्चों की हत्या**—नोहर (राजस्थान) में २३ अगस्त को तहसील के एक कुएँ में से बदबू आयी। देखा तो दो लाशें निकलीं, एक चार वर्षीय लड़की **सरिता** थी तथा एक छः वर्षीय लड़का **नरेश** था। दोनों के सिर कटे हुए थे। वे कन्हैयालाल पेड़ीवाल के पुत्री एवं पुत्र थे, जो ३८ दिन पहले १५ जुलाई को लापता हुए थे। इस मामले में तीन व्यक्ति गिरफ्तार किये गये हैं। भीखाराम पुजारी, तुलछां (उसकी पत्नी) और सरदारारास डाकोत। तुलछां निःसन्तान थी तथा डाकौत ने कालीदेवी को खुश करने के लिए नर-बलि देने की सलाह दी।

बच्चों का ननिहाल सूरतगढ़ था। तुलछां भी वहाँ की थी। इसलिए बच्चे उसे मोसी कहा करते थे और कई बार उसके घर चले जाया करते थे। एक दिन सांझ को घर आए देखकर पति-पत्नी ने पापी डाकौत को भी बुला लिया। फिर शराब पीकर हत्यारों ने बच्चों की हत्या कर दी। और सिर काट कर लाशें कुएँ में डाल दीं। यह भी कहा जाता है कि कलेजा तुलछां को खिला दिया गया। गिरफ्तार होने के बाद हत्यारों ने अपना अपराध भी स्वीकार कर लिया। अब वे हवालात में बन्द हैं।

—हिन्दुस्तान २७ अगस्त १९७१

६ पुत्र नहीं जीने के कारण एक स्त्री बच्चे को जमीन में गाड़ आई, वह मिट्टी खोदते समय कुम्हार को मिला !

३१ सुपुत्र

१ सत्पुत्र एव कुलसद्मनि कोऽपि दीपः ।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

सत्पुत्र कुलरूप घर में दीपक के समान होता है ।

२ प्रदोषे दीपकश्चन्द्रः, प्रभाते दीपको रविः ।
त्रैलोक्ये दीपको धर्मः, सुपुत्रः कुलदीपकः ।

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ-१६४

रात का दीपक चाँद है, दिन का दीपक सूर्य है, तीन लोक का दीपक धर्म है और कुल का दीपक पुत्र है ।

३ दुर्लभः क्षेमकृत् सुतः ।

—सुभाषितरत्नखण्ड मंजूषा

कल्याणकारी पुत्र मिलना कठिन है ।

४ एकेनापि सुवृक्षेण, पुष्पितेन सुगन्धिना ।
वासितं तद्वनं सर्वं, सुपुत्रेण कुलं तथा ।।१४।।
एकेनापि सुपुत्रेण, विद्यायुक्तेन साधुना ।
आल्हादितं कुलं सर्वं, यथा चन्द्रेण शर्वरी ।।१६।।

—चाणक्यनीति १६

सुगन्धित फूलों वाले एक ही सुवृक्ष से समूचा वन सुगन्धित हो जाता है । जैसे—सुपुत्र से कुल ।।१४।।

चन्द्रमा जैसे—अकेला ही रात को चमका देता है, वैसे एक ही विद्यावान सुपुत्र समूचे कुल को आह्लादित कर देता है । ।।१६।।

५ ऐंरी मां ऐनैं ही जण्यो है, ऐंरी मां ही सवा सेर सूंठ खाई है ।

—राजस्थानी कहावत

६ क्वचिदपि कर्मणि पितुराज्ञां नोल्लङ्घयेत् ।

—नीतिवाक्यामृत २४।८०

सत्पुत्र को चाहिए कि वह किसी भी काम में पिता की आज्ञा का उल्लंघन न करें ।

७ **मातृभक्त चाणक्य**—चाणक्य जब जन्मे थे, तभी उनके मुँह में तीन दाँत थे । जब वे बड़े हुए, उनकी माता ने एक ज्योतिषी से पुत्र के तीन दाँत होने का कारण पूछा । ज्योतिषी ने बताया--तुम्हारा पुत्र बड़ा होकर चक्रवर्ती राजा बनेगा ।

सुन कर माता उदास हो गयी । चाणक्य ने माता से उदासी का कारण पूछा । माँ ने बताया—बेटा ! ज्योतिषी ने जन्म से ही रहनेवाले इन तीन दाँतों का फल बताया है कि तुम चक्रवर्ती सम्राट् बनोगे । चाणक्य ने पूछ लिया तो इसमें क्या हर्ज है माँ ? माता ने कहा—चक्रवर्ती होकर तुम अपनी माँ को भूल जाओगे । राज-वैभव पाने के बाद तुम्हारे लिये माता का कुछ भी महत्त्व नहीं रहेगा ।

बालक चाणक्य ने माता की बात सुनी, पर उत्तर दिये बिना ही घर से बाहर चला गया और एक पत्थर लेकर लौटा । माता के देखते-देखते उसने पत्थर से अपने तीनों दाँतों को तोड़ डाला, जिनका शुभफल चक्रवर्ती होना था ।

—'**अर्चना और आलोक**' से संकलित

१ एकेन शुष्कवृक्षेण, दह्यमानेन वह्निना।
दह्यते तद्वनं सर्वं, कुपुत्रेण कुलं तथा॥

—चाणक्यनीति ३।१५

जैसे—अग्नि से जलता हुआ एक ही सूखा वृक्ष सारे वन को भस्म कर देता है, वैसे ही कुपुत्र कुल को नष्ट कर देता है।

२ कोऽर्थः पुत्रेण जातेन, यो न विद्वान् न धार्मिकः।
काणेन चक्षुषा किं वा, चक्षुः पीडैव केवलम्॥

—हितोपदेश-प्रास्तविका १२

उस पुत्र के जन्म से क्या लाभ, जो न तो विद्वान् हो एवं न धार्मिक हो। उस काणी आंख से क्या लाभ, जो केवल पीड़ा का ही कारण हो!

३ तनयेनापि किं तेन, कुलप्रलयकारिणा।
तेन हेम्नापि किं कार्य-मार्य! कर्णौ छिनत्ति यत्॥

कान काटने वाले सोने की तरह उस पुत्र से क्या लाभ, जो कुल का नाश करने वाला हो।

४ किं तया क्रियते धेन्वा, या न दोग्ध्री न गर्भिणी।
कोऽर्थः पुत्रेण जातेन, यो न विद्वान् न भक्तिमान्॥

—चाणक्यनीति ४।६

वह गाय क्या काम की, जो न तो दूध दे और न बियाये। उस पुत्र के जन्म से क्या लाभ, जो न तो विद्वान् हो एवं न भक्तिमान् हो।

५ निरुत्साहं निरानन्दं, निर्वीर्यमरिनन्दनम्।
मा स्म सीमन्तिनी काचिज्, जनयेत् पुत्रमीदृशम्॥

—हितोपदेश २।७

कोई भी स्त्री ऐसे पुत्र को उत्पन्न न करे, जो उत्साहहीन हो, आनन्द-हीन हो, बलहीन हो एवं दुश्मन को आनन्द देने वाला हो !

६ दाने तपसि शौर्ये च, यस्य न प्रथितं मनः ।
विद्यायामर्थलाभे च मातुरुच्चार एव सः ।।

—**हितोपदेश-प्रास्ताविका ७**

दान, तप, पराक्रम, विद्या एवं अर्थ-लाभ में जिसको यश नहीं मिला, वह पुत्र माता की विष्टा के समान है ।

७ जम्मे लालते बंडे कोले । —**पंजाबी कहावत**

कुपुत्र के जन्म की कोई खुशी नहीं होती ।

८ कपूत बेटो कांधनैं काम आवै ।

—**राजस्थानी कहावत**

३३ शत्रु के रूप में पुत्र

(क) संवत् २०१५ शेषकाल में चंड़ीगढ़ जाना हुआ। गुलाबचंद जैन का बंगला हमारा निवास स्थान था। वहां एक बूढ़े ने पूछा—क्या आपके तेरापंथ में कोई अपाहिजाश्रम या अनाथालय है ? यदि है तो मैं उसमें भरती होना चाहता हूँ। मैंने कहा—ऐसा कोइ संस्थान मेरे ध्यान में तो नहीं है। फिर मैं उस बंगले में गोचरी गया, वहां एक नेत्रहीन वृद्धा देखने में आई। दुपहर को मैंने मकान-मालिकन से पूछा—ये वृद्ध-वृद्धा कौन है ? पूछते ही बहन की आँखें डबडबा गईं एवं गद्-गद् स्वर से कहने लगी—गुरुदेव ! ये मेरे माता-पिता हैं। भाई ने इनको घर से निकाल दिया। मेरे से रहा नहीं गया अतः मैं इन्हें अपने घर ले आई। पता लगते ही भाई ने क्रुद्ध होकर कहा—क्यों लाई है इन दुष्टों को ? मेरे से प्रेम रखना है तो निकाल दे इन्हें घर से। अन्यथा तू मेरी बहन नहीं और मैं तेरा भाई नहीं। मेरा दिल उसी दिन खुश होगा, जिस दिन इनको भिखमंगों की तरह घर-घर भटकता देखूंगा। मैंने रोते हुए कहा—भाई, तू माने या न माने तेरी मर्जी ! जीते जी माता-पिता की दुर्दशा मैं तो नहीं देख सकती। जब तक मुझे दो रोटी मिलेंगी, इन्हें भी कुछ देती रहूँगी। महाराज ! भाई सख्त नाराज है, बोल-चाल एवं आना-जाना बंद कर रखा है। यह मेरी कर्म कहानी है। —**धनमुनि**

(ख) ऐसी माताएँ भी देखी गई हैं, जिनके चार-चार बेटे-बहुएँ हैं, फिर भी वे अलग रोटी पकाकर पेट भर रहीं हैं। ऐसी माताएँ भी अनेक हैं, जिन्हें बेटों के यहाँ बारी-बारी से रोटी खानी पड़ती हैं। दो-दो तीन-तीन महीनों के बाद एक घर से दूसरे घर जाकर रहना पड़ता है। ऐसे दृश्य भी देखने को मिले हैं कि एक बेटे के घर मां रहती है और दूसरे बेटे के घर बाप रहता है। बेचारे दोनों साथ भी नहीं रह सकते। —**धनमुनि**

३४ सुपुत्र-कुपुत्र

१ एकोऽपि गुणवान् पुत्रो, निर्गुणैश्च शतैर्वरः।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति, न च ताराः सहस्रशः ॥

—चाणक्यनीति ४।६

सौ गुणहीन पुत्रों से एक गुणी पुत्र श्रेष्ठ है। अकेला चन्द्रमा अंधेरा मिटा देता है किन्तु हजारों ताराओं से वह नहीं मिटता।

२ एकेनापि सुपुत्रेण, सिंही स्वपिति निर्भया।
सहैव दशभिः पुत्रै-र्भारं वहति गर्दभी ॥

—सुभाषितरत्नभांडागार पृष्ठ ९४

एक ही पुत्र के कारण सिंहनी निर्भय होकर सोया करती है और दस पुत्र होते हुए भी गदही बोझा ढोती रहती है।

३ किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः, शोकसन्तापकारकैः।
वरमेकः कुलालम्बी, यत्र विश्राम्यते कुलम् ॥

—चाणक्यनीति ३।१७

शोक-संताप करने वाले बहुत पुत्र उत्पन्न होने से भी कोई लाभ नहीं। कुल का आधारभूत एक पुत्र भी बहुत है, जिसके सहारे कुल टिकता है।

४ सौ कपूतों से एक सपूत अच्छा। —गांधी

५ एक हजारा सौए विचारा।

० एक उजालो, छत्तीसे खेंगार। —राजस्थानी कहावतें

० सौ कपूते बाप बांझियो। —गुजराती कहावत

६ कमाऊ पूत आवै डरतो, अणकमाऊ आवै लडतो।

० सिर बड़ो सपूत रो, पग बड़ो कपूत रो।
(सिर बड़ो सिरदार रो, पग बड़ो गिवार रो)।

० पूत कपूतां क्यूं धन संचै ?
पूत सपूतां क्यूं धन संचै ? —राजस्थानी कहावतें

३५ पुत्रों के प्रकार

१ चत्तारि सुता पन्नत्ता, तं जहा-अतिजाए, अणुजाए, अवजाए, कुलिंगाले ! —स्थानांग ४।१।२४०

चार पुत्र कहे हैं—

१ **अतिजात**—पिता से अधिक समृद्धिवान। जैसे—नाभि राजा से ऋषभ देव अधिक समृद्धिवान थे।

२ **अवजात**—पिता से हीन। जैसे—भरत से सूर्ययश हीन था।

३ **अनुजात**—पिता के समान। जैसे—महायश सूर्ययश के समान था।

४ **कुलाङ्गार**—कुल को कलंकित करने वाला। जैसे कण्डरीक। (इसी प्रकार चार शिष्य भी कहे हैं।)

२ मातृतुल्यगुणो जात-स्त्वनुजातः पितुः समः।
अतिजातोऽधिकस्तस्मा - दपजातोऽधमाधमः॥

—पञ्चतंत्र १।४२७

चार पुत्र कहे हैं—

१ **जात**—माता के समान गुणोंवाला।

२ **अनुजात**—पिता जैसा।

३ **अधिजात**—पिता से अच्छा।

४ **अपजात**—अधमाधम।

३ **पांच पुत्र—**

१ **न्यासानुबन्धि पुत्र**—यह सुन्दर, गुणवान एवं मधुरभाषी होता है किन्तु वस्त्र-भूषण-बीमारी आदि के बहाने से अपनी अमानत वसूल करके थोड़ी उमर में ही मर जाता है।

२ **ऋणानुबन्धि पुत्र**—यह निष्ठुर, निर्दय, कटुभाषी, छीन-छीन कर खाने वाला, रोकने पर गाली देने वाला, जुआरी, धूर्त, फिजूल खर्च करने वाला होता है एवं घर का मालिक बनकर मां-बाप को हैरान करता है।

३ **वैरानुबन्धि पुत्र**—यह बचपन से ही वैरी सा बना रहता है। खेल ही खेल में मां-बाप को मार-मारकर हंसता है एवं हैरान करता हुआ अंत में उन्हें जान से भी मार डालता है।

४ **उपकारानुबन्धि पुत्र**—यह विनीत, मिष्टभाषी, मन के अनुसार चलने वाला होता है।

५ **उदासीन पुत्र**—यह न तो कुछ देता है और न कुछ लेता है। न प्रेम एवं न द्वेष करता है, सदा उदासीन सा रहता है। (पुत्र की तरह प्रत्येक स्वजन पांच प्रकार के माने गए हैं।)

४ दस पुत्ता पन्नत्ता, तं जहा—अत्तए, खेत्तए, दिन्नए, विन्नए, उरसे, मोहरे, सोंडीरे, संबुड्ढे, उववाइए, धम्मंतेवासी।

—**स्थानांग १०।७६२**

दस प्रकार के पुत्र कहे हैं—

१ **आत्मज**—स्वयं के गर्भ से उत्पन्न।
२ **क्षेत्रज**—देवरादि के संयोग से उत्पन्न।
३ **दत्तक**—गोद लिया हुआ।
४ **विनियत**—जिसको ज्ञान पढ़ाया जाय।
५ **औरस**—जिस पर पुत्र के समान स्नेह हो।
६ **मौखर**—स्वार्थवश वाचाल बना हुआ।
७ **शौंडीर**—युद्ध आदि में हारा हुआ।
८ **संवर्द्धित**—जिसे भोजन आदि से पाला-पोषा हो।
९ **उपयाचित**—देवादि से मांगा हुआ।
१० **धर्मान्तेवासी**—धर्म के लिए निकट रहने वाला।

३६ पुत्री-कन्या

१ पुत्रीति जाता महतीह चिन्ता, कस्मै प्रदेयेति महान् वितर्कः।
दत्ता सुखं प्राप्स्यति वा नवेति, कन्यापितृत्वं खलु नामकष्टम्।

—पंचतन्त्र १।२२२

कन्या उत्पन्न होते ही पिता को बड़ी-भारी चिंता होती है। फिर किस को दी जायगी ? देने के बाद सुखी होगी या नहीं—ऐसा महान् वितर्क होता है वास्तव में कन्या पिता के लिए एक दुःख ही होती है।

२ जेने घर बेटी, तेनी गर्दन हेठी।

—गुजराती कहावत

३ बहु बोला बेट्यां घणी, दोय गाम अधवार।
त्यांनै कांईं मारसी, मार गयो करतार।

—राजस्थानी दोहा

४ अर्थो हि कन्या परकीय एव।

—अभिज्ञानशाकुन्तल

कन्या निश्चय ही दूसरों का धन है।

५ पेटी रखाय पण बेटी न रखाय।

- कन्या अने एंठु धान, बासी न रखाय।
- दीकरी ने गाय, दौरे त्यां जाय।

—गुजराती कहावतें

●●

पुत्री की विदाई

१ विदाई पर—

बड़ा ओखा ए धीयां दा तोरना ऐ,
ऐने हुँदियां बेजुबान धीयां ।
बाहों फड़्याते डोली चढ़ा दित्ता,
तुरजा दियां ने चुपचाप धीयां ।
निशानी गुड्डियां-पटोले ए छडड जावन,
घरों सोहरां दे टुरजान धीयां ।
पुत्तां कोलों प्यारियां होण भावें,
फेर भी धनपराया अखावन धीयां ।

० विदाई के समय पुत्री का निवेदन—

गल सुननी रानिए अंबड़िएनी !
तेरी छत्तर-छाया तले पलीहां मैं ।
खिली महकी मैं तेरे गुलजार अन्दर,
तेरे बागदी अम्बड़िए ! कलीहां मैं ।
मेरियां होइयां ग्राहियां अज भारियाँ ने,
चौका छड़ माता ! तेरा चलीहां मैं ।
विछुड़ के अपने पैके परिवार बिचों,
घर सोहरांदे अज्ज चली हां मैं ।
अपनी बेटी इस चांद नुं कुछ कहले,
हथ सीस तों मेरे रख माता ।
जदों अपने बाबल दी याद आवे,
मेरी डुल-डुल पैंदी है अख माता !

० माता का उत्तर—

मेरी बेटिएं ! सालु लपेटिएनी ! जाइए !
माता दा जांदा कोई बस नाहीं ।

मेरे दिल दी अन्दर है तू जाइए !
गल जिगर दी सकती मैं दस नाहीं।
पत्थर जिगरा है बेटिए !
मा-प्यादा, जांदी कदे जुदाई दी चस नाहीं।
बच्ची एस जुदाइयों न मां कोई
बची एस जुदाइयों कोई सस नाहीं।
धीयां राजे-रसालू न रख सके,
भलां की है बच्चिए ! ओकात साडी।
धीयां शाह ते खान झुका दित्ते,
गर्दन झुकी है दिन ते रात साडी।
धीयाँ तोरिया गुरु अवतार पीरां,
ए नवीं नई कोई बारात साडी।
पीले धीए ! असां भी हत्थ कित्ते,
होर की है दित्त ते दात साडी।
बच्ची ! बड़ा गृहस्थदा ए पंथ,
टेढ़ा सोहणां फूल भी ऐते खार भी ऐ।
सारी ऊमर दी लंबी ए है बाजी,
जीते जीत भी ऐ हारे हार भी ऐ।
मिट्ठे-कोडे ने दोनों स्वाद रानी !
किते प्यार ते किते तकरार भी ऐ।
दोनों जियां दे सिरां ते एक गठड़ी,
बड़ी होली भी ऐते बहोता भार भी ए॥

—पंजाबी कविता

२ कन्या का बिगाड़—

० छाज छितरी ने दीकरी इतरी।
० हलवी खीचड़ी ने महलवी दीकरी।

—गुजराती कहावतें

३८ पुत्री के योग्य-अयोग्य वर

१ योग्य वर—

कुलं च शीलं च सनाथता च, विद्या च वित्तं च वपुर्वयश्च ।
एतान् गुणान् सप्त विचिन्त्य देया, कन्या बुधैः शेषमचिन्तनीयम् ।।

—**पंचतन्त्र** ३।२०५

कुल, शील-स्वभाव, ठकुराई, विद्या, धन, शरीर की नीरोगता और आयु—वर में ये सात गुण देखकर कन्या देनी चाहिए । इसके उपरान्त सुख-दुःख होना कन्या के भाग्य की बात है । लेकिन माता-पिता के चिन्तन का विषय नहीं है ।

२ अयोग्य वर—

मूर्ख-निर्धन - दूरस्थ - शूर - मोक्षाभिलाषिणाम् ।
त्रिगुणाधिकवर्षाणां, न देया, कन्यका बुधैः ।।१।।
अत्यद्भुतधनाढ्याना - मतिशीतातिरोषिणाम् ।
विकलाङ्ग-सरोगाणां, न देया कन्यका बुधैः ।।२।।
कुल-जाति विहीनानां, पितृ-मातृवियोगिनाम् ।
गेहिनी-पुत्रयुक्तानां, न देया कन्यका बुधैः ।।३।।

—**प्राचीनसंग्रह से**

मूर्ख, निर्धन, दूरदेशवासी, शूरवीर- मोक्ष का इच्छुक, कन्या से तिगुणे वर्षों से अधिक आयु वाला, अत्यधिक धनाढ्य, अनिशीतल-ढीला, अति क्रोधी, विकल-अपूर्ण-अंगवाला, रोगी, कुल-जाति हीन, माता-पिता विहीन गृहिणी एवं पुत्रयुक्त—पूर्वोक्त व्यक्तियों को कन्या नहीं देनी चाहिए ।

३ कवारी कन्या नै वर घणां ।

—**राजस्थानी कहावत**

जामाता-जमाई

१ विद्या-शौर्य-धनाश्रयो गुणनिधिः ख्यातो युवा सुन्दरः,
सच्चारः सुकुलोद्भवो मधुरवाग् दाता दयासागरः ।
भोगी भूरिकुटुम्बवान् स्थिरमतिः पापार्तिहीनो बली ।
जामाता परिवर्णितः कविवरैरेवंविधः सत्तमः ।।

विद्वान, बहादुर, धनवान, गुणी, प्रसिद्ध, युवक, सुन्दर, सदाचारी, कुलीन, मिष्टभाषी, दातार, दयालु, भोगी, बहुपरिवारी, स्थिरबुद्धि, धर्मात्मा, बलवान—इन सब गुणोंवाला दामाद श्रेष्ठतम कहलाता है।

२ दाता पञ्चदशो रत्नः, पुत्रस्तु सप्तमो रसः ।
नादस्तुपञ्चमो वेदो, जामाता दशमो ग्रहः ।।

दाता पन्द्रहवाँ रत्न है, पुत्र सातवां रस है । नाद पाँचवां वेद है और जामाता दसवां ग्रह है।

३ सदा वक्रः सदा क्रूरः, सदा पूजामपेक्षते ।
कन्याराशिस्थितो नित्यं, जामाता दशमो ग्रहः ।।

—सुभाषितरत्नभाण्डागार पृष्ठ ३८०

जो सदा टेढ़ा एवं क्रूर रहता है तथा सदा पूजा की अपेक्षा रखता है, वह दामाद कन्या राशि पर रहा हुआ दसवां ग्रह समझना चाहिए।

४ जामाता जठरं जाया, जातवेदा जलाशयाः ।
पूरिता नैव पूर्यन्ते, जकाराः पञ्च दुर्भराः ।

—सुभाषितरत्नभाण्डागार पृष्ठ १६३

जमाई-जठर (पेट) जाया (बेटी), जातवेद (अग्नि) और जलाशय—ये पांच जकार भरने पर भी नहीं भरे जाते ।

५ जाट, जमाई, भाणजा, रेबारी सोनार ।
इतरा हुवै न आपणां, कर देखो उपकार।

—राजस्थानी दोहा

ससुराल

१ असारे खलु संसारे, सारं श्वशुरमन्दिरम् ।
हरो हिमालये शेते, हरिः शेते महोदधौ ।।

—सुभाषितरत्नभाण्डागार पृष्ठ ३८०

इस असार संसार में ससुर का घर ही सार है। इसीलिए हर (महादेव) हिमालय में और हरि (विष्णु) समुद्र में शयन करते हैं। (महादेव का ससुराल हिमालय है और विष्णु का ससुराल समुद्र है।)

२ श्वसुरकुलनिवासः स्वर्गतुल्यो नराणां,
भवति यदि विवेकी पञ्च वा षड् दिनानि ।
दधि-मधु-घृतलोभाद् मासमेकं च तिष्ठेत्,
स भवति खरतुल्यो मानवो मानहीनः ।।

ससुराल में निवास करना स्वर्ग तुल्य है। किन्तु विवेकी के लिए पांच-छः दिन तक ही है। दधि, मधु एवं घृत के लोभ से यदि कोई एक महीना रह जाय, तो वह मनुष्य गदहे के समान मानहीन हो जाता है।

३ सासरो सुख वासरो, चार दिनां रो आसरो ।
एक दो दिन तो और कहो, नाक कटाकर सदा ही रहो।

दामाद ससुराल गया एवं मीठे मालों पर ललचा कर दिवाल पर लिख डाला—"सासरो सुख वासरो।"

ज्योंही उसके साले ने देखा, तो उसने उसी के नीचे एक पद्य और जोड़ दिया—"चार दिनां रो आसरो।"

फिर बहनोई ने लिखा—"एक दो दिन तो और कहो।"

साले का जबाव था—"नाक कटा कर सदा ही रहो।"

४ सासरो सुख वासरो, चार दिनां रो आसरो।
रहस्यां मास-छ सास, देस्यां दांती कटास्यां घास ।

इसकी कहानी भी ऊपर के समान ही है।

५ सासरो सुख वासरो, दोय दिनां रो आसरो।
तीजै दिन रैवै तो खावै खांसड़ो ।।

—राजस्थानी कहावत

१ अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः ।

—ऋग्वेद १०।८५।४४

हे वधू ! तुम्हारे नेत्र सदा स्नेहशील निर्दोष हों। तुम पति के लिए मंगलमयी एवं पशुओं के लिए कल्याणकारिणी बनो। तुम्हारा मन सदा सुन्दर रहे, और तुम्हारा सौंदर्य अथवा तेजस्विता भी सदा शुभ रहे।

२ साम्राज्ञी श्वशुरे भव ! साम्राज्ञी श्वश्वा भव !
ननान्दरि साम्राज्ञी भव ! साम्राज्ञी अधिदेवृषु ॥

—ऋग्वेद १०।८५।४६

हे बहू ! तुम सास, ससुर, ननद और देवरों की साम्राज्ञी (महारानी) बनो अर्थात् सब परिवार के ऊपर सेवाओं और प्रेम के माध्यम से प्रभुत्व प्राप्त करो।

३ बहू के गुण—

भक्तिः प्रेयसि संश्रितेषु करुणाश्वश्रूषु नम्रं शिरः,
प्रीतिर्यातृषु गौरवं गुरुजने क्षान्तिः कृतागस्यपि।
अम्लाना कुलयोषितान्नतविधिः सोयं विधेयः पुन-
र्मद्भर्तुर्दयिता इति प्रियसखीबुद्धिः सपत्नीष्वपि।

—चंदचरित्र पृष्ठ १०१

प्रियजनों के प्रति भक्ति, आश्रितों के प्रति दयाभाव, सासुओं के प्रति नम्रमस्तक, देवरों के प्रति प्रेम, गुरुजनों के प्रति गौरव, अपराधी के प्रति क्षमा, प्रफुल्ल हृदय रहना, कुलाङ्गना के योग्य व्रत करते रहना, तथा सपत्नियों के प्रति भी मेरे पति की प्रिया है अतः मेरी प्यारी सखी है—ऐसी भावना रखना बहू में—ये गुण होने चाहिए।

४ **बहू का कष्टमय जीवन—**

शय्योत्पाटन - गेहमार्जन-पयः - पावित्र्य-चुल्लीक्रिया,
स्थालीक्षालन - धान्यपेषणभिदा गोदोह - तन्मन्थने ।
डिम्भानां परिवेषणादि च तथा पात्रादिशौचक्रिया,
श्वश्रू-भर्तृ - ननान्दृ - देवृविनयः कष्टं वधूर्जीवति ।

शय्या उठाना, घर को साफ करना, पानी छानना, चूल्हे का काम करना, थालियों को धोना, अनाज पीसना, गाय दुहना बालकों को भोजनादि करवाना तथा वर्तनों को साफ करना, सास पति, ननद, अवं देवर का समुचित विनय करना — ऐसे बहू का जीवन बहुत कष्टमय है ।

५ आई बहु आयो काम, गई बहु गयो काम ।

—**राजस्थानी कहावत**

६ वैसतो राजा ने आवती बहू नो भार पड्यो ते पड्यो ।

—**गुजराती कहावत**

७ **बुरी बहू—**

(क) घर से वैर अपर से नाता, ऐसी बहू मत देहु विधाता !

—**हिन्दी पद्य**

(ख) सासू-सं वैर पड़ोसण सं नातो । —**राजस्थानी कहावत**

८ **सास की बकवास—**

बहू-ए-बहू ! घर थारो हीं है, ढक्योड़ो ना उघाड़ी ।

—**राजस्थानी कहावत**

९ **सास-बहू का व्यवहार—**

गंगानगर जाते समय एक विश्नोइयों के गांव में ठहरना हुआ । संध्या-प्रतिक्रमण के बाद मैं मौन युक्त माला फेर रहा था । घर की स्वामिनी आकर पूछने लगी—बड़े महाराज कहां हैं ? संतों ने कहा—माला फेर रहे हैं । थोड़ी देर बाद उसकी बहू ने भी यही प्रश्न किया । ज्यों ही मौन संपन्न हुआ, सास ने आकर कहा—महाराज ! मेरी बहू को कुछ ज्ञान दो ! वह गुड़ की चोरी करती है, जब भी कोठा खुला रह जाता है,

सेर-तीन पाव गुड़ निकाल ही लेती है। शिकायत करके सास गई और इधर से बहू भी आ पहुंची। मैंने पूछा—क्या तू गुड़ चोरती है ? उसने कहा—हां ! चोरी न करूं तो करूं भी क्या ? सास खुद दिन भर गुड़ खाती रहती है और मुझे एक ढेली भी नहीं देती।

—धनमुनि

१० बेटे-बहू को वश करने की विधि—

१ बहू के पीहर की निंदा न करना।

२ सोई हुई बहू को न जगाना।

३ बेटे-बहू की गल्ती होने पर सबके सामने न कहना।

४ बेटा आ जाने पर बहू को न रोकना।

५ बिना मांगे पैसे दे देना।

६ बहू की शिकायत बेटी के मुख से सास को कभी न सुनना।

—विशनदयाल गोयल

४२ विनीत बहू की सेवा और अमर सोहाग

१ पौष-माघ का महीना था, सवेरे का वक्त था और जबरदस्त सर्दी पड़ रही थी। एक अस्सी वर्ष की बुढ़िया छोटी सी खटिया पर लेट रही थी और इधर उसकी बहू आंगन में झाड़ू लगा रही थी। सर्दी में ठिठुरती हुई बुढ़िया ने कहा—

बुढ़ली सासड़ यूं कहै, म्हारी मचली तावड़िये घाल।
बवड़िया शरवणती, आ तो करै सासूजी री सेव। बवड़िया ॥
छोड्यो आंगण बुहारणों, गई मचली तावडिये घाल। बव० ॥१॥

विनीत बहू ने बुहारी छोड़ी और दौड़ कर सास की खटिया धूप में रख गई एवं फिर गोबर थापने लगी— इतने में बुढ़िया ने आवाज दी—

बुढ़ली सासड़ यूं कहै, मनै सद पाणीड़ो पिलाय। बवड़िया।
छोड्यो गोबर थापणो, गई सद पाणीड़ो पिलाय। बवड़िया ॥२॥

गोबर थापना छोड़ कर बहू आई और सद (थौड़ा गरम करके) पानी पिला गई। गोबर थाप कर ज्योंही बच्चों के लिए रोटियाँ बनाने लगी। बुढ़िया ने कहा—

बुढली सासड़ यूं कहे, मनै द्यो गुड़ियाणी रांध।
तवो उतार्यो बीच में, झट दी गुड़ियाणी रांध ॥ बवड़िया ॥३॥

बहू ने गुड़ राब बनाकर सास को खिलाई। फिर रोटी खिलाकर बच्चों को स्कूल भेजा एवं छोटे बच्चे को स्तन पिलाने लगी। इतने में सास का हुक्म हुआ—

बुढली सासड़ यूं कहै, म्हारा पगल्या द्योनी दबाय।
छोड्यो गीगा ने रोवतो, बहू पगल्या गई रे दबाय ।। बवड़िया ।।
तब सासू हरखी घणी, कहै अमर होज्यो थांरो रे सुहाग ।। बव ४।।

स्तनपान करते हुए बच्चे को रोता छोड़ कर बहू दौड़ी और सास का (पैर, हाथ एवं कमर आदि) सारा शरीर दबाकर उसे सन्तुष्ट किया तब प्रसन्न होकर सास ने अमर सुहाग होने का आशीर्वाद दिया—

वस्तुतः पुराने जमाने में सासुओं की इस प्रकार सेवा करके बहुएँ उनसे अमर सोहाग लेती थीं।

—**नवनीत से**

४३ भ्राता-भाई

१ देशे-देशे कलत्राणि, देशे-देशे च बान्धवाः ।
तं देशं नैव पश्यामि, यत्र भ्राता सहोदरः ।।

—वाल्मीकिरामायण ६।१०१।१४

भार्या एवं बान्धव-स्वजन देश-देश में मिल सकते हैं किंतु वह देश नजर नहीं आता, जहां सगा भाई मिल सकता हो ।

२ एकं प्रसूयते माता, द्वितीयं वाक् प्रसूयते ।
वाग्जातमधिकं प्रोचुः, सोदर्यादपि बान्धवात् ।।

—पञ्चतन्त्र ४।६

एक भाई को माता उत्पन्न करती है और दूसरे को वाणी पैदा करती है । सहोदर मा जाए भाई से भी वाणी की मधुरता से बना हुआ भाई विशेष है ।

३ ज्येष्ठभ्राता पितुः समः ।

—सुभाषितरत्नखंडमंजूषा

बड़ा भाई पिता के समान होता है ।

० नास्ति बन्धुसमं बलम् ।

भाई के समान दूसरी कोई शक्ति नहीं है ।

० दिक्शून्या चेदबान्धवा ।

यदि भाई-बंधु नहीं है तो समझो कि दिशा ही शून्य है ।

४ बांधव होय अबोलणा, तोये पोता नी बांह ।
० सोनुं ने पीतल प्रीतड़ी, भीड़ पड़े त्यारे भाई ।

—गुजराती पद्य

५ हाड़ हंसे ने लोहीतपे, लड़्या तो ये एकलो ही
० डांगेमार्‌या पाणी जुदा न पड़े,

— गुजराती कहावतें

६ शिरफोड़ लड़ना, जांघ जोड़ खाना।

—हिन्दी कहावत

७ **भाइयों का प्रेम—**

भाइयों में परस्पर बहुत प्रेम था लेकिन उनकी स्त्रियों के आपस में नहीं बनती थी अत: दोनों भाई अलग हो गए। बड़े भाई ने पुत्र विवाह के प्रसंग पर प्रीतिभोजन किया। उसकी स्त्री का आग्रह था कि तुम्हारे भाई को न.बुलाया जाय। बहुत कुछ कहा गया पर उसने अपनी जिद्द न छोड़ी और मरने तक को तैयार हो गई। आखिर भाई ने भाई को बुलावा नहीं भेजा किंतु उसे सारा रहस्य समझा दिया। भाई बिना बुलाये ही भोजन करने आ गया। स्त्री ने काफी झगड़ा किया और कहा कि इसे घी न परोसा जाय। चावल और मूंग परोसे गये। घी का वर्तन बड़े भाई ने अपने हाथ में लिया एवं आखड़ कर ऐसा पड़ा कि सारा घी भाई की थाली में ढुल गया। दृश्य देखकर एक अनुभवी ने कहा—

भाई रै मन भाई भायो, बिना बुलाया जीमण आयो।
आखड़िया जिसा पड़िया नाहीं, घी ढुल्यो तो मूंगां माहीं।

—श्री कालूगणी से श्रुत

८ **बहन का विनीत भाई**—राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद को बड़ी बहन भोला समझती थी। एक बार एक विदेशी उनसे मिलने आया, और जोर से बोलता सुनकर बहन ने घण्टी बजाई। राष्ट्रपति अन्दर गए। बहन ने कहा—ध्यान रखना, ठग न ले। राष्ट्रपति ने उत्तर दिया—ध्यान रखूंगा। थोड़ी देर बाद पुन: घण्टी बजाई। भाई उठकर आए और पूर्ववत् "ध्यान रखूंगा" ऐसे कहा। (ऐसी घटना उनके जीवन में कई बार घटित हुई, किन्तु उन्होंने बहन का अविनय कभी नहीं किया।)

परिशिष्ट

वक्तृत्वकला के बीज

भाग ८ और ९ में

प्रयुक्त ग्रंथ एवं व्यक्ति नाम सूची

ग्रन्थ सूची

१ अंगुत्तरनिकाय
२ अणुव्रत (मासिक)
३ अत्रिसंहिता
४ अत्रिस्मृति
५ अथर्ववेद
६ अध्यात्म रामायण
७ अनुयोगद्वारसूत्र
८ अभिज्ञान शाकुन्तल
० (शाकुंतल)
६ अभिधानचिन्तामणी
० (हैमकोष)
१० अमर उजाला (दैनिक)
११ अर्चना और आलोक
१२ आंकलैंड (दैनिक)
१३ आचारांग सूत्र
१४ आत्मविकास
१५ आत्मानुशासन
१६ आपस्तम्ब-धर्मसूत्र
१७ आवश्यकसूत्र
१८ इतिहासतिमिरनाशक
१६ इतिहाससमुच्चय
२० इवन्बतूता लिखित—
० भारतयात्रा विषयक पुस्तक
२१ उत्तराध्ययन टीका
२२ उत्तराध्ययन निर्युक्ति
२३ उत्तराध्ययनसूत्र
२४ उपदेश सुमनमाला
२५ उर्दू शेर
२६ ऋग्वेद
२७ ऋषिभाषित
२८ ऐतरेयब्राह्मण
२६ ओघनिर्युक्ति
३० औपपातिकसूत्र
३१ कथासरित्-सागर
३२ कमलनाहटा का संग्रह
३३ कल्याण-गोअंक
३४ कल्याण-सत्कथाअंक
३५ कविताकौमुदी
३६ कहावतें—
(क) अंग्रेजी कहावत
(ख) इटालियन ,,
(ग) ईरानी ,,
(घ) उर्दू ,,
(ङ) गुजराती कहावत
(च) चीनी ,,
(छ) जर्मनी ,,
(ज) जापानी
(झ) पंजाबी ,,
(ञ) पारसी ,,
(ट) बंगला ,,
(ठ) मराठी ,,
(ड) राजस्थानी ,,
(ढ) संस्कृत ,,
(ण) हिन्दी ,,
३७ किसनबावनी
३८ कुरान शरीफ

३९ कुमारसंभव
४० कौटलीय-अर्थशास्त्र
४१ गरुड़पुराण
४२ गीता (श्रीमद्भगवद्गीता)
४३ गीताञ्जलि
४४ गुजराती पद्य
४५ गुलिस्तां
४६ गोपथब्राह्मण
४७ गोतमकुलक
४८ चन्दचरित्र (संस्कृत)
४९ चन्द राजानो रास
५० चरकसंहिता
५१ चाणक्यनीति
५२ चाणक्यसूत्र
५३ चीनी सुभाषित
५४ चेतना (मासिक)
५५ छान्दोग्य-उपनिषद्
५६ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्र
५७ जतीरासा
५८ जातक
५९ जापानी लोककथा
६० जीवनलक्ष्य
६१ जैनत्व की झांकी
६२ जैनभारती (मासिक)
६३ जैनसिद्धान्त बोलसंग्रह
६४ ज्ञानसार
६५ डेली मिरर (दैनिक)
६६ तत्त्वामृत
६७ ताओ उपनिषद (ताओ तेह किंग)
६८ तालमुद
६९ तैत्तिरीय-आरण्यक
७० तैत्तिरीय-उपनिषद्
७१ तैत्तिरीय-ब्राह्मण
७२ त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरित्र
७३ दक्षस्मृति
७४ दशकुमारचरित्र
७५ दशवैकालिकसूत्र
७६ दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र
७७ दोहा-द्विशती
७८ दोहा-संदोह
७९ दोहे
क—राजस्थानी दोहे
ख—हिन्दी दोहे
८० धम्मपद
८१ धर्म के नाम पर
८२ धर्मयुग
८३ धर्मरत्नप्रकरण
८४ धर्मसंग्रह
८५ नवभारतटाइम्स (दैनिक)
८६ नयायुग-नयादर्शन
८७ नवनीत (मासिक)
८८ निरुक्त
८९ निशीथचूर्णि
९० नीतिवाक्यामृत
९१ नैतिकपाठमाला
९२ नैतिकविज्ञान

९३ नैषध (नैषधीयचरित्र)
९४ न्यायशास्त्र
९५ पंचतन्त्र
९६ पंचास्तिकाय
९७ पंजाबी कविता
९८ पंजाबी पद्य
९९ पद्मपुराण
१०० पराशरसंहिता
१०१ पातंजलयोगदर्शन
१०२ पुरानी बाइबिल (नीतिवचन)
१०३ प्रज्ञापना सूत्र
१०४ प्रशमरति
१०५ प्राचीन चरित्रकोष
१०६ प्राचीन-संग्रह
१०७ बाइबिल
१०८ बालभारती
१०९ बृहत्कल्प-भाष्य
११० बोधिचर्यावतार
१११ ब्रह्मवैवर्तपुराण
११२ ब्रह्मानन्दगीता
११३ भगवतीसूत्र
११४ भर्तृहरि-वैराग्यशतक
११५ भर्तृहरि-नीतिशतक
११६ भर्तृहरि-शृंगारशतक
११७ भविष्यपुराण
११८ भारतज्ञानकोष
११९ भारतसरकार द्वारा प्रकाशित-पत्रिका
१२० भाषाश्लोकसागर
१२१ भिक्षुन्यायकर्णिका
१२२ मनुस्मृति
१२३ महानिशीथसूत्र
१२४ महापुराण
१२५ महाभारत
१२६ मानो न मानो !
१२७ मार्कण्डेयपुराण
१२८ मुण्डकोपनिषद्
१२९ मुतालुल सादीन
१३० मुद्राराक्षस-नाटक
१३१ मृच्छकटिक
१३२ मेघदूत
१३३ मोरली दी आरमामेंट
१३४ मौनवाणी
१३५ यजुर्वेद
१३६ यज्ञरहस्य
१३७ याज्ञवल्क्यस्मृति
१३८ योगवाशिष्ठ
१३९ योगशास्त्र
१४० योगशिखोपनिषद्
१४१ योगसूत्र
१४२ रघुवंश
१४३ रश्मिमाला
१४४ रामचरितमानस
१४५ रामजशरसायण
१४६ राष्ट्रदूत (दैनिक)
१४७ रूपक

(क) गुजराती रूपक
(ख) राजस्थानी रूपक
१४८ लेटिन सूत्र
१४९ लोकोक्ति
० (क) चैक-लोकोक्ति
० (ख) स्पेनिश-लोकोक्ति
१५० वाल्मीकिरामायण
१५१ विक्रमचरित्र
१५२ विक्रमोर्वशीयनाटिका
१५३ विज्ञान के नये आविष्कार
१५४ विदुरनीति
१५५ विपाकसूत्र
१५६ विवेकचूड़ामणि
१५७ विवेकविलास
१५८ विशुद्धिमग्गो
१५९ विश्वकोष
१६० विश्वदर्पण
१६१ विश्वामित्र (दैनिक)
१६२ विश्वामित्रस्मृति
१६३ विष्णुपुराण
१६४ वीर अर्जुन (दैनिक)
१६५ वेदान्त (वेदान्तदर्शन)
१६६ वैदिकविचारविमर्शन
१६७ शंकर-प्रश्नोत्तरी
१६८ शकुनावली
१६९ शतपथ ब्राह्मण
१७० शाँतसुधारस
१७१ शास्त्रवार्तासमुच्चय
१७२ शिवपुराण
१७३ शिशुपालवध
१७४ शुक्रनीति
१७५ शुक्लयजुर्वेद
१७६ श्राद्धपितृमीमाँसा
१७७ श्राद्धविधि
१७८ श्रावकधर्म प्रकाश
१७९ श्रीमद्भागवत (भागवत)
१८० श्रीविलक्षण अवधूत
० स्वरोदय
१८१ श्रीविश्वविजयपंचांग
१८२ श्रुति
१८३ श्वेताश्वतरोपनिषद्
१८४ संक्षिप्त जैन महाभारत
१८५ संजीवनी बूंटी
१८६ समर्थांचे सामर्थ्य
१८७ समयसार
१८८ सरलमनोविज्ञान
१८९ सरिता (पाक्षिक)
१९० सांख्यकारिका
१९१ सांख्यदर्शन
१९२ साकेत
१९३ सामान्य ज्ञान एवं व्यक्ति परिचय
१९४ सुभाषितरत्नखंडमंजूषा
१९५ सुभाषितरत्नभाण्डागार
१९६ सुभाषितसंग्रह
१९७ सूत्रकृतांग सूत्र
१९८ सोरठा-संग्रह

१९९ सेक्श्वल लाइफ डरनिङ्
० दि वर्ल्डवार
२०० स्कन्दपुराण
२०१ स्थानांग-टीका
२०२ स्थानांग-सूत्र
२०३ स्याद्वादमंजरी
२०४ स्वप्नवासवदत्ता
२०५ हजरत बुखारी और मुस्लिम
२०६ हरिजनसेवक
२०७ हरिभद्रीयाष्टक-टीका
२०८ हितोपदेश
२०९ हिन्दीमिलाप (दैनिक)
२१० हिन्दुस्तान (दैनिक)
२११ हिन्दुस्तान (साप्ताहिक)
२१२ होडाचक्र

व्यक्ति नाम सूची

१ अगस्त्य मुनि
२ अरविन्दघोष
३ अरस्तु (जरथुस्त्र)
४ अर्बूथ नॉट (जान अर्बूथ नॉट)
५ अल्काट (एल्काट)
६ आदम स्मिथ
७ आइंस्टिन
८ आस्टिन मैले
९ ओलवर गोल्डस्मिथ
० (गोल्डस्मिथ)
१० ओविद
११ इ० एच० चैंपिन
१२ इन्दरचन्द नवलखा
१३ इपिकटेट्स
१४ इमर्सन
१५ इशा अल्लाखाँ
१६ ईसा
१७ उईदा
१८ उद्यमवादी
१९ उमास्वाति
२० ऊ थांट
२१ एंजिल्स
२२ एडिसन
२३ एनन
२४ एफ. एल. कीमैन्स
२५ ए. मिली
२६ एरियन यूनानी
२७ कन्फ्यूसियस (कांगफ्यूत्सी)
२८ कबीर
२९ कर्मवादी
३० कवि उदयराज
३१ कवि ऊमरदान
३२ कवि ऋद्धुलाल
३३ कवि कालीदास
३४ कवि कृष्णदास
३५ कवि केशव
३६ कवि क्षेमेन्द्र
३७ कवि गिरधर
३८ कवि जाल
३९ कवि जुगतदान
४० कवि दीप
४१ कवि देवीदास
४२ कवि ब्रह्म
४३ कवि भड्डली
४४ कवि भूधरदास
४५ कवि मान
४६ कवि मोहन
४७ कवि रणजीत
४८ कवि रतन
४९ कविराज हरनामदास
५० कवि राम
५१ कवि वृंद

५२ कवि वेताल
५३ कवि संग्रामदास
५४ कवि सहृदेव
५५ कवि सुन्दरदास
५६ कवि सूर्यमल
५७ कवि हंस
५८ कारनट
५९ कार्डिनल
६० कार्लाइल
६१ कालवादी
६२ किंग्सले
६३ कूपर
६४ कैलाश जैन
६५ कोल्टन
६६ खलील जिब्रान
६७ गंगादानजी चारण
६८ गांधी
६९ गिलपिल
७० गुरु वशिष्ठ
७१ गेटे
७२ ग्लेडस्टन
७३ चाणक्य (कौटिल्य)
७४ चिलो
७५ चीकागो के डा. सेन
७६ चेम्फर्ड
७७ चेस्टर फिल्ड
७८ जयाचार्य
७९ जवाहरलाल नेहरू
८० जहोरस्किन (रस्किन)
८१ जान एस. सी. एबट
८२ जानब्राईट
८३ जानलोक
८४ जॉन स्टुआर्ट मिल
८५ जार्ज इलियट
८६ जार्ज हावर्ट
८७ जे. बी. हालैंड
८८ जे. रान्ड
८९ टी० एल० वास्वानी
९० टेलीटस
९१ टैगोर (रवीन्द्रनाथ टैगोर)
९२ डान्टन
९३ डॉ० एल्फ्रेड
९४ डॉ० करेले
९५ डॉ० जे. एच. केलोंग
९६ डा० डौग्लास मेकडोनल्ड
९७ डा० फोर्ड एम. डी.
९८ डा० रेन्टोल
९९ डा० लुकास शेम्पोनीअर
१०० डा० विलियमलेम्ब
१०१ डा० विलियम बोस
१०२ डा० बोन नुरडन
१०३ डा० सर जेम्स सियर—एम० डी० एफ० आर० ओ० पी०
१०४ डा० स्पैंस
१०५ डिजराइली
१०६ डैनियल विक्टर
१०७ तिरुवल्लुवर
१०८ तोमर
१०९ थामसपेन
११० थामसफूलर

१११ थोरो
११२ दबार
११३ दादा धर्माधिकारी
११४ देवीरानी विदुला
११५ धनमुनि
११६ नलिन
११७ नानक (गुरुनानक)
११८ नियतिवादी
११९ नेपोलियन बोनापार्ट
१२० पंत (सुमित्रानन्दनपंत)
१२१ पास्कल
१२२ पीथागोरस
१२३ पैरेक्लीज
१२४ प्रेमचंद
१२५ प्रो० किथ
१२६ प्लूटार्क
१२७ प्लेटन
१२८ फिलिप्स ब्रुक्स
१२९ फिल्डिंग
१३० फेबर
१३१ फ्रैंच सेना के सर्जन जनरल
१३२ फैंकलिन
१३३ फोय
१३४ बर्क
१३५ बाउफ्लर्स
१३६ बीडेल
१३७ बुडरो-विल्सन (विल्सन)
१३८ बुल्लेशाह
१३९ बुल्वर लिटन
० (लिटन)
१४० बेकन
१४१ बेली
१४२ बैण्डोल फिलिप्स
१४३ बो० बी०
१४४ भगवान् व्यास (वेदव्यास)
१४५ भावदेवसूरि
१४६ महर्षि मरीचि
१४७ महात्मा तिलक
१४८ महात्मा बुद्ध
१४९ माण्टेस्की
१५० मि० आर्थर एण्ड बुड
१५१ मि० जे० एच० ओलीवर
१५२ मि० थोमस जे० रोगन
१५३ मिनेन्दर
१५४ मिल्टन
१५५ मुनि बच्छराज
१५६ मैथिलीशरण गुप्त (राष्ट्रकवि)
१५७ मैनशियस
१५८ रामकृष्ण परमहंस
० (रामकृष्ण)
१५९ रामतीर्थ
१६० रामरतन डागा
१६१ रो० बी०
१६२ रोमसिन
१६३ रोमन कवि होमर
० (होमर)
१६४ रोशफूको
१६५ लाओत्से
१६६ लांग फेलो
१६७ लाफान्टेन

१६८ लाम्बेयर
१६९ लार्ड मेकाले
१७० लिंकन
१७१ लेनिन
१७२ वरले
१७३ वल्लभदेव
१७४ वायरटन
१७५ वायरन
१७६ विक्टर ह्यूगो
१७७ विनोबा भावे
१७८ विलियम जेम्स
१७९ विलियमपिट
१८० विवेकानन्द
१८१ विशनदयाल गोयल
१८२ विशप कम्बरलैंड
१८३ वोरूला
१८४ वोस्ता
१८५ व्यास
१८६ शिकागो के शरीरशास्त्री
१८७ शिलर
१८८ शीलनाथ
१८९ शुक्राचार्य
१९० शुभचन्द्राचार्य
१९१ शेक्सपीयर
१९२ श्री कालुगणी
१९३ संत आगस्तिन
१९४ सर टामस ए क्विनास
१९५ सर टी० लोडर ब्रण्टन
१९६ सरदार पटेल
१९७ सी० एन० पार्कहिटर्स
१९८ सुकरात
१९९ सूरदास
२०० सेनेका
२०१ स्पिनोजा
२०२ स्वेट मार्टन
२०३ हातिम-हासम
२०४ हाली ब्रटेन
२०५ हिटलर
२०६ हेलन केलर
२०७ हैजलिट
२०८ हैडमास्टर रामचन्द्र
२०९ हैनरी एडम
२१० हैरी इमर्सन फासडिक
२११ हैली बर्टन

वक्तृत्व कला के बीज

कृति और कृतिकार

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ युग प्रधान आचार्य श्री तुलसी के नेतृत्व में आज प्रगति-शिखर पर पहुँच रहा है। मुनि श्री धनराज जी 'प्रथम' (श्री धनमुनि) इस धर्म-संघ के बहुश्रुत विद्वान, सरसकवि, लेखक कुशल संग्रहकार, मधुर-प्रवक्ता और सुयोग्य शिक्षक संत हैं। आप संघ के सर्व-प्रथम शतावधानी हैं। वि०सं० २००४ माघ कृष्णा १४ रविवार को बम्बई में सर्व-प्रथम आपने शतावधान का प्रयोग कर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया। संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी तथा उर्दू आदि भाषाओं में आपने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया है।

प्रस्तुत कृति वक्तृत्वकला के बीज आपकी एक श्रमसाध्य अद्वितीय कृति है। ... इतना ... किसी ... नहीं हुआ ... कोश

जन्म- ... याणा)

दीक्षा-वि.सं. ... (राज.)

कृतियां - लगभग ६०

आवरण पृष्ठ के मुद्रक : शैल प्रिन्टर्स, आगरा-२